॥ श्रीहरिः॥

भगवन्नाम महिमा एवं परम सेवा का महत्त्व

(ब्रह्मलीन परमश्रद्धेय सेठजी श्रीजयदयालजी गोयन्दकाके पुराने प्रवचनोंका संग्रह)

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

प्रार्थना

थोड़ी-थोड़ी देरमें कहते रहें-
हे नाथ ! हे मेरे नाथ !!
मैं आपको भूलूँ नहीं।
मैं आपका हूँ, आप मेरे हैं।

संवत् २०६८ प्रथम संस्करण – 18,000
संवत् २०६८ द्वितीय संस्करण – 45,000
मूल्य–10 रु०

॥ श्रीहरिः ॥

पुस्तक प्राप्ति स्थान

1. **श्री मातृशक्ति तपस्विनी गौ मन्दिर**, पोस्ट-**रेण**, तहसील-**मेड़ता सिटी**, जिला-**नागौर** (राजस्थान), मोबाईल नं. 093521-83860
2. **हरि ॐ तायल**, आचार्य कृपलानी रोड, आदर्श नगर, **दिल्ली**- 110033 मोबाईल नं. 09811393537, 099580-18191
3. **गीता प्रेस सत्साहित्य प्रचार समिति**, 35, कपिल विहार, **दिल्ली**-110034 मोबाईल नं. 093125-01777
4. **श्रीराधामाधाव सदन**, ए-2/105, मिलन विहार, 72, आई.पी. एक्सटेंशन, **नई दिल्ली**-110092, मोबाईल नं. 098115-77371
5. **धार्मिक साहित्य सदन**, बुलियन बिल्डिंग, हल्दियोंका रास्ता, जौहरी बाजार पोस्ट- **जयपुर**- 202003 (राज.), फोन नं. 0141-2570602
6. **अग्रवाल एण्ड कम्पनी**, 1011, अग्रवाल मार्केट, मिश्र राजाजी का रास्ता पोस्ट-**जयपुर** (राज.), मोबाईल नं. 98291-32052
7. **श्रीगीता सत्साहित्य विभाग**, सी/18-19, इन्दिरा मार्किट, घण्टाघर, **जोधपुर**, राजस्थान, मोबाईल नं. 094137-66283, 093523-79647
8. **सत्यनारायण तिवाड़ी**, सदर बाजार, पोस्ट-**नोखा**, जिला-**बीकानेर** (राज.) मोबाईल नं. 098285-47133, 098286-04571
9. **राज कुमार शर्मा**, गौ सेवा प्रचार समिति, गली नं.-18, नई आबादी, **हनुमानगढ़ टाऊन**, राजस्थान, मोबाईल नं. 099833-51401
10. **जालान कॉटेज इण्डस्ट्रीज**, कपड़ेकी दुकान, गंगाघाट के पास, **स्वर्गाश्रम**- वाया- **ऋषिकेश** (उत्तराचंल), फोन नं. 0135-2432794
11. **गीता वाटिका**,पोस्ट- गीता वाटिका, **(गोरखपुर)** उ०प्र०, पिन कोड् - 273006, मोबाईल नं. 099363-00672, 0551-2284742
12. **कुणाल फैशन**,सी-150 राधाकृष्ण टेक्सटाइल मार्केट, सहारा दरवाजा पोस्ट- **सूरत** (गुजरात), मोबाईल नं. 098251-11055, 097279-11555
13. **सत्यनारायण राजकमल बांगड़**, 1, शम्भु मलिक लेन, ए.वी. मार्केट, चार तल्ला, पोस्ट-**कोलकाता**-7, मोबाईल नं. 093318-28555, फोन नं. 033-22723313
14. **आनन्द ओमप्रकाश शारदा**, गणराज मेडिको, आयुर्वेदिक कॉलेज के सामने, बस स्टेंड रोड, पोस्ट- **नान्देड़**, **महाराष्ट्र**, मोबाईल नं. 094221-70998
15. **राधाकृष्ण लोया**, बी-17, पुष्पा पार्क, 147, गड़ोदिया नगर, घाटकोपर (पू.) **मुम्बई**-400077,मोबाईल नं. 098703-27743
16. **गीता पुस्तक भण्डार**, दुकान नं. 107, प्रथम तल, हनुमान मन्दिर मार्केट पोस्ट-**हिसार**-125001(हरियाणा), फोन : 01662-271784, 099962-99900
17. **घनश्याम दास जिन्दल**, 119, डी.सी. कॉलोनी, त्रिवेणी पार्क, **हिसार** (हरियाणा) मोबाईल नं. 094164-39155
18. **राम अवतार गोयल**, सी-2, ओल्ड नवरंग थियेटर, जमुना आर्केड, जाम बाग, **हैदराबाद**, मोबाईल नं. 09246-152951
19. **सन्त श्री साधुराम जी,** प्राईमरी स्कूल नं. 4 के पास, गौशाला रोड, **सिरसा**(हरियाणा) मोबाईल नं. 094167-58047
20. **जागृत मोहन,** प्रेमगढ़, गली नं. 5, रेलवे रोड, **होशियारपुर (पंजाब)** मोबाईल नं. 094174-76999, 093174-76999

E-mail: hariomtayal@gmail.com

।। श्रीहरिः ।।

विनम्र निवेदन

गीताप्रेसके संस्थापक परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका बचपनसे ही अध्यात्म-पथ पर चल रहे थे, उनको युवावस्थामें ही भगवान् श्रीविष्णुने चतुर्भुजरूपसे दर्शन देनेकी कृपा की। इनके मनमें भाव आया कि मैंने तो भगवान्‌से इस प्रकार दर्शन देनेकी प्रार्थना नहीं की, भगवान्‌ने किस प्रकार यह महान् अनुग्रह किया। इनके मनमें यह फुरना हुई कि भगवान् मेरे द्वारा निष्काम भक्तिका प्रचार करवाना चाहते हैं इसलिये दर्शन देकर एक प्रकारसे यह आदेश दिया है।

भक्तिके प्रचार-निमित्त उन्होंने गीताप्रेस खोला वहाँ सस्ते मूल्यपर गीता, रामायण तथा अन्य पारमार्थिक साहित्य जनसाधारणको मिलनेकी व्यवस्था की। स्वर्गाश्रममें भागीरथी गंगाके किनारे वैराग्यमय वटवृक्षपर ३-४ महीनेके लिये सत्संगका आयोजन करना प्रारम्भ किया। किसी प्रकार मनुष्य भगवान्‌की ओर अग्रसर हो इसके लिये उन्होंने अथक प्रयास किया। अन्य स्थानोंपर घूम-घूमकर भी भगवद्भावोंका प्रचार करते रहे। कल्याण मासिक पत्रिकाका प्रकाशन किया।

ऐसे जनहितकारी महापुरुषने एक अनोखी सूझ (खोज) करी कि मरणासन्न व्यक्तिको भगवन्नाम, गीताजी आदि सुनाकर उनको मुक्त किया जाये। मरणासन्न व्यक्ति ही नहीं उनको भगवन्नाम, गीताजी सुनानेवाले भी मुक्त हो जायें, यह एक प्रकारसे मुक्तिकी लूटका उपाय सोचा। इस हेतु उन्होंने गोविन्दभवन कलकत्ता, गोरखपुर आदिमें **परमसेवा समितिकी** स्थापना की, वहाँ लोगोंको इस परम सेवाके लिये उत्साहित किया। और कितने ही लोगोंको इस प्रकार मुक्त किया।

इस प्रकार लोगोंको जन्म-मरणके चक्रसे छुड़ानेके लिये बहुत से प्रयास अपने जीवनकालमें किये और उनकी प्रेरणासे अभी भी ऐसे कार्य हो रहे हैं। इसी प्रकरणमें उन्होंने **भगवन्नामकी महिमा** और **परमसेवा की महत्ता** पर विशेषरूपसे प्रवचन दिये। मृत्युके समय रोगीके साथ कैसे उपचार किया जाये इन बातों पर प्रकाश डाला। ऐसे महापुरुषके उपरोक्त विषयोंसे सम्बन्धित प्रवचनोंको अनेक जगहोंसे संकलन करके प्रस्तुत पुस्तकमें सम्मिलित किया गया है। भोग और शरीरका आराम ही मनुष्यको भगवत्प्राप्तिसे विमुख करानेवाले हैं। भोग और शरीरके आराम महान् दुःखदायी तथा भगवत्प्राप्तिमें महान् बाधक हैं। कलियुगमें **नाम-जप ही सर्वश्रेष्ठ साधन है,** इन विषयोंके प्रवचन भी इस पुस्तकमें दिये गये हैं।

श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार तथा श्रद्धेय स्वामीजी श्रीरामसुखदासजी महाराज श्रीगोयन्दकाजीके इस काममें पूरे सहयोगी रहे हैं। पोद्दारजीके नाम-जपके विषयमें अनुभव तथा श्रद्धेय स्वामीजीके नाम-महिमा एवं परमसेवा पर कुछ प्रवचन इस पुस्तकमें सम्मिलित कर लिये गये हैं। इन सभी ऊँचे संतोंके भाव पाठकों को एक साथ प्राप्त हो जायें—इस दृष्टिसे यह प्रयास किया गया है।

पाठकगण कृपया इस पुस्तकको मन लगाकर पठन करें यही विनम्र निवेदन है। अपने प्रिय प्रेमी सज्जनों और बान्धवोंको इस पुस्तकको पढ़नेकी प्रेरणा करें। इस पुस्तकका पठन-पाठन आपके जीवनको उन्नत बना देगा, ऐसी हमें आशा है।

—प्रकाशक

॥ श्रीहरि:॥

विषय-सूची

॥ श्रीहरिः ॥

परम सेवा

(प्रवचन नं. 1)

एक सेवा है और दूसरी परम सेवा। दूसरेके हितके लिये भोजन-आच्छादन देना, शरीरको आराम पहुँचाना, सांसारिक सुखके लिये तन-मन-धन अर्पण करना सेवा है। परम सेवा यह है कि अपना तन-मन-धन अर्पण करके दूसरेका कल्याण कर दे। किसीको आजीविका देना यह लौकिक सेवा है और वह परमार्थिक सेवा है कि जो परमात्माकी प्राप्तिमें लगे हुए हैं उन्हें हर-एक प्रकारकी वस्तु दें, उन्हें परमात्माके नजदीक पहुँचानेमें मदद दें। कोई मरनेवाला है और उसकी इच्छा है कि मेरेको कोई गीताजी सुनावे। आप उसके पास पहुँच गये, और उसको गीताजी सुनायी तो यह परम सेवा हुई। परम सेवा वह है जिसके बाद उसको सेवाकी आवश्कता नहीं। आपने लाख आदमियोंकी सेवा की, रुपया-औषध दिया, भोजन आदि दिया और दूसरी तरफ आपने एकको भी परम सेवा की तो यह उनसे बढ़कर है। उसके अनेक जन्मोंका अन्त करा दिया। अनन्त जन्म होनेसे उसकी रक्षा की। मृत्युका सागर सामने है।

गीताजीमें भगवान्ने धर्म बताया है–

राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम् ।
प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम् ॥

(गीता ९/२)

अर्थात्–यह विज्ञानसहित ज्ञान सब विद्याओंका राजा, सब गोपनीयोंका राजा, अति पवित्र, अति उत्तम, प्रत्यक्ष फलवाला, धर्मयुक्त, साधन करनेमें बड़ा सुगम और अविनाशी है।

इस प्रकार भगवान् प्रतिज्ञा करके कहते हैं। अर्जुनको शंका हुई कि जब ऐसी सुगम और प्रत्यक्ष फलवाली धर्ममय बात है तो सब कोई इसका पालन क्यों नहीं करते? तब भगवान्ने कहा–

अश्रद्दधानाः पुरुषा धर्मस्यास्य परन्तप ।
अप्राप्य मां निवर्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि ॥

(गीता ९/३)

अर्थात्–हे परन्तप ! इस उपर्युक्त धर्ममें श्रद्धारहित पुरुष मुझको न प्राप्त होकर मृत्युरूप संसारचक्रमें भ्रमण करते रहते हैं।

जैसे जलका सागर है, वैसे मृत्युका सागर है। समुद्रमें जलके अनन्त कण (बूंदें) हैं। वैसे जबतक मोक्ष नहीं होगा तबतक भावीमें होनेवाली मृत्युकी संख्या नहीं है। आपके द्वारा एकका कल्याण हो गया तो वह परम-सेवा है। इसके मुकाबलेमें करोड़ोंकी आजीवन सेवा भी नहीं है। जब आपको परम-सेवाका मौका मिले–मरनेवाला चाहता है कि हमारा भविष्य नहीं बिगड़े तो ऐसी सेवा अवश्य करनी चाहिये। शिवका भक्त हो तो उसके गलेमें रुद्राक्षकी माला धारण कराये और विष्णुका भक्त हो तो भगवान् नारायणका नाम और गुणोंका कीर्तन सुनाये, तुलसी तथा गंगाजल देवें। अन्तकालमें भगवान्का नाम स्मरण करावें। उसके सामने भगवान्का चित्र रखें। नेत्रोंके सामने भगवान्का स्वरूप रहे और नामका कीर्तन होता रहे तो भीतर भगवान्की स्मृति होगी। भागवत, रामायणकी पुस्तकें मुफ्तमें दें या कम कीमतमें दें। भागवत, रामायणकी कथा कहे-सुनावे या सुने। किसी प्रकार प्रचार करे। पैसा, समय, शक्ति इस काममें लगावें, जो अपने जन हों उन्हें भी इस काममें लगावें। तन-मन-धन-जन सबको भगवान्के काममें लगावें। जो दूसरोंमें भगवान्का प्रचार करता है, वह भगवान्का परम-भक्त है। भगवान् कहते हैं–'हे अर्जुन ! तुम्हारे और

मेरे संवादका जो कोई संसारमें प्रचार करेगा, उससे बढ़कर मेरा प्यारा काम करनेवाला संसारमें न है और न होगा।'

न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः ।
भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि ॥

(गीता १८/६९)

परम-सेवा करनेकी कोशिश करें। भगवान्से प्रार्थना करें। और अगर इस कामके लिये नरकमें भी जाना पड़े तो स्वीकार करें। वह नरक भी आपके लिये वैकुण्ठसे बढ़कर होगा। एक कथा आती है—कोई भक्त यमलोकके पाससे होकर जा रहा था, उसे सुनायी पड़ा कुछ लोग रोते और चिल्लाते हैं। उसने पार्षदोंसे पूछा कि यह क्या बात है? पार्षद बोले—'महाराज यह यमलोक है, यहाँ जीव यम-यातना भुगत रहे हैं।' अच्छा, तो विमान ठहराओ और कुछ नजदीक ले चलो। नजदीक पहुँचे तो लोगोंने कहा कि आपके दर्शनसे और आपके स्पर्श की हुई वायुसे हमें प्रसन्नता और शान्ति हो रही है। यमके सब शस्त्र भोथरे हो रहे हैं, यम-यातना कम हो गयी है, इसलिये आपसे यह प्रार्थना है कि आप जितनी देर अधिक ठहर सकें उतने अधिक ठहर जायँ। वे वहीं ठहर गये। पार्षदोंने कहा— महाराज ! चलिये। उसने जवाब दिया—हम तो यहीं ठहरेंगे। पार्षदोंने कहा—आपको तो वैकुण्ठलोकमें चलना है। तो उसने जवाब दिया कि भगवान्को यह संदेश कहना कि इन लोगोंकी भी वहाँ गुंजाइश होती हो तो वहाँ चलें, अन्यथा हम यहीं रहेंगे। तुम पूछ आओ। पार्षद उधर गये और इधर इन्होंने भगवान्का कीर्तन कराना शुरू किया तो भगवान् प्रकट हो गये। सबका उद्धार कर दिया। अतएव आपको मौका मिला है। किसीकी परम-सेवा करनेका मौका आये तो परम सौभाग्य मानना चाहिये।

कबीर भक्त थे और उनका लड़का भी भक्त था। कबीर

अपने लड़केको कहा करते थे कि बड़ी स्त्री माताके समान है, छोटी बहनके समान, और भी छोटी हो वह पुत्रीके समान है। एक दिन कबीरने कहा—बेटा अब तुम्हारी उम्र १८ सालकी हो गई है, तुम्हारा विवाह करेंगे, तो कमालने कहा—आप मेरा विवाह माता, बहिन या लड़की किसके साथ करेंगे? कहा भी गया है—**'आधा भक्त कबीर था, पूरा भक्त कमाल।'**

रैदास भगवान्के भक्त थे, जातिके चमार थे। उनकी लड़की भी भक्त थी। कोई भगवान्के दर्शनके लिये रैदासके घर आया। रैदासने अपनी लड़कीसे कहा—बेटी, इसको गंगाजल पिला दो, इसे भगवान्के दर्शन हो जायेंगे। जिस पानीमें चमड़ा रँगा जाता था उसमेंसे लोटा भरकर ले गयी। चमड़ा रँगनेवाला होनेसे उसने वह पानी नहीं पीया, किन्तु एक दूसरा भक्त जिसकी श्रद्धा थी उसने पी लिया तो उसे भगवान्के दर्शन हो गये, वह नाचने-गाने लगा। भगवान्के प्रत्यक्ष दर्शन हो गये। उसके कपड़ेपर कुछ पानी गिर गया था। वह कपड़ा निचोड़-निचोड़कर लोग पानी पीने लगे, जिसने पीया उसको दर्शन हो गये। बादमें उस भक्तको अपनी भूल समझमें आयी तो वह रैदासजीके पास पुनः गया तो रैदासजीने कहा—' वह पानी मुलतान गया अब फेर नहीं आवना ।' वह लड़की तो ससुराल गयी। उसका ससुराल मुलतान था।

यह मनुष्य-शरीर, भारतभूमि, आर्यावर्त, उसमें भी उत्तराखण्ड, भगवती गंगाका किनारा, उसकी रेणुकाका आसन, गंगाका जल पीने और स्नानके लिये मिलता है। इससे बढ़कर पवित्र और एकान्त स्थान नहीं। ऐसा मौका अपने घरपर नहीं मिलता। वटकी छायाके मुकाबले और छाया नहीं जो शीतकालमें गरम और गर्मीमें शीतल रहती है, इससे बढ़कर कोई नहीं। वैदिक सनातन धर्म सबसे प्राचीन है। उत्तम

देश, काल और जाति मिली है, ऐसा मौका पाकर फिर भी अपना कल्याण नहीं हो तो तुलसीदासजी कहते हैं–

जो न तरै भव सागर नर समाज अस पाइ ।
सो कृत निंदक मंदमति आत्माहन गति जाइ ॥

(रा.च.मा.उत्तर-४४)

अर्थ– जो मनुष्य ऐसे साधन पाकर भी भवसागरसे न तरे, वह कृतघ्न और मन्द-बुद्धि है और आत्महत्या करनेवालेकी गतिको प्राप्त होता है।

सो परत्र दुख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताइ ।
कालहि कर्महि ईस्वरहि मिथ्या दोस लगाइ ॥

(रा.च.मा.उत्तर-४३)

अर्थ– वह परलोकमें दुःख पाता है, सिर पीट-पीटकर पछताता है तथा [अपना दोष न समझकर] कालपर, कर्मपर और ईश्वरपर मिथ्या दोष लगाता है।

एक विज्ञानानन्दघन ब्रह्मके सिवाय कोई नहीं। शरीर और संसारका अत्यन्ताभाव कर दें, मानो है ही नहीं और उस विज्ञानानन्दघन ब्रह्ममें तन्मय कर दे, फिर आनन्द-ही-आनन्द है। पूर्णानन्द अपार आनन्द......इस प्रकारका ध्यान निर्गुण-निराकार ब्रह्मका ध्यान है। ध्यानकालमें जो ब्रह्मका स्वरूप है उससे विलक्षण प्राप्तिवाला स्वरूप है।

जिसके प्राण जा रहे हैं, उसको भगवद्विषयक बात सुनायी जाय तो वह सबसे बढ़कर है। चाहे अपना कल्याण नहीं हो। निष्कामकर्मका थोड़ा-सा पालन महान् भयसे उद्धार कर देता है।

॥ हरिः ॐ तत्सत् ॥

(यह लेख गीताप्रेसकी पुस्तक 'मेरा अनुभव' कोड़-958 से लिया गया है।)

॥ श्रीहरिः ॥

जिसने गीता, गंगा और भगवान्के नामको अपनाया उसकी यमराजके यहाँ चर्चा नहीं होती

(प्रवचन नं. 2) स्वर्गाश्रम

दिनांक 14-04-1941 प्रातःकाल

मनमें जोश रखना चाहिये। जब परमेश्वरकी इतनी कृपा है, तो उसकी कृपासे उनका ध्यान लगना कठिन नहीं है। सबसे बढ़कर उनकी यह दया है कि मनुष्यका शरीर हमको दिया, भारत भूमिमें जन्म और यह भागीरथीका तट प्राप्त हुआ। भारतमें जन्म होकर भी वैदिक सनातन धर्ममें जन्म हुआ-जो सबका आदि माना जाता है। फिर यह उत्तम-से-उत्तम स्थान, साथ-साथ कलियुग जिसमें थोड़े ही कालमें साधन करनेसे परमात्माकी प्राप्ति हो सकती है। फिर भगवान्की चर्चा यह सारी बातें परमात्माकी कृपासे ही प्राप्त होती हैं।

इस दृश्यको घर जाकर भी याद कर लें, तो स्वाभाविक ही वैराग्यकी लहरें उठने लगे। यहाँ तो स्वाभाविक ही सात्त्विकता और वैराग्यका भाव होता है। यह भागीरथी गंगा है इसके दर्शनसे अन्तःकरण शुद्ध और सात्त्विक हो जाता है, फिर स्नान और पानकी तो बात ही क्या है। शास्त्रोंमें गंगाजीके लिये यहाँ तक बताया है कि गंगाजीके दर्शनसे मनुष्य पवित्र हो जाता है और अन्तकालमें उसे भगवान्की प्राप्ति हो जाती है।

श्रीशंकराचार्यजी कहते हैं–

'' भगवद्गीता किंचिदधीता, गंगाजललवकणिका पीता ''

(स्तोत्ररत्नावलीमें चर्पटपञ्जरिकास्तोत्रम् से, श्लोक-५)

अर्थात्– जिसने भगवद्‌गीताको कुछ भी पढ़ा है, गंगाजलकी जिसने एक बूँद भी पी है, एक बार भी जिसने भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रका अर्चन किया है, उसकी यमराज क्या चर्चा कर सकता है?

जो भगवद्‌गीताका किंचित् मात्र भी अध्ययन करता है और गंगाजीके जलका लव मात्र भी पान करता है- उसकी यमलोकमें चर्चा भी नहीं होती, उसकी आत्मा पवित्र हो जाती है। हमारे यहाँ परिपाटी है कि जब मनुष्य मरता है उस समय उसे गीताजी सुनाई जाती है, तुलसीजीका और गंगाजलका पान कराया जाता है। इस भागीरथी गंगाके तटपर हमलोग उपस्थित हुए हैं- यह भागीरथीजीकी कृपा ही है और भगवान्‌की कृपा तो है ही। भगवान्‌की जिसपर कृपा होती है, उसपर सबकी कृपा होती है। हमलोगोंको वैराग्यपूर्वक ध्यान करना चाहिये। जब आनन्दकी घोषणा होती है, उस समय अलौकिक शान्ति प्रतीत होती है। यह प्रभुकी अलौकिक कृपा है। ध्यानके पूर्वमें वृत्तियाँ शान्त हो जाती हैं। थोड़ा भी ध्यान लगता है तो शान्तिकी बाढ़ आ जाती है, परमात्माका जो चिन्मय स्वरूप है, उसका प्रादुर्भाव हो जाता है। उस समय अलौकिक शान्ति मिलती है। इसके पूर्व आपको थोड़ा गीताजीका सिद्धान्त बताया जाता है। वास्तवमें तो गीताजीका सिद्धान्त केवल भगवान् ही जानते हैं। यह ज्ञान-भक्तिका सागर है, अथाह है, इसमें जो डुबकी लगाता है, वह उस-मय (गीतामय) हो जाता है। गीतारूपी जो गंगा है वह अपने आत्माके कल्याणके लिये है, इस गीतारूपी गंगाके एक श्लोकको धारण कर लें, तो कल्याण हो सकता है। परमात्माकी प्राप्तिके लिये गीताजीका एक श्लोक बहुत है। गीताजीको हम गंगासे भी बढ़कर कह सकते हैं। गंगामें स्नान करनेवाला आप खुद मुक्त हो सकता है, किन्तु गीतारूपी गंगामें स्नान करनेवाला दूसरोंको भी मुक्त कर सकता है।

(यह प्रवचन पेड नं.-56 पृष्ठ-55 से लिया गया है।)

यह पेड क्या है? - यह पेड श्रद्धेय सेठजीके पुराने प्रवचनों का संग्रह किया हुआ हस्तलिखित कॉपी/रजिस्टर को कहते हैं, जो कि गीता-भवन, स्वर्गाश्रम (ऋषिकेश) में मिलते हैं।

॥ श्रीहरिः ॥

सुनानेवालेका भी कल्याण, सुननेवालेका भी कल्याण, यह गति काशी आदि सप्तपुरीकी मृत्युसे बढ़कर है।

(प्रवचन नं. 3) स्वर्गाश्रम, प्रातःकाल वटवृक्ष
दिनांक 31-05-1943

मनुष्यको यदि मरना हो तो जप-ध्यान करते हुए मरना चाहिये। यह मरना काशीमें मरनेसे भी बढ़कर है।

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् ।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥

(गीता ८/५)

अर्थात्– जो पुरुष अन्तकालमें मेरेको ही स्मरण करता हुआ शरीरको त्याग कर जाता है, वह मेरे साक्षात् स्वरूपको प्राप्त होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

प्रभो ! मैं साक्षात् दर्शनका पात्र नहीं हूँ तो हे प्रभो ! अन्तकालमें आपकी स्मृति तो दे दो। सारे जन्मके किये हुए शुभ कर्मोंके बदलेमें यह सौदा होता हो तो कर लो। भगवान्‌से कुछ नहीं माँगना चाहिये, पर माँगो तो यह माँगलो। बालीकी बात आती है- ''अब तो प्रभु यही कृपा करो कि जिस-जिस योनिमें अपने कर्मोंके अनुसार जन्म लूँ, उस-उस योनिमें आपमें प्रेम हो और आपके चरणोंमें अनुराग हो।'' बालीमें कितना स्वार्थ त्याग है, इसलिये भगवान्‌ने बालीको परमधाम भेज दिया।

प्रकरण यह चल रहा था कि अन्तसमयमें मरनेवाले भाई-बहनको जाकर भगवन्नाम सुनावे, तो उस नाम सुननेके निमित्तसे मरनेवालेके प्राण भगवान्‌को याद करते हुए निकलें तो उसका बेड़ापार है, सुनानेवाले भाईका काम हो गया। अन्तकालकी यह गति काशीमें मरनेसे भी बढ़कर है। सप्तपुरियों (सप्तपुरियोंके नाम—अयोध्या, मथुरा,

मायापुरी [कनखल-हरिद्वारसे लेकर लक्ष्मण झूले तक], काशी, काँची [तमिलनाडु], अवन्तिका [उज्जैन], द्वारकापुरी)-से भी बढ़कर है। काशीमें जो पापी मरता है उसे पापका दण्ड भुगताकर मुक्ति दी जाती है, ३६००० (छतीस हजार) वर्ष तककी पाप भुगतनेकी अवधि है। पर जो भगवान्‌के नाम, रूप, गुण, प्रभाव, तत्त्व और रहस्यको याद करता हुआ जाता है वह तो तत्काल ही मुक्त हो जाता है। उसकी सद्योमुक्ति हो जाती है। चाहे वह काशीमें न मरकर हरिजनके घरमें ही मरे। गीताजी कहती है- **अन्तकाले च मामेव** (गीता ८/५)। यह कोई रियायतकी बात नहीं है, यह भगवान्‌का सामान्य कानून है।

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् ।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ॥

(गीता ८/६)

अर्थात्– यह मनुष्य अन्तकालमें जिस-जिस भी भावको स्मरण करता हुआ शरीरको त्यागता है, उस-उसको ही प्राप्त होता है। परन्तु सदा जिस भावका चिन्तन करता है प्रायः अन्तकालमें भी उसीका स्मरण होता है।

कुत्तेको याद (मनन) करता हुआ जाता है तो कुत्ता बनता है। गधेको याद करता है तो गधा बनता है। ऐसे ही भगवान्‌के लिये भी यही कानून है कि भगवान्‌को याद करता हुआ जो जाता है वह भगवान्‌को प्राप्त होता है।

डाक्टरी दवाईमें ब्रान्डी (मदिरा) होती है जिससे तामसी वृत्ति हो जाती है। मरते समय तामसी वृतिमें रहनेवाला व्यक्ति वृक्ष या पहाड़ बनता है। डाक्टरी दवाई देनेकी अपेक्षा देशी, शुद्ध एवं पवित्र औषध देनी चाहिये। जीना होगा तो वैद्यकी दवासे ही जी जायेगा, डाक्टरी दवासे क्या फायदा? मरणासन्न व्यक्तिको भगवन्नाम कीर्तन सुनाना चाहिये। जिससे उसकी आत्माका कल्याण हो।

भीष्मजी शर-शैय्यापर पड़े हैं, अपने योग्य जल माँगते हैं, अर्जुनने बाण मारकर गंगाजल प्रकट कर दिया। भीष्मजी तो गंगापुत्र थे उनके लायक वही जल था। अन्त समयमें गंगाजल पिलानेसे बुद्धि

शुद्ध हो जाती है, अन्तःकरण पवित्र हो जाता है। उसमें भगवान्‌का भाव हो जाता है।

वाणीसे भगवन्नाम उच्चारण करें, वाणी थक जावे तो श्वाससे जप करें। मनसे भगवान्‌का ध्यान करें, हाथोंसे मस्तकसे भगवान्‌को नमस्कार करें। कल्याण तो केवल भगवान्‌के स्मरणसे ही हो जाता है।

भजन, ध्यान, नाम-जप किसी भी एक चीजसे भगवान् प्रसन्न हो जाते हैं। गीताजीमें कहा है- **यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि** (गीता १०/२५) और यज्ञ सब साधन हैं, जप यज्ञ खास मेरा स्वरूप है, खास भगवान् हैं।

हमारी मृत्यु होनेवाली हो तो सब चीजोंकी यानी भजन, ध्यान, जप सबकी चेष्टा करें। दूसरेकी मृत्युका समय हो और हमलोगोंको उसे भगवन्नाम सुनानेका मौका मिल जाय तो बहुत ही आनन्दकी बात है। दूसरेको भोजन कराना, एवं जरूरत पड़ने पर खुद त्याग करना यह बहुत उच्चकोटिका भाव है। **'त्यागाच्छान्तिरनन्तरम्'** (गीता १२/१२) **अर्थात्**- त्यागसे तत्काल ही परम-शान्ति होती है। जितना त्याग है उतना ही ऊँचा है।

अगर आकाशवाणी हो जाय कि बोलो- किस एक का कल्याण किया जाय? मुझको पूछेंगे तो मैं तो यही कहूँ कि प्रभु ! मुझको छोड़कर चाहे जिसका कर दो। यदि सब लोग यही बात कहें तो सबका कल्याण हो जायेगा। और यदि हम सब लोग यही कहें कि बस मेरा कर दो, तो भगवान् कहेंगे कि बस निर्णय करके बतलाओ किस एक का करें। निर्णय नहीं करेंगे तो भगवान् चले जायेंगे।

जो अपने कल्याणकी बात छोड़कर दूसरेका कल्याण चाहता है, उसे मुक्तिका सदाव्रत बाँटनेका मौका मिलता है। मुक्त होना तो आराम चाहना है। अपने तो लोगोंकी सेवा माँगनी चाहिए। सदाव्रत बाँटते ही रहें, स्वयं चाहे उपवास ही करें। इस उपवासमें बड़ी शान्ति होती है, यह बड़ा अलौकिक आनन्द है।

(यह प्रवचन पेड नं.- 86 पृष्ठ- 23, 24 से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण ....

॥ श्रीहरिः ॥

किसी भी सिद्धान्तसे शोक करना नहीं बनता, दुःखका मूल है ममता

(प्रवचन नं. 4) स्वर्गाश्रम, प्रातःकाल वटवृक्ष
जेठ बदी 15 संवत् 2002
सन्-1945

भगवान् गीताजीमें कहते हैं अ. 2 श्लोक 11 से लेकर 30 तक—

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे ।
गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः ॥

(गीता २/११)

अर्थात्— हे अर्जुन ! जो शोक करनेके लायक नहीं है उनके लिये तू शोक करता है और पण्डितोंकी-सी बात बनाता है किन्तु वास्तवमें पण्डित है नहीं। जो पण्डित होते हैं वे जिनके प्राण चले गये उनके लिये और जिनके प्राण नहीं गये हैं उनके लिये भी शोक नहीं करते।

यहाँपर कई भाई इसलिये भी आते हैं कि वहाँ चलो, बातें सुनेंगे तो चिन्ता फिकर दूर होगी। सभी लोग चिन्ता फिकरमें डूबे हुए हैं किन्तु वे मानते नहीं, वनमें मृग हरी-हरी घास चरते हैं उन्हें पता नहीं अचानक सिंह आकर मार देगा। इसी प्रकार हम विषय-भोग भोगते हैं, यह पता नहीं कि काल आकर अचानक मारेगा।

आजकल छोटी उम्रमें अधिक बालक मरते हैं, इसलिये किसी भी उम्रमें कोई भी मर सकता है। यह ख्याल करना चाहिये कि जो मर चुके, वे मर चुके बाकी बचे हैं उन्हें और मरना है, कोई उपाय नहीं जिससे कोई बच सके।

घरमें कोई मर जाय तो चिन्ता फिकर नहीं करना चाहिये। शोक तो करना ही नहीं चाहिये। यही उपदेश भगवान् श्रीकृष्णने

अर्जुनके प्रति दिया कि तू शोक नहीं करनेवालोंके लिये शोक करता है, तू कुटुम्बवालोंके लिये शोक करता है। वह शोक करने लायक नहीं हैं।

रघुनन्दन नामके व्यक्तिका शरीर शान्त हो गया, उसके घरवाले शोक कर रहे थे उन्हें समझाया गया कि शोक नहीं करना चाहिये। किसीके घरमें कोई मर जाता है, तो बाहरसे आदमी आते हैं उन्हें बड़ा कष्ट होता है। किसीके यहाँ कोई मर जाय तो आनेवाले जो हों उन्हें पत्र लिखकर मना कर देना चाहिये कि जो बात होनी थी वह तो हो गयी। आपको आने-जानेमें तकलीफ होगी।

हर एक भाई, माता-बहनको यह बात समझनी चाहिये और समझकर काममें लानी चाहिये कि घरमें शोक हो जाय तो सत्संग करना चाहिये। अभिमन्युकी मृत्यु हो गई तो ऋषि लोग आये राजा युधिष्ठिरको उपदेश दिया कि अभिमन्यु शोक करने लायक नहीं है। शोक करने लायक वह है जो आत्महत्या करके मरता है।

यहाँकी भूमि तीर्थभूमि है, मायापुरी है (कनखल-हरिद्वारसे लेकर लक्ष्मण झूले तक), यहाँ कोई मरे तो शोक नहीं करना चाहिये। मरनेके समय भगवान्‌के नामका, गुणोंका कीर्तन होता रहे तो बड़ा उत्तम है। विष्णुपुराणमें एक कथा है कि यमराज अपने दूतोंको समझा रहे हैं कि जहाँ कीर्तन होता है, उस मृतकके पास तुम मत जाना। जाओगे तो फजीती होगी।

मरनेवालेके पास गीताजीका पाठ, कीर्तन, सत्संग करना चाहिये। तुलसी, गंगाजल पिलावें तो यमके दूत पास ही नहीं आ सकते। **''गंगाजललवकणिका पीता''** ।

ऐसा जहाँ हो उसकी चर्चा यमराज भी नहीं करते। भगवान्‌ने गीताजीमें कहा है—

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् ।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥

(गीता ८/५)

अर्थात्– जो पुरुष अन्तकालमें मेरेको ही स्मरण करता हुआ शरीरको त्याग कर जाता है, वह मेरे साक्षात् स्वरूपको प्राप्त होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

यह (गंगा किनारेकी) तो भूमि ही कल्याण करनेवाली है। भगवान् गीताजीमें उपदेश देते हैं–

अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे ।
गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः ॥

(गीता २/११)

अर्थात्– हे अर्जुन ! तू न शोक करने योग्योंके लिये शोक करता है और पण्डितोंके-से वचनोंको कहता है, परन्तु पण्डितजन जिनके प्राण चले गये हैं उनके लिये और जिनके प्राण नहीं गये हैं उनके लिये भी शोक नहीं करते हैं।

अर्जुनके निमित्त भगवानने् सारी दुनियाँको उपदेश दिया है।

शोक करने लायक तो बात यह है कि हम जिस कामके लिये आये थे, वह पूरा नहीं हो पाया। जो समय चला गया वह तो लौटकर आनेका नहीं है। बचा हुआ समय है, उसे काममें लेना चाहिये। मनुष्यका जन्म पाकर मुक्त नहीं हुए तो कब होंगे? मुक्तका मतलब है भय, शोक आदिसे रहित होना। जन्म-मरणसे मुक्त होना।

किसी भी कारणसे शोक करना नहीं बनता। बालीकी मृत्यु हुई तब तारा शोक करने लगी तो भगवान्ने उपदेश दिया, तब उसे ज्ञान हो गया और उसका शोक जाता रहा। ताराके हृदयमें ज्ञान हो गया तब उसने भगवान्‌की भक्ति माँगी। हमें यह शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये कि घरमें कोई मर जाय तो शोक नहीं करना चाहिये। भगवान् गीताजीमें भी यही बात कहते हैं कि आत्माके लिये शोक करना बनता नहीं। **न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं** (गीता २/२०) **अर्थात्–** यह आत्मा किसी कालमें भी न जन्मता है और न मरता है।

आत्मा न जन्मता है न मरता है, वह नित्य है, अजन्मा है, शाश्वत है। इसमें किसी तरहसे परिवर्तन नहीं होता। यह आत्मा सनातन है शरीरके नाश होनेपर भी आत्माका नाश नहीं होता।

शरीरके लिये भी क्यों शोक करना चाहिये। भगवान् कहते हैं–

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत ।
अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना ॥

(गीता २/२८)

अर्थात्– सभी प्राणी पहले बिना आकारवाले थे, बादमें भी आकारवाले नहीं रहेंगे। केवल बीचमें आकारवाले बन गये उसके लिये क्या चिन्ता है।

रात्रिमें जैसे किसीको स्वप्नमें हिन्दुस्तानका राज्य मिले, जागनेपर वह रोने लगे इसी तरह यह बात है। शरीरोंका विनाश तो होना ही है। जो नाश होनेवाला ही है उसके लिये क्यों शोक करना चाहिये।

जो आत्माका जन्मना मरना मानते हैं यह मूर्खोंका सिद्धान्त है। यदि वह भी सिद्धान्त माना जाय तो उनके सिद्धान्तसे भी यह बात सिद्ध होती है कि जो जन्मे हैं वे तो मरेंगे ही। किसी भी सिद्धान्तसे, किसी भी प्रकारसे शोक करना नहीं बनता।

यदि कहो कि हम तो आत्मासे शरीरोंका वियोग होता है उसके लिये शोक करते हैं। तो उसके लिये भी शोक नहीं करना चाहिये। भगवान् कहते हैं–

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि ।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥

(गीता २/२२)

अर्थात्– यदि तू कहे कि मैं तो शरीरोंके वियोगका शोक करता हूँ तो यह भी उचित नहीं है, क्योंकि जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रोंको त्याग कर दूसरे नये वस्त्रोंको ग्रहण करता है, वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीरोंको त्याग कर दूसरे नये शरीरोंको प्राप्त होता है।

आप कहें कि यह उपदेश तो अर्जुनके प्रति था, जहाँ सभी तरहके वृद्ध, युवा आदि पुरुष थे। बात यह है कि जिसकी आयु

समाप्त हो चुकी है वही पुराना है। धोबीसे धुलकर आये पुराने कपड़े भी नये दीखते हैं। किन्तु धोबी जानता है कि कौन-सा कपड़ा नया है और कौन-सा पुराना है। इसी प्रकार भगवान् तो सबको जानते ही हैं, कौन नया है कौन पुराना है। वे कहते हैं गीता ७/२६ में–

वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन ।
भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन ॥

(गीता ७/२६)

अर्थात्– हे अर्जुन ! पूर्वमें व्यतीत हुए और वर्तमानमें स्थित तथा आगे होनेवाले सब भूतोंको मैं जानता हूँ, परन्तु मेरेको कोई भी श्रद्धा, भक्तिरहित पुरुष नहीं जानता है।

जिसकी आयु खतम हो गई वे पुराने ही हैं। सबके शरीरकी आयु समान नहीं होती, कपड़ा भी कोई पाँच वर्ष, कोई दो वर्ष, कोई एक वर्ष टिकता है। कोई पूछे कि कपड़ा तो पुराना उतारते समय और नया पहनते समय प्रसन्नता होती है। ठीक है किसको प्रसन्नता होती है? समझदारको, न कि बच्चेको? बच्चा तो कपड़ा बदलते समय रोता है। किन्तु माँ उसके रोनेकी परवाह ही नहीं करती। इसी प्रकार भगवान् हमारी परवाह नहीं करते और गंदे शरीरको बदलकर नया शरीर देते हैं। समझदार आदमी किसीकी मृत्यु पर रोते नहीं। भगवान्ने गीताजीमें बतलाया है–

देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा ।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति ॥

(गीता २/१३)

जैसे कुमार, युवा और वृद्धावस्था होती है वैसे ही इस शरीरकी अवस्था होती है। इसलिये जो धीर पुरुष होते हैं वे नहीं रोते।

हमें यही बात तो समझनी है कि हमारे घरमें कोई मरे और हम रोवें तो यह हमारी मूर्खता है। कोई भी रोता है तो वह मूर्खताका परिचय देता है। हाँ भगवान्के लिये तो रोना चाहिये यह तो संतोंका आदेश है।

केशव केशव कूकिये ना कूकिये असार ।

हे केशव ! हे नाथ ! हे हरि ! इस प्रकार रोना चाहिये। असार संसारके लिये कभी नहीं रोना चाहिये। लोग रोते हैं असार संसारके लिये, संसारके लिये रोनेसे कोई गर्ज सरेगी (काम होगा) नहीं।

दुर्वासा ऋषिके आनेपर द्रौपदीने भगवान्को पुकार लगाई, भगवान् प्रकट हो गये। भगवान्के लिये रोना तो फायदेकी चीज है। और रोना उस वस्तुके लिये चाहिये जिससे हमें शान्ति मिले।

आत्मा नित्य है और शरीर अनित्य है, इसलिये शोक नहीं करना चाहिये। भक्तिकी दृष्टिसे यह समझना चाहिये कि घरमें कोई मर गया तो शोक क्यों करें? आप यहाँ (गीता भवनमें) रहते हैं, हमारे यहाँ रुपया जमा करा दें और जाते समय रुपया आप वापिस लें तो हम दुःख करें तो हमारी नालायकी है। इसी प्रकार भगवान्ने लड़केको हमारे पास रक्षाके लिये दे दिया, भगवान् उसे वापिस लेते हैं तो हम उसके लिये रोवें तो यह हमारी मूर्खता है। जिस प्रकार हँसकर किसीकी चीज (वस्तु) रखी, उसी प्रकार हँसकर दे देना ईमानदारी है। नहीं तो बेईमानी है। दूसरोंकी चीज रह ही कैसे सकती है। भलमानसी (मनुष्यता तो) है जो प्रसन्नतासे चीज लौटा दें, नहीं तो फजीती होगी, चीज तो वापस देनी ही पड़ेगी। भगवान्के यहाँ तो उसका और अच्छा प्रबन्ध है। हम रोवें तो भगवान् कहेंगे कि कमबख्त है यह, ये मेरा भक्त कहाँ है? मेरा भक्त होता है वह तो मेरी इच्छाके अनुकूल ही अपनी इच्छा रखता है। भगवान्की इच्छाके बिना तो कोई मर नहीं सकता। भक्त तो वही होता है जो स्वामीके किये (हुए कार्य) पर नाराज नहीं हो एवं दुःख न माने। इस न्यायसे भी प्रसन्नता रखनी चाहिये।

कर्मयोगकी दृष्टिसे विचार करो– कोई जन्मा और मर गया, सोचना चाहिये जन्मा और चला गया, कारण क्या है? रोना तो इसलिये है कि १६ वर्ष तक पाला-पोसा और रुपया खर्च किया और वह चला गया। तो सोचना चाहिये कि उसका हमारे पर ऋण था, वह पूरा करके

चला गया। उसके हम ऋणी थे, अब खाता डोढ़ा (नकी) हो गया। एक प्रकारसे हम ऋणसे मुक्त हो गये। ऋणसे मुक्त हो गये तो खुशी मनानी चाहिये और परमात्मासे प्रार्थना करनी चाहिये कि सबके ऋणसे मेरेको मुक्त कर दो। और कोई पाप किये हैं उनका फल भुगताकर मुक्त कर दो। भीष्मपितामह प्रार्थना करते हैं कि जो कोई पाप हैं वे आकर इसी शरीरसे अपना फल भुगता लें।

वैराग्यकी दृष्टिसे भी शोक नहीं करना चाहिये– हम रेलमें बैठते हैं, रास्तेमें कई आदमी आते हैं, कोई उतर जाता है तो हम खुश होते हैं कि भीड़ कमती हो गयी। इसी प्रकार यह रेलका डिब्बा है, इसमेंसे कोई मर गया (उतर गया) तो और अच्छा हुआ। इसमें शोककी क्या बात है? और यह बात है कि हमने मान लिया यह हमारा लड़का ! यह हमारा पोता ! तब शोक होता है, नहीं तो लड़के तो रात-दिन संसारमें मरते ही रहते हैं। तुमने अपनी मान्यताकी स्थापना करी कि यह हमारा लड़का ! यह हमारा पोता ! अब रोते हो। इसलिये हर एक माता, भाई, बहनको ऐसा विचार करके शोक नहीं करना चाहिये।

दु:खका मूल है वह ममता ही है। हम ममता करते हैं कि यह मेरा भाई, यह मेरी स्त्री, किन्तु ममता करनी चाहिये उससे जो सत्य हो, जिसके लिये रोना नहीं पड़े। सत् वस्तु परमात्मा है। नाशवान् वस्तु है संसार। परमात्माके साथ कोई प्रेम करेगा उसे रोना नहीं पड़ेगा। भगवान्के साथ संयोग हो गया तो वियोग होनेका ही नहीं। प्रेमके लायक तो भगवान् ही हैं, इसलिये हमें सारे पदार्थोंसे प्रेम हटाकर केवल प्रभुमें प्रेम करना चाहिये। केवल प्रभुके साथ प्रेम है उसीका नाम अनन्य-भक्ति है। बस ! अनन्य भक्ति है तो और कोई चीजकी जरूरत नहीं है। भगवान् गीताजीमें कहते हैं–

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ॥

(गीता ११/५४)

अर्थात्– हे अर्जुन ! अनन्यभक्ति करके तो, इस प्रकार चतुर्भुजरूपवाला मैं प्रत्यक्ष देखनेके लिये और तत्त्वसे जाननेके लिये तथा प्रवेश करनेके लिये अर्थात् एकीभावसे प्राप्त होनेके लिये भी शक्य हूँ।

उनके जन्मको धिक्कार है जो परमात्माको छोड़कर संसारमें प्रेम करता है। जितने शरीर हैं, पदार्थ हैं वे तो मैलेके समान हैं। इस शरीरमें नौ द्वार हैं, उनके द्वारा मल-ही-मल निकलता रहता है, दुर्गन्ध-ही-दुर्गन्ध है। प्रेमके लायक कौन-सी चीज है? प्रेम करने लायक तो भगवान्का दिव्य माधुर्य स्वरूप है, वे आनन्दमय हैं, शुद्ध हैं, वे अमृतमय हैं, उन माधुर्य मूर्ति भगवान्से प्रेम करना चाहिये। इस असार संसारसे क्या प्रेम किया जाय।

(यह लेख पेड नं. 86 के पृष्ठ संख्या 63 से 68 तक से लिया गया है)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण...........

।। श्रीहरिः ।।

भगवान्‌के ध्यान रूपी रस्सेको नहीं छोड़ें

(प्रवचन नं. 5) स्वर्गाश्रम, टीबड़ी पर सायंकाल
वैशाख कृ. 11 संवत् 1993
सन्-1936

देखो ख्याल करनेकी बात है, और कोई साधन तो बने न बने यह साधन न छोड़ें, भगवान्‌का ध्यान न छोड़ें। भगवान्‌का भजन-ध्यान सब विघ्नोंको नष्ट कर देता है। यह ध्यान बाहरके, भीतरके सब विघ्नोंको नाश कर देता है। यह निश्चय कर लें- अन्त समयमें जिसका ध्यान हो जाता है वह वही बन जाता है, अतः अन्त समयमें भगवान्‌को याद करनेके लिये पहलेसे ही अभ्यास करें। भगवन्नामका जप खूब करें। ध्यानसे प्रसन्नता और शान्ति रहती है। और उस समय दुराचार, काम, क्रोधादि पास नहीं आते।

ध्यान भक्तिका प्रधान अंग है। भगवान् कहते हैं- उसका योगक्षेम मैं वहन करता हूँ जो निरन्तर मुझे याद रखता है। नहीं तो पता नहीं हम कहाँ जन्मेंगे? शास्त्र कहते हैं धूल (मिट्टी)-के कणोंकी गिनती हो सकती है, पर यह जीव कितनी बार इन्द्र और ब्रह्मा हो गया इसका पता नहीं। संसार समुद्रमें डूबतेके लिये भगवान्‌का ध्यान आधार है। इस ध्यानरूपी रस्सेको न छोड़ें। फिर क्या पता ऐसा मौका हाथ लगे या न लगे (यानी मनुष्य शरीर वापस मिले या ना मिले)। ध्यानके लिये जरूरी-से-जरूरी बात (काम) छोड़ दें। पर इसे, ध्यानको न छोड़ें। इतना मौका दूसरे जन्ममें लगे यह भरोसा नहीं रखें, क्या पता दूसरे जन्ममें क्या होवेंगे (बनेगें)। इसलिये सब काम छोड़कर इस कामको करें।

जो सिर साँटे हरि मिलैं, तौ पुनि लीजै दौड़ ।
क्या जाने इस देर में, ग्राहक आवे और ॥

(यह प्रवचन पेड नं. 92 पृष्ठ-55 से लिया है।)

।। श्रीहरिः ।।

भगवान्‌की इच्छामें अपनी इच्छा मिला दें

(प्रवचन नं. 6) चित्रकूट, रामधाम
दिनांक 15-12-1959

1. संसारिक सुख है उसमें भोगकालमें सुखकी प्रतीति होती है परन्तु परिणाममें वह बहुत दुःख देनेवाला है।

2. दूसरेकी किसी प्रकारकी उन्नति देखकर मनमें जो दुःख होता है यह संताप है।

3. पहले जो आदमी सुख भोग लेता है फिर उसको दुःख आता है तो वह रात-दिन रोता है।

प्रश्न– भगवान्‌को अच्छा समझकरके भी भगवान्‌का ध्यान नहीं लगता है इसमें क्या कारण है?

उत्तर– श्रद्धाकी कमी या विश्वासकी कमी है और कोई कारण समझमें नहीं आता। भगवान्‌पर विश्वास करके या गीताजी पर विश्वास करके भगवान्‌में प्रेम करना चाहिये।

4. सत्पुरुषोंका संग, सत्संग और शास्त्रोंके पढ़नेसे, भगवान्‌में प्रेम होनेसे, भोगोंमें दुःखका अनुभव करनेसे भी संसारसे वैराग्य हो सकता है।

5. संसारमें भगवान्‌के समान कोई है ही नहीं यह विश्वास हो जाये तो भगवान्‌में प्रेम हो जावे। भगवान् जितना प्रेमका मूल्य देते हैं उतना कोई देता नहीं। भगवान्‌में गुणोंका पार ही नहीं है। उनके सौन्दर्य, गुण, प्रभाव, दया, सुहृदता आदि गुणोंको देखें तो और कहीं इतने मिलेंगे नहीं। अगर यह विश्वास हो जाय तो भगवान्‌में प्रेम हो जावे।

6. भगवान्‌का व्यवहार भी अद्‌भुत है। उनके व्यवहारसे शत्रुओंको भी आश्चर्य होता था।

7. अपनेको यह विश्वास हो जाय, निश्चय हो जाय कि भगवान्‌के सिवाय हमारा कोई हितैषी नहीं है, तो भी भगवान्‌से प्रेम हो जावे।

8. भगवान्‌के जपसे या ध्यानसे भी भगवान्‌में प्रेम हो जाता है। सत्संगसे भी भगवान्‌में प्रेम होता है।

बिनु सतसंग न हरि कथा तेहि बिनु मोह न भाग ।
मोह गएँ बिनु राम पद होइ न दृढ़ अनुराग ॥

(रा.च.मा.उत्तरकाण्ड-६१)

अर्थ– सत्संगके बिना हरिकी कथा सुननेको नहीं मिलती, उसके बिना मोह नहीं भागता और मोहके गये बिना श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें दृढ़ (अचल) प्रेम नहीं होता।

9. भगवान्‌में जितनी सुख शान्ति है उतनी और किसीमें भी नहीं है, अगर यह विश्वास हो जावे तो भी भगवान्‌में प्रेम हो जाय।

मैंने तो सारी बात भगवान्‌पर छोड़ रखी है जो होवे उसीमें आनन्द है। अपनी इच्छा मिटा देवे और भगवान्‌की इच्छामें इच्छा मिला देवे, तो अपना कल्याण हुआ ही पड़ा है। अपनी इच्छा रखी तो बहुत तकलीफ पाया। भगवान्‌की इच्छामें इच्छा मिला देवे तो अपने कुछ करना ही नहीं है, जो होता है उसीमें आनन्द है।

सुखदेवजी (एक सत्संगी)-ने एकान्तमें कहा कि मेरेमें कोई कमी हो तो दूर करो।

उत्तर– यह समझो कि भगवान्‌के परम-धाममें जा रहे हैं अपने कुछ करना नहीं है। यह निश्चय कर ले कि अपने कल्याणमें शंका नहीं है।

आपलोगोंके लिये यह बात है कि मरनेवालेको आश्वासन देवें कि तुम्हारा निश्चित कल्याण है। भगवन्नाम-जप, कीर्तन करते हुये या सुनते हुवे जिसका शरीर छूटता है उसका कल्याण निश्चित है।

जीनेवालोंके लिये यह बात है कि खूब भजन-ध्यान करे, गीता और महात्माकी बात माने तो उसके कल्याणमें कोई शंका नहीं है।

मरे हुवे व्यक्तिके शवको अगर महात्मा देख लेवें तो वह जहाँ पर (यानी जिस लोकमें) गया हुआ है वहाँसे सीधे भगवान्‌के यहाँ चला जाता है। फिर अगर जीते हुवेको देख लेवे तो उसका कहना ही क्या है?

मरनेवालेको होश रहे तब तक भक्तिकी, ज्ञानकी बातें सुनावें और होश नहीं रहे तब कीर्तन सुनावे **(नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण,** का कीर्तन सुनावें)।

प्रश्न– सांसारिक काम करते हुए भगवान्‌का विस्मरण हो जाता है, यह क्यों होता है?

उत्तर– इस संसारको स्वप्नवत् मान लेवें तो उसमें आसक्ति नहीं रहेगी। भक्तिके मार्गमें भगवान्‌की लीला समझ लेवें। इस संसारके शरीर, रुपया, स्त्री-पुत्र आदिमें जो आसक्ति है वही पतनका मुख्य कारण है, इसको हटाना चाहिये।

विषयोंकी जो सत्ता है, तब उनका ध्यान अर्थात् चिन्तन होता है, यह बहुत हानिकर है, इसी तरहसे भगवान्‌का चिन्तन होने लग जावे तो बहुत उत्तम है।

(यह लेख पेड नं. 91 पृष्ठ संख्या 27, 28 से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

।। श्रीहरिः ।।

भगवान् और महापुरुषोंके प्रभावकी बातें

(प्रवचन नं. 7) चित्रकूट, रामधाम

दिनांक 16-12-1959

पापी-से-पापीका भी परमात्माकी शरण होनेसे कल्याण हो जाता है, यह भगवान्का अलौकिक प्रभाव है।

यशोदाके आंगनमें जो रेती है उसमें भगवान् खेलते हैं, सो उसमें भगवान्के चरण लगनेसे उसके हर कणमें मुक्ति देनेकी शक्ति है। यह भगवान्का अलौकिक प्रभाव है।

इसी तरहसे महात्मा पुरुष हैं। उन्होंने जहाँ वास किया वह स्थान भी तीर्थ हो गया, जहाँ पतिव्रता स्त्री रही, वह स्थान भी तीर्थ हो गया। जैसे यहाँसे ११ मील दूर अनसूयाजीका मन्दिर है, अनसूयाजी पतिव्रताओंमें श्रेष्ठ मानी जाती हैं। अयोध्याजीमें मरनेसे कल्याण है, मथुरा-वृन्दावनमें मरनेसे कल्याण है।

आप व्यवहार करो उस समय भगवान् श्रीरामचन्द्रजीको याद करो तो बहुत ज्यादा लाभ हो सकता है। कहना नहीं चाहिये मुझको तो बहुत लाभ हुआ है।

भगवान्को याद करते हुए, कीर्तन करते हुए, भगवन्नाम या कीर्तन सुनते हुए, भगवान्को नमस्कार करते हुए जो शरीर छोड़कर जाता है, उसका कल्याण हो जाता है।

भगवान्का नाम-जप करते हुए, कथा, गीताजी आदि सुनते हुवे जो जाता है उसका कल्याण हो जाता है। महात्मा जो कहते हैं वह शब्द आकाशमें रहते हैं, कोई अधिकारी पुरुष आता है तो वे उसकी मदद करते हैं, शब्द नित्य हैं।

(यह लेख पेड नं. 91 पृष्ठ संख्या 31 से लिया गया है।)

।। श्रीहरिः ।।

अपने साधनका निरीक्षण करें

(प्रवचन नं. 8) चित्रकूट, रामधाम, दोपहर 3.30 बजे

दिनांक 20-12-1959

दीन, दु:खी, अनाथ आदिकी सेवा करना, सेवा है। परम सेवा है– मरते हुएको भगवान्का नाम सुनाना और गीताका प्रचार करना।

न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः ।
भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि ॥

(गीता १८/६९)

अर्थात्– उससे बढ़कर मेरा अतिशय प्रिय कार्य करनेवाला मनुष्योंमें न कोई है और न उससे बढ़कर मेरा अत्यन्त प्यारा पृथ्वीमें दूसरा कोई होगा।

चार घण्टेका मौन रखना, जिसके अनुकूल हो वह रखे, जिसको साधन करना हो वह मौन रखे।

रातको सोनेके समयको साधन बनाना चाहिये। रातको सोते समय भगवान्के नामका जप या ध्यान एवं लीला आदिका चिन्तन करते हुये सोवें।

अपने साधनको हर समय बढ़ावे। हर घण्टे उसका निरीक्षण करे कि पिछले घण्टेसे साधन बढ़ा या नहीं, अगर नहीं बढ़ा तो खोजना चाहिये क्यों नहीं बढ़ा? मेरा भक्त, यज्ञ और तपोंका भोक्ता मुझको जानकर और सुहृद जानकर मुझको प्राप्त हो जाता है (गीता ५/२९)।

बीमार आदमी मिल जावे तो उसकी खूब तन-मन-धनसे सेवा करें। उसको भगवान्का स्वरूप समझें या उसमें भगवान्को समझें क्योंकि सब तपों और यज्ञोंका भोक्ता भगवान् ही हैं।

जो निष्काम भावसे दूसरेके परोपकारके लिये दूसरोंकी सेवा करता है उसको किसी बातका डर नहीं है। जैसे हैजा, प्लेग, टीबी आदि की बीमारीमें निधड़क होकर उनकी सेवा करें, सेवा करने वालेको किसी बातका डर नहीं है। हमने तो बहुत उत्साहसे ऐसे काम किये हैं हमें तो कुछ नहीं हुआ है। निष्काम भावसे जो भी काम किया जाता है वह कल्याण करनेवाला है।

रहस्यकी बात बताई जाती है– गीताजीके एक-एक चरणमें रहस्यकी बात भरी हुई है। गीताजीमें प्रवेश करके उसको धारण करनेसे उसका कल्याण हो जाये उसमें तो कहना ही क्या है। वह दूसरोंका भी कल्याण कर सकता है भगवान्ने गीताजीमें कहा है–

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥

(गीता २/४७)

अर्थात्– तेरा कर्म करनेमें ही अधिकार है, उसके फलोंमें कभी नहीं। इसलिये तू कर्मोंके फलका हेतु मत हो तथा तेरी कर्म न करनेमें भी आसक्ति न हो।

इसको धारण करनेसे बहुत जल्दी उद्धार हो जाता है। जीवित अवस्थामें भी उसका फल मिल जाता है।

कर्म करनेमें ही तेरा अधिकार है, तेरा फलमें अधिकार नहीं है। फल देना तो परमात्माके अधिकारकी चीज है। अधिकारका यह भाव लेना चाहिये कि मेरा हक नहीं है। अगर अपना हक मान लिया तो उस कर्मका जितना हक होगा, उतना ही मिलेगा।

भगवान् रामकी दृष्टिसे १४ वर्ष तक, राज्यपर मेरा अधिकार नहीं है। भरत कहता है मेरा अधिकार नहीं है। वहाँ दोनोंके त्यागकी प्रंशसा है। यह निष्काम-भाव है। भरतजीने राज्यका काम किया पर

उसका उपभोग नहीं किया।

ब्राह्मणको गाय दान देनेके बाद उसकी सेवा की जा सकती है, पर उसका दूध नहीं पीया जा सकता। ऐसे ही कर्म करनेमें ही अपना अधिकार है, फलमें अपना अधिकार नहीं है। कोई भी उत्तम कर्म किया जावे उसको अच्छी तरहसे करे पर फलमें अधिकार नहीं माने।

कर्मफलका हेतु मत बन। अगर तू कर्मफलका हेतु बन जायेगा तो तुमको भोगना पड़ेगा, और मुक्ति नहीं मिलेगी। फलको छोड़नेसे ही मुक्ति होती है। न तो वाणीसे यह कहें कि मैंने यह बढ़िया काम किया और न मनमें अभिमान करे। कर्म करके उसके फलमें भी आसक्ति नहीं रखें। न उसमें अहंता ममता रखें, न आसक्ति रखें, न वासना रखें उनसे अपना सम्बन्ध ही नहीं जोड़ें। जैसे पुण्य कर्म करे तो उसको स्वर्ग मिलेगा, स्वर्गके बाद फिर उसको यहाँपर (मृत्यु लोकमें) आना पड़ेगा। उससे आना-जाना नहीं मिटा। सब काम भगवद् अर्थ करें जिससे कल्याण होता है।

कर्म न करनेमें भी तुम्हारी प्रीति नहीं होनी चाहिये। कर्म करनेमें ममता, आसक्ति आदि नहीं रखनी चाहिये।

(यह लेख पेड नं. 91 पृष्ठ संख्या 41,42,43 से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

॥ श्रीहरिः ॥

जप करनेवालेके आनन्द और शान्ति स्वतः रहती है

(प्रवचन नं. 9) चित्रकूट, रामधाम
दिनांक 24-12-1959

हमने सत्संगमें बातें तो बहुत सुन ली, पर मनका भाव नहीं बदला। भाव बदले बिना साधक ऊँचा नहीं उठता।

सबकी सेवा और हित करनेका भाव रहना चाहिये। इससे जल्दी उन्नति होती है।

प्रश्न— निरन्तर भजन कैसे हो?

उत्तर— जिनका भगवान्में प्रेम है या जिन आदमीके निरन्तर भजन होता है उनके साथ रहनेसे निरन्तर भजन हो सकता है।

नाम—जपसे बढ़कर और कोई चीज नहीं है तो वही उसके लिये सबसे बढ़कर है। नाम-जपमें अलौकिक आनन्द आने लग जावेगा तब फिर नाम-जप छूटेगा ही नहीं। भगवान्के नामसे बढ़कर और कोई चीज नहीं है। यह बात शास्त्र महापुरुष कहें तो मान लेनी चाहिये। जैसे वकील है उसको हम हस्ताक्षर करके दे देते हैं। अपना गला उसके हाथमें दे देते हैं, अपनी गरजसे उसको रुपये भी देते हैं और सिफारिश भी करवाते हैं। महात्मा आपसे रुपये भी नहीं लेते और जन्म-मरणसे छूटने की दवाई देते हैं, सो उनपर विश्वास करके काम शुरु कर देना चाहिये।

जैसे डॉक्टरके कहे अनुसार उसपर विश्वास करके उसके कहे अनुसार काम करते हैं। इतना विश्वास भगवान्पर करके उनकी शरण हो जावे तो काम बन जावे। वैद्य, वकीलके जितना भी विश्वास

भगवान्पर कर लेवे तो बेड़ा पार है। अपने माननेकी और विश्वासकी कमी है।

भगवान् कहते हैं—

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति ।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ॥

(गीता ६/३०)

अर्थात्- जो पुरुष संपूर्ण भूतोंमें सबके आत्मारूप मुझ वासुदेवको ही व्यापक देखता है और संपूर्ण भूतोंको मुझ वासुदेवके अन्तर्गत देखता है, उसके लिये मैं अदृश्य नहीं होता हूँ और वह मेरे लिये अदृश्य नहीं होता है, क्योंकि वह मेरेमें एकीभावसे स्थित है।

उसके पहलेका ही आधा श्लोक बहुत है जैसे बादलमें आकाश है उसमें अणुमात्र भी जगह ऐसी नहीं है कि जो आकाशसे रहित हो ऐसे ही भगवान् इस संसारमें हैं। भगवान् कहें वैसा तो अपनेको करना चाहिये पीछेका काम भगवान्का है।

जप करनेवालेके आनन्द और शान्ति आप ही रहेगी। अगर आपके आनन्द और शान्ति नहीं रहती है तो जप अभी वैसा नहीं होने लगा है। जब जप आप ही होने लग जावेगा तब आनन्द, शान्ति आप ही आने लग जावेगी। जब तक नामजप आप ही नहीं होता है तब तक आनन्द और शान्ति कम रहती है।

हमारी इतनी बात मान लो कि हम आपको बीती सच्ची बात कहते हैं कि भगवान्का नाम ही सबसे श्रेष्ठ है। नाम-जप करनेपर भगवान्के नाम और रूपकी स्मृति आप ही होती है।

महात्मा और शास्त्र जो कहते हैं उनके वचनोंको सच्चा मानकर लाभ उठाना चाहिये।

भगवान् कहते हैं, महात्मा और शास्त्र जो कहते हैं वे ठीक ही

कहते हैं, उनके वचनोंको सच्चा मानकर लाभ उठाना चाहिये। अपने वैद्य और वकील पर भी विश्वास करते हैं, तो भगवान्, महात्मा और शास्त्र पर तो उससे भी ज्यादा विश्वास करना चाहिये।

वैद्यकी दवाईसे तो बचे या नहीं यह शंका है पर भगवान् और महात्माके वचनोंके अनुसार चलनेसे जन्म-मरण रूपी बीमारी रहती ही नहीं।

भगवान्के नाम-जपका पूरा फल जो निष्कामभावसे श्रद्धा-प्रेम पूर्वक करे, उसको मिलता है। जैसे श्वास अपने आप ही आती है वैसे ही भगवान्के नामका जप भी अपने आप ही होने लगे। भगवन्नाम जप निष्कामभावसे एवं श्रद्धा-प्रेमसे हो वह बहुत दामी है।

आपके जीवनकी कमाई एक तरफ और भगवान्का नाम एक तरफ। सो अगर आप यहाँ करोड़ रुपये भी छोड़ें तो आपके साथ नहीं चलेगा, कुछ काम नहीं आयेगा और भगवान्का नाम आपको जीवन-मरणसे उद्धार कर देगा, आपका कल्याण कर देगा।

मरनेके समय भगवान्का नाम ले लेवे, बिना श्रद्धा-प्रेमके भी ले लेवे, तो भी उसका कल्याण हो जाता है। यह भगवान्की विशेष कृपा है। **चाहे वह कितना ही महान पापी हो, अगर मरनेके समय उसको भगवान्का स्मरण रह गया, तो उसका कल्याण हो जायेगा।**

मरते समय अगर किसी पशु-पक्षीकी आवाज आती हो तो उसको हटा देना चाहिये। हल्ला (शोर) नहीं मचाना चाहिये। कुत्ता, चिड़ियाँको हटा दें। मरनेके समय यदि पशु-पक्षीका स्मरण हो गया तो पशु-पक्षी बनना पड़ेगा। इसलिये मरनेवालेके पास से पशु-पक्षी और बुरे संस्कारोंकी चीजोंको हटा देना चाहिये।

(यह लेख पेड नं. 91 पृष्ठ संख्या 47 से 49 तक से लिया गया है।)

।। श्रीहरिः ।।

एक बार सारी पृथ्वीका चक्कर लगा लो या एक भगवन्नाम उच्चारण कर लो, दोनों बराबर है

(प्रवचन नं. 10)

स्वर्गाश्रम, टीबड़ी
जेठ शु. 7 संवत् 1992
सन् 1935

नामका जप और भगवान्के स्वरूपका ध्यान इससे सारे पाप, दुःखोंका नाश हो जाता है। संशय तो रह ही कैसे सकता है, यह विश्वास कर लेवे, इस प्रकार प्रेमसे करुणा भावसे प्रार्थना करे तो प्रभु दर्शन दे देवें। दर्शन होनेपर- **भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः।** भगवान्की भक्ति कैसे ही करो, सब ठीक है। वृद्धावस्था निकट आ गई अब संशय त्यागना चाहिये।

मैं थारे वचन मात्रसे तो शरण हूँ ही अब या ही प्रार्थना है कि अब विलम्ब मत करो, दर्शन देवो, प्रेम करावो खूब विश्वास रखकर जौनसी जगह चोखी जचे वहाँ ही डेरा डाल देवे। **सभी भूमि गोपालकी** । एक भगवान्के नामके उच्चारणको जो फल है सो सगला तीर्थांमें नहीं। थे कठे दोड़ोगा एक बार सारी पृथ्वीकी फेरी देल्यो चाहे एक नाम उच्चारण कर लो आपांने भागनेसे के जरूरत है। आपाने तो ऐसी यात्रा करनी कि इस संसारकी यात्रा नहीं करनी पड़े। मृत्युका समय आवे तो या ही कर कि मेरी मुक्तिमें कोई शंका नहीं। एक-एक चीज मुक्ति देनेवाली है- जैसे एक बार भगवन्नामका उच्चारण करलो, गीताजी, गंगाजल, काशी, महापुरुषका संग ये सब मुक्ति देनेवाली हैं।

जिसके घरमें आग लग रही है यह समझने पर उसे नींद नहीं आती। कोई के आग लाग जावे तो वो बुझावो-बुझावो कर, ऐयां बुढ़ापो आव है, मृत्यु नजदीक है, समय है नहीं, जल्दी काम करो, नहीं तो टापरो (घर) जल जावेगो यह आग है। जिसको घर जलता दीख तो वो दूसरी बात सुनता नहीं। आपकी उम्र बीत है सो यह घरके आग लाग रही है। समय ही असली धन है यो व्यर्थ जावे है। सो घरके आग लागनेके समान है। सोया और लोगांकी निन्दा करी। भोग, प्रमाद, आलस्य, पाप ये चारूं में जिको समय जाव है सो आग लगनी है, बिना आग बुझाये उसको चैन नहीं पड़। जो इस प्रकार सोते हैं उसने घरके आग लगा रखी है। जो समयको अनमोल समझते हैं उनका समय व्यर्थ नहीं जाता। भगवत् कृपाको आश्रय लेकर भजन-ध्यानको साधन जोरसे करना चाहिये। इसमें एक तो अभिमान कोनी होव, दूसरे दया काम आवे। प्रयत्न करनेसे दया खिल जावे यानी दया जानी जावे। प्रारब्धपर काम नहीं छोड़नो, फल प्रारब्धपर छोड़ देवे। भगवान्‌की दया याही है कि प्रयत्न करें। केवल दया-दया पुकारनो झूठो है। भगवान्‌को प्रभाव, रहस्य और तत्त्व को महापुरुषोंसे, शास्त्रोंसे जाननेकी कोशिश करे। उनका प्रभाव सामर्थ्य ऐसी है कि एक क्षणमें उद्धार कर दे। रहस्य जना देवे।

(यह लेख पेड नं. 99 पृष्ठ संख्या 22 से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

।। श्रीहरिः ।।

अगर काममें ले तो नयी है

(प्रवचन नं. 11) गोविन्द भवन, कलकता

दिनांक 04-08-1938 रात्रि समयमें

कहनेके लिये कोई नयी बात नहीं है वे ही दो-चार बातें रटी रटाई हैं। पंडितजीने कोई नयी बात कहनेकी बात कही थी, बात तो पुरानी ही है पर अगर काममें लें तो नयी है, इस दृष्टिसे नयी है। वैद्यजी (एक सत्संगी)-ने कहा था भगवान्‌की बात बार-बार कहनी चाहिये, वह नित्य नयी है। कहनेका तात्पर्य है कि मनुष्यको अपने जीवनमें क्या करना चाहिये इस बात पर यदि ध्यान दे तो पता लगेगा कि अधिकांश लोग भूल ही कर रहे हैं, जो चीज मनुष्य जीवनमें पानेकी है उसे पानेका साधन छोड़कर दूसरे कामोंमें लग जाना यही भूल है, इस भूलको हम सभी कर रहे हैं। जो मरते हैं उनका सबकुछ यहीं रह जाता है। जिनका एक-एक कणपर स्वामित्व था, मरनेपर सारी चीजें परायी हो जाती हैं। वह आत्मा देखता है, जो मनुष्य वासना लेकर मरता है वह प्राय: प्रेत होता है। वह देखता है लोग मेरी चीजें ले रहे हैं। उसके दु:खोंका कोई पार नहीं रहता। वह दु:खी रहता है। नरकमें जाता है और बारम्बार दु:ख पाता है।

(यह लेख पेड नं. 99 पृष्ठ संख्या 68 से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

॥ श्रीहरिः ॥

समयकी अमोलकता

(प्रवचन नं. 12) गोरखपुर, साहेबगंज

दिनांक 13-03-1942 रात्रीमें

हमलोगोंको अपना समय खूब दामी समझना चाहिये। अभी तक हमलोग समयकी कीमत नहीं समझे हैं। कीमत भी जो लोग समझते हैं वे अपनी-अपनी बुद्धिके अनुसार समझते हैं। तो हमलोगोंको उत्तम पुरुषकी बुद्धिका आश्रय लेना चाहिये। एक राजगीर (राजाका मिस्त्री) है, वह अपने समयकी कीमत समझता है, जितनी उसकी दिनभरकी मजदूरी है, आठ आना (पचास पैसे) तो वह दिनभरकी कीमत आठ आना (पचास पैसे) समझता है, वह एक घण्टा भी व्यर्थ बात नहीं करना चाहता। डॉक्टर आदि हैं वे उससे ज्यादा समयकी कीमत समझते हैं। रोगी ज्यादा बीमार है, तो डॉक्टरसे कहते हैं आप रात भर रोगीके पास रहो, तब डॉक्टरने कहा रात भरका ५0 रुपये लेंगे। वे भी अपनी कीमत पचास रुपये समझते हैं। एक वकील होता है वह भी अपने समयकी कीमत समझता है। किसीसे एक घण्टा बात करी, तो ३२ रुपये फीस लगाकर भेज दिया। उसने समयकी कीमत ३२ रुपये समझी। बैरिस्टर उससे भी ज्यादा कीमत समझते हैं। पर अध्यात्म बुद्धिसे विचार किया जावे तो वे सब-के-सब मूर्ख हैं, जो अपने समयको बेचते हैं। पच्चीस हजार रुपया महीनेका वेतनवाला है वह भी घाटेमें ही है। वह भी समयकी कीमत नहीं समझा। समयकी कीमत हम बतला ही नहीं सकते। लाख रुपया दिनकी कीमत बता दी वह भी थोड़ी है। समयकी कीमत रुपयोंसे कायम नहीं होती। रुपयोंसे क्या होता है? सुख मिलता है, समयकी कीमतके बदले हम हिन्दुस्तानका

राज्य दे दें वह भी उसके सामने कुछ भी नहीं है। यदि हम कल ही मर गये तो एक दिनका ही तो वह राज्यका भोग हुआ। इसकी कीमत राज्य समझना भी कमती ही है। इसकी कीमत स्वर्ग समझ लेना भी कम है क्योंकि रामायण, गीताजीमें लिखा है—

एहि तन कर फल बिषय न भाई । स्वर्गउ स्वल्प अंत दुखदाई ।
नर तनु पाइ बिषयँ मन देहीं । पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं ॥

(रा.च.मा.उत्तर ४४/१)

अर्थ— हे भाई ! इस शरीरके मिलनेका फल विषय-भोग नहीं है। [इस जगत्के भोगोंकी तो बात ही क्या] स्वर्गका भोग भी बहुत थोड़ा है और अन्तमें दुःख देनेवाला है। अतः जो लोग मनुष्य-शरीर पाकर विषयमें मन लगा देते हैं, वे मूर्ख अमृतको बदलकर विष ले लेते हैं।

यदि विषय-भोगोंमें समय बिताते हो, तो मूर्ख हो। मनुष्यका शरीर पाकर विषयोंमें मन देता है तो वह शठ है, क्योंकि वह अमृतरूप परमात्माको छोड़कर संसाररूपी विषको लेता है। मनुष्य शरीरसे मिल सकते हैं परमात्मा, और राजी होते हैं संसारको लेकर। गीताजीमें भगवान् कहते हैं—

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते ।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः ॥

(गीता ५/२२)

अर्थात्— जो यह इन्द्रिय तथा विषयोंके संयोगसे उत्पन्न होनेवाले सब भोग हैं, वे यद्यपि विषयी पुरुषोंको सुखरूप भासते हैं, तो भी निःसन्देह दुःखके ही हेतु हैं और आदि-अन्तवाले अर्थात् अनित्य हैं, इसलिये हे अर्जुन ! बुद्धिमान्, विवेकी पुरुष उनमें नहीं रमता।

शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध ये विषय और इन्द्रियोंके जो भोग

हैं ये कैसे भोग हैं? ये दुःखके ही हेतु हैं और आदि-अन्तवाले हैं, जो इसमें रमण करते हैं वे मूर्ख हैं। बुद्धिमान जो हैं वे तो इनमें नहीं रमते। स्वर्गकी बात आई वह भी अल्प ही है। थोड़े दिनमें वहाँसे भी विदा होना पड़ता है। स्वर्गके लिये गीताजी कहती है–

ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति ।
एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना गतागतं कामकामा लभन्ते ॥

(गीता ९/२१)

अर्थात्– वे उस विशाल स्वर्गलोकको भोगकर, पुण्य क्षीण होनेपर, मृत्युलोकको प्राप्त होते हैं, इस प्रकार स्वर्गके साधनरूप तीनों वेदोंमें कहे हुए सकाम कर्मके शरण हुए और भोगोंकी कामनावाले पुरुष बांरबार जाने-आनेको प्राप्त होते हैं अर्थात् पुण्यके प्रभावसे स्वर्गमें जाते हैं और पुण्य क्षीण होनेसे मृत्युलोकमें आते हैं।

संसारके भोगोंमें जो अपने समयको बिताता है, उसकी तो सारे शास्त्रोंमें निन्दा ही की है। फिर विचार करना चाहिए कि अपना समय किस काममें लगाना चाहिए। विचार करके अपना समय बहुत ऊँचे काममें लगाना चाहिए। राज्यके लिये, स्वर्गके लिये, तीनों लोकके राज्यके लिये भी नहीं लगाना चाहिये। यह अमूल्य समय उसके लिये नहीं है। मान लो दिनभर परिश्रम करनेके बाद आपको त्रिलोकीका राज्य मिल गया और कल ही आपकी मृत्यु है तो त्रिलोकीका राज्य भोगेगा कौन? यदि इसके लिये समय बिताते हो तो भूल करते हो। समय उस काममें बिताना चाहिये, जिसमें तुम्हारा समय बिताना सार्थक हो। जिसका फल नित्य हो, पूर्ण हो। तुम्हारी क्रियाका फल अपूर्ण मिले, तो उस क्रियाको उसी समय छोड़ दो। पूर्ण-अपूर्ण क्या है?

अपूर्ण क्या है– आज तक संसारके भोग भोगे क्या कभी

तृप्ति हुई? नहीं। हमारे यह लालसा लगी ही रहती है कि और सुख मिले।

पूर्ण क्या है– ऐसी भी एक चीज है, जिसकी प्राप्ति होनेके बाद और आकांक्षा नहीं रहती वह है परमात्माकी प्राप्ति, उसकी प्राप्ति होनेके बाद ऐसी ही बात हो जाती है। गीताजी कहती है–

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः ।
यस्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते ॥

(गीता ६/२२)

अर्थात्– परमेश्वरकी प्राप्तिरूप जिस लाभको प्राप्त होकर उससे अधिक दूसरा कुछ भी लाभ नहीं मानता है और भगवत्प्राप्तिरूप जिस अवस्थामें स्थित हुआ योगी बड़े भारी दुःखसे भी चलायमान नहीं होता है।

सुखमात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम् ।
वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः ॥

(गीता ६/२१)

अर्थात्– इन्द्रियोंसे अतीत केवल शुद्ध हुई सूक्ष्म बुद्धिद्वारा ग्रहण करने योग्य जो अनन्त आनन्द है उसको जिस अवस्थामें अनुभव करता है और जिस अवस्थामें स्थित हुआ यह योगी भगवत्-स्वरूपसे नहीं चलायमान होता है।

अत्यन्त जो सुख है, जिसकी सीमा नहीं है, जो इन्द्रियजन्य नहीं है, इन्द्रियोंसे अतीत है, बुद्धिग्राह्य है और जिसको जाननेके बाद वह व्यक्ति कभी विचलित नहीं हो सकता और इससे बढ़कर कोई सुख है यह माँग समाप्त हो जाती है।

जैसे घड़ा जब जलसे पूर्ण हो जाता है तब जल भरनेकी गुंजाइश नहीं रहती, इसी प्रकार जब हृदय आनन्दसे भर जाय और गुंजाइश नहीं रहे। वह सुख अपने सबको मिल सकता है, मनुष्य

मात्रका अधिकार है पापी-से-पापी, मूर्ख-से-मूर्खका भी अधिकार है। जिसकी आयु आज ही समाप्त हो रही है उसका भी अधिकार है। समय आपके हाथमें नहीं रहा किन्तु अब भी आपको चेत हो गया तो भी गुंजाईश है। एक क्षणमें परमात्माकी प्राप्ति हो सकती है। जैसे गुफामें हजार वर्षसे अन्धकार है, तो उस पूरी गुफामें एक क्षणमें प्रकाश हो सकता है, अन्धकार नहीं कहेगा कि हम इतने दिनसे हैं तुम एक क्षणमें कैसे प्रकाश करते हो। ऐसे ही कितने ही जोरका पापी हो उसके लिये भी वहाँ (भगवान्‌के यहाँ) गुंजाइश है। मूढ़के लिये भी गुंजाइश है। भगवान् गीताजीमें कहते हैं–

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् ।
यः प्रयाति स मद्‌भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥

(गीता ८/५)

अर्थात्– जो पुरुष अन्तकालमें मेरेको ही स्मरण करता हुआ शरीरको त्याग कर जाता है, वह मेरे साक्षात् स्वरूपको प्राप्त होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

''अन्तकालमें जो मेरा स्मरण करता हुआ जाता है वह मेरे स्वरूपको प्राप्त होता है।'' यदि मरनेके समय भगवान्‌की स्मृति हो गई तो हमारा कल्याण हो गया। पापीके लिये भी भगवान् कहते हैं–

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक् ।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः ॥

(गीता ९/३०)

अर्थात्– मेरी भक्तिका प्रभाव सुनकर, यदि कोई अतिशय दुराचारी भी अनन्यभावसे मेरा भक्त हुआ मेरेको निरन्तर भजता है, वह साधु ही मानने योग्य है; क्योंकि वह यथार्थ निश्चयवाला है। अर्थात् उसने भलीभाँति निश्चय कर लिया है कि परमेश्वरके भजनके

समान अन्य कुछ भी नहीं है।

तुलसीदासजी कहते हैं–

जबहिं नाम हिरदै धर्‌यौ भयो पापको नास ।
मानो चिनगी आग की परी पुरानी घास ॥

यदि कोई कहे कि पापी हो तो क्या उसके उद्धारमें समय लगेगा? नहीं, उसके लिये भी भगवान् गीताजीमें कहते हैं–

क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति ।
कौन्तेय प्रति जानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति ॥

(गीता ९/३१)

अर्थात्– वह शीघ्र ही धर्मात्मा हो जाता है और सदा रहनेवाली परमशान्तिको प्राप्त होता है। हे अर्जुन ! तू निश्चयपूर्वक सत्य जान, कि मेरा भक्त नष्ट नहीं होता।

धर्मात्मा ही नहीं बल्कि **शश्वच्छान्तिं निगच्छति** सदा रहनेवाली परमशान्तिको प्राप्त होता है। और उसका पतन नहीं होगा। दुराचारी भी साधु बन जाता है। यदि साधु हो तो कहना ही क्या, दुराचारी भी कैसा? अतिशय दुराचारी। दुराचारी था, परन्तु अब साधु हो जाना चाहिये। वह जल्दी ही धर्मात्मा बन जायेगा। हमें हिम्मत बाँधनी चाहिये, जब भगवान्‌की इतनी प्रतिज्ञा है तो हम ऐसे क्यों नहीं बन सकते। मूढ़के लिये भी भगवान् गीताजीमें कहते हैं–

ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना ।
अन्ये सांख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे ॥

(गीता १३/२४)

अर्थात्– हे अर्जुन ! उस परम पुरुष परमात्माको, कितने ही मनुष्य तो शुद्ध हुई सूक्ष्मबुद्धिसे, ध्यानके द्वारा हृदयमें देखते हैं तथा अन्य कितने ही ज्ञानयोगके द्वारा देखते हैं और दूसरे कितने ही

निष्काम कर्मयागके द्वारा देखते हैं, अर्थात् प्राप्त करते हैं।

अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वान्येभ्य उपासते ।
तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः ॥

(गीता १३/२५)

अर्थात्– परन्तु इनसे दूसरे अर्थात् जो मन्द बुद्धिवाले पुरुष हैं; वे स्वयं इस प्रकार न जानते हुए, दूसरोंसे अर्थात् तत्त्वके जाननेवाले पुरुषोंसे सुनकर ही उपासना करते हैं, और उन पुरुषोंके कहनेके अनुसार ही श्रद्धासहित तत्पर हुए साधन करते हैं और वे सुननेके परायण हुए पुरुष भी मृत्युरूप संसार-सागरको निःसन्देह तर जाते हैं।

जो सांख्ययोग, कर्मयोग और ध्यान भी नहीं जानता है उसके लिये भगवान् कहते हैं कि वह भी जाननेवाले पुरुषोंके द्वारा सुनकर उसके अनुसार उपासना करता है तो वह भी तर जाता है।

पाय परमपद हाथसे जात, जो बात गई सो गई, जो बाकी है उसकी रक्षा करो। यावन्मात्रका अधिकार है, असंख्यकोटि जीव हैं उनमें जो मनुष्यके लायक होता है उसे ही परमात्मा मनुष्य बनाते हैं। इस प्रकारका अधिकार पाकर भी हम परमात्माको प्राप्त नहीं होते, इसमें हेतु क्या है? अश्रद्धा।

अश्रद्दधानाः पुरुषा धर्मस्यास्य परन्तप ।
अप्राप्य मां निवर्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि ॥

(गीता ९/३)

अर्थात्– हे परंतप ! इस तत्त्वज्ञानरूप धर्ममें श्रद्धारहित पुरुष मेरेको न प्राप्त होकर, मृत्युरूप संसारचक्रमें भ्रमण करते हैं।

भगवान्ने धर्मका क्या उपदेश दिया?

राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम् ।
प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम् ॥

(गीता ९/२)

अर्थात्– यह ज्ञान सब विद्याओंका राजा तथा सब गोपनीयोंका

भी राजा एवं अति पवित्र, उत्तम, प्रत्यक्ष फलवाला और धर्मयुक्त है, साधन करनेको बड़ा सुगम और अविनाशी है।

जब ऐसी बात है तो भगवान्को प्राप्त क्यों नहीं कर लेते? **अश्रद्दधानाः पुरुषा** श्रद्धाकी कमीके कारण ही वे इससे वंचित रह जाते हैं। भगवान् कहते हैं– मुझको न पाकर ही मृत्युरूप संसार सागरमें भटकते हैं।

मुझे न प्राप्त होकर भटकता है, यह बात भगवान्ने क्यों कही? जैसे राजाके पुत्रका जन्म-सिद्ध राज्यपर अधिकार है। परन्तु वह राजाकी आज्ञाके विरुद्ध चलेगा तो राज्य न देकर उसे जेल होगी। यहाँ राजा परमात्मा हैं, जैसे राजाके लड़केका जन्म-सिद्ध राज्यपर अधिकार है, इसी प्रकार हमारा भी परमात्माकी प्राप्तिमें जन्म-सिद्ध अधिकार है, वह परमात्माकी प्राप्ति हमें प्राप्त न हो तो हमारे लिये शोककी बात है।

भगवान्ने हमें जन्मभरमें अपनी प्राप्तिके काफी मौके दिये, फिर भी हमने सारे जन्ममें भगवान्की प्राप्ति नहीं की। अब अन्त समयमें भी भगवान्की स्मृति हो जाय तो काम बन जाय।

यदि हमें भगवान्की प्राप्ति नहीं हुई तो बड़ी दुःखकी बात है। मनुष्य शरीर मिला है तो हमें कोशिश करके परमात्माकी प्राप्ति कर लेनी चाहिये।

प्रश्न– यदि कोई प्राप्ति कर ले तो उसने क्या समयका सदुपयोग किया?

उत्तर– हाँ। उसने समयका थोड़ा सदुपयोग किया है, क्योंकि अपनी आत्माका कल्याण तो थोड़े समयमें ही हो सकता है। यदि यह बात अपने समझमें आ जावे तो कटिबद्ध होकर अपने समयको बितावे तब अपना ही नहीं सारे संसारका उद्धार कर सकता है। ऐसी

इस मनुष्य शरीरमें शक्ति है।

यदि आप कहें ऐसा अभी तक नहीं हुआ। ठीक है, पर ऐसा करनेके लिये मनाही तो नहीं है, हो तो सकता ही है। भगवान्‌ने ऐसी बात नहीं कही कि इससे बढ़कर आगे और नहीं हो सकता।

जितने महात्मा हुए उन्होंने हजारों, लाखोंका कल्याण किया, पर उनसे बढ़कर भी कोई मनुष्य हो सकता है। जबतक हमने यावन्मात्र जीवोंका कल्याण नहीं किया तबतक क्या किया? यह अपना उद्देश्य बनाना चाहिये।

हमारी ऐसी योग्यता हो जावे कि हमारे दर्शन, स्पर्शसे ही लोगोंका कल्याण हो जाय। तो यह समयका थोड़ा सदुपयोग हुआ।

शंकरजीका भी ऐसा ही नियम है– जो काशीमें मरता है उसीकी मुक्ति होती है, पर हम तो ऐसा करें कि कहीं भी कोई मरे, सबकी मुक्ति हो। असम्भव क्या है? असम्भव कुछ भी नहीं है। जानवर भी असम्भवको सम्भव कर लेता है, फिर हमारे लिये क्या कठिन है। एक दृष्टान्त आता है– एक पक्षी था, उसने समुद्रके किनारे अण्डे दिये, समुद्रने अपनी लहरोंसे बहाकर वो अण्डे समुद्रमें ले गया। तब सभी पक्षीयोंने मिलकर अपनी चोंचों से जलको बाहर निकाल कर समुद्रको खाली कर दिया और समुद्रसे उन्होंने अण्डे निकलवा लिये। हमारी बात तो ऐसी असम्भव भी नहीं है। यह तो सम्भव है। हमें तो ध्येय रखना चाहिये कि सबके साथ ही हमारा कल्याण हो, यानी सबका कल्याण होनेपर ही हमारा कल्याण हो।

इस प्रकारका ध्येय रखकर कार्य आरम्भ करना चाहिये। कसौटीसे कस लो। हीरा और काँचमें क्या भेद है? ऐरण (लोहेका एक औजार) के भीतर घुस जायेगा तो हीरा है, फूट जायेगा तो काँच है। सोना कितना ही तपाओ, जलनेका नहीं और हीरा फूटनेका नहीं। इसी

प्रकार जो चीज नाश होती है, उसे छोड़ दो। अपना समय किस काममें बिताना चाहिये? जो नित्य वस्तु है उसमें। सोनेकी क्या पहचान है? सोनेको आगमें तपाओ, वह कमती नहीं होता तो ठीक है। इसके लिये क्या कसौटी है?–

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः ।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्त्वदर्शिभिः ॥

(गीता २/१६)

अर्थात्– हे अर्जुन ! असत् वस्तुका तो अस्तित्व नहीं है और सत्‌का अभाव नहीं है, इस प्रकार इन दोनोंका ही तत्त्व ज्ञानी पुरुषोंद्वारा देखा गया है।

जो चीज कायम नहीं है वह मिथ्या है, जो सत्य वस्तु होती है वह घटती नहीं। इसलिये अपना समय उसी काममें बिताना चाहिये जो काम ठीक हो। अपना समय परमार्थमें बिताना चाहिये। एक क्षण भी मिथ्या काममें नहीं बिताना चाहिये। प्रमादमें तो बिताना ही नहीं चाहिये। भोगमें भी नहीं बिताना चाहिये। हमें अपना सारा समय परमार्थमें बिताना चाहिये।

(यह लेख पेड नं. 77 पृष्ठ संख्या 20 से 25 तक से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

।। श्रीहरि: ।।

कर्तव्य समझकर भगवद्‌भजन करना

(प्रवचन नं. 13) स्वर्गाश्रम, गंगातटका वटवृक्ष
चैत्र शु. 13 संवत् 1999
सन्–1942

निष्कामकर्मके आरम्भका नाश नहीं होता और उल्टा फल भी नहीं होता। थोड़ा-सा भी निष्कामकर्म महान भयसे तार देता है। अन्तकालका थोड़ा भी भजन-ध्यान तार देता है। अन्तकालका थोड़ा निष्काम-भाव भी वृद्धिको प्राप्त होकर कल्याण करता है।

भगवान् मनुष्य शरीर देकर हमें अपनी प्राप्तिका मौका देते हैं। उसको व्यर्थ खोनेपर भी अन्तकालका मौका देते हैं। उस समय भी यदि भगवान्‌का स्मरण हो जाता है तो कल्याणकी प्राप्ति हो सकती है। किन्तु इसका विश्वास करके हमें अन्तकालपर ही निर्भर नहीं रहना चाहिये। शायद उस समय दु:खके कारण भगवान्‌की या भगवन्नामकी याद हो या नहीं, क्या विश्वास?

ज्यादा भजन होनेपर उसका ऐसा अभ्यास हो जाता है कि उसके स्वत: भजन होने लग जाता है। पूर्वाभ्यासी अभ्यासवश साधनमें लग जाता है और पूर्णताको प्राप्त कर लेता है।

हमें कर्तव्य समझकर भगवद्‌भजन करना चाहिये, मान-बड़ाई, प्रतिष्ठाके लिये नहीं। पुत्रादि पहले थे ही (यानी पिछले जन्मोंमें) जिन्हें आप छोड़कर आये हैं फिर क्यों उन्हें चाहें, उनमें तो दु:ख-ही-दु:ख है अत: हमें भगवद्‌भजन ही करना चाहिये।

(यह लेख पेड नं. 77 पृष्ठ संख्या 61 से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

।। श्रीहरि: ।।

हर समय मनुष्य भगवान्‌को याद रख सकता है

(प्रवचन नं. 14) स्थान- स्वर्गाश्रम

राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम् ।
प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम् ।।

(गीता ९/२)

अर्थात्– यह ज्ञान सब विद्याओंका राजा तथा सब गोपनीयोंका भी राजा एवं अति पवित्र, उत्तम, प्रत्यक्ष फलवाला और धर्मयुक्त है, साधन करनेको बड़ा सुगम और अविनाशी है।

करनेमें भी सुगम फिर क्यों नहीं करते? श्रद्धा नहीं है। भगवान् गीताजीके अध्याय 9/3 में कहते हैं– हे परंतप ! इस धर्ममें जिन पुरुषोंकी श्रद्धा नहीं है, वह मेरेको न प्राप्त होकर मृत्युरूप संसार सागरमें भटकता है। जैसे समुद्रमें कितनी बूंदोंकी संख्या है कोई नहीं बता सकता। इसी प्रकार यह संसार मृत्युका सागर है। इसमें कितनी बार जन्मना-मरना होगा इसकी संख्या बताई नहीं जा सकती। जीव असंख्यों बरसोंसे घूमता हुआ आ रहा है फिर वहीं जानेको तैयार है। जीव की इस संसारचक्रमें समाप्ति है ही नहीं, सिर्फ परमात्माकी प्राप्तिसे ही समाप्ति है। भावीमें इतना भारी जो दु:ख है इसपर विश्वास ही नहीं है। साधु महात्मा रोते तो नहीं हैं किन्तु रोनेके माफिक पश्चात्ताप करते हैं कि इनकी क्या दशा होगी? भगवान् भी कह रहे हैं परमगतिको न पाकर संसारमें चक्र लगाओगे। क्या प्राप्तिकी सम्भावना थी? अप्राप्तका तो निषेध किया नहीं जाता। वास्तवमें

मनुष्यका भगवद्प्राप्तिमें जन्मसिद्ध अधिकार है। जिस प्रकार राज्यपर राजाके लड़केका जन्मसिद्ध अधिकार है इसी प्रकार मनुष्य मात्रका परमात्माकी प्राप्तिपर जन्मसिद्ध अधिकार है। परन्तु यह मूर्ख ठुकराता है। भगवान् हमारे मस्तकपर हाथ रखते हैं और हम उसे दूर करते हैं। जो लड़का नालायक हो जाता है, राजा बिना इच्छा भी उसे निकाल देता है।

भगवान् कहते हैं बिना श्रद्धाके यह दशा हो रही है। वह श्रद्धा, भगवान्‌के गुण-प्रभाव जाननेसे हो सकती है, नहीं तो बड़ी दुर्दशा है। सोचो तो सही दुनियाँके लोगोंकी क्या दशा होगी? जिस शरीरमें नौ द्वार हैं, इसमें प्राण ठहरे हुए हैं, यही आश्चर्य है। प्राण निकल जाना इसमें क्या आश्चर्य है? राजा युधिष्ठिरने बताया है, लोग मर रहे हैं फिर भी लोग अपनी मृत्यु नहीं देखते, यही आश्चर्य है।

हमलोगोंको विचार करना चाहिये कि हर समय मृत्यु तैयार है। फिर भी हमलोग ऐश्वर्य और धन बढ़ा रहे हैं। यह नहीं सोचते आज यदि मृत्यु हो जावे तो इससे क्या सम्बन्ध है, सब मतलबके मित्र हैं।

सुर नर मुनि सब कै यह रीती ।
स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती ॥

(रा.च.मा.किष्किन्धाकाण्ड १२/१)

अर्थ– देवता, मनुष्य और मुनि सबकी यह रीति है कि स्वार्थके लिये ही सब प्रीति करते हैं।

यदि यह बात सोचो तो मूर्खता प्रतीत होती है कि शरीरको यदि खूब पाला-पोसा तो क्या हुआ? ५ सेर वजन ज्यादा हो गया, तो उठानेवालेको तकलीफ ही होगी। जलकर खाक हो जायेगा, इस शरीरकी कोई चीज काम नहीं आती।

यह हमारे अधिकारकी बात नहीं है कि हम न मरें, न वहाँ

सिफारिश चलती है, न अपील चलती है। वारन्ट वहाँसे कट गया, सिपाही (यमदूत) आकर पकड़ना बाकी है। यह कैसी मूर्खता है जैसे साँपके मुखमें पड़ा हुआ मेंढक मच्छर खानेकी इच्छा करता है। इसी प्रकार काल ताक रहा है, जैसे बिल्ली चूहेके ऊपर ताक रही है, चूहा तो बच सकता है परन्तु अपने बचनेकी आशा ही नहीं है। ऐसी परिस्थितिमें पूछे तो हाय-रुपया, हाय-रुपया करते हैं। इस रुपयेका करेगा क्या? तेरे पास पाँच हजार रुपया है तो भी उतना ही अन्न खाता है, पाँच करोड़ होगा तब भी उतना ही, क्या तुम रुपयोंका उपभोग कर सकोगे? सब छोड़-छोड़कर जा रहे हैं, यही दशा हमारी होगी। इसलिये हमें वह काम करना चाहिये जिससे हम सदाके लिये सुखी हो जावें। वह चीज इस मनुष्य शरीरमें ही प्राप्त हो सकती है। वह ऐसा आनन्द है, जो पूर्ण है। जिसका विनाश नहीं हो सकता। वह आनन्द इसी मनुष्य शरीरमें मिल सकता है। वह प्राप्त है, फिर विलम्ब क्यों? यही मूर्खता है। क्षणिक शान्ति मिलती है उसके लिये तो जिसका मुख देखनेका धर्म नहीं उसकी गुलामी करता है और जिसके दर्शनसे कल्याण हो जाय उसके लिये एक मिनट भी नहीं। कारण क्या? मूर्खता है। दुनियाँमें जितना शहद खर्च होता है किसका परिश्रम है? मक्खियोंका। मक्खियोंका तो केवल परिश्रम है (शहदको खाते कोई और ही हैं)। इसी प्रकार हम रुपया इकट्ठा करते हैं, परिश्रम तो हमको होता है, उपभोग करेंगे दूसरे। इसलिये हमें ऐसे आनन्दकी चेष्टा करनी चाहिये जो सदाके लिये हो।

असली आनन्द परमात्मा हैं। यह नित्य वस्तु है। सांसारिक आनन्द है वह उस असली प्रतिबिम्बका चिलका है, उसे क्या पकड़ना। सांसारिक सुख तो किसी प्रकार रहनेका ही नहीं। परमात्माका स्वरूप सूर्यके समान है, उसको पकड़ना चाहिये। और इस मनुष्य शरीरमें यह बड़ा भारी मौका है, मनुष्यसे बढ़कर कोई भी योनि नहीं

है और कलियुगसे बढ़कर काल नहीं। सत्‌युगमें दस हजार वर्ष तपस्या करनेसे जो कार्यकी सिद्धि नहीं होती थी आज क्षणमें ही, मिनटोंमें ही वह काम हो सकता है। यह ईश्वरकी कृपा है। सिद्धान्त विचारकर देखें तो सब धर्म अधूरे हैं यह वैदिक सनातन धर्म अनादि है, नित्य है। दूसरे धर्म कोई दो हजार वर्ष पुराने हैं कोई चार हजार वर्षसे हैं। इस वैदिक सनातन धर्ममें हमारा जन्म हुआ फिर भी विलम्ब होना और दो अक्षरका ज्ञान भी है, समय-समयपर सत्संगकी चर्चा फिर भी अपना उद्धार नहीं होवे तो फिर रोना ही बदा है यानी रोना ही पड़ेगा, रोवो। भगवान्‌की प्राप्ति नहीं होनेमें प्रारब्धका नाम लेना भी झूठा ही है। क्योंकि यह भगवद्-प्राप्ति तो प्रयत्न-साध्य है, प्रयत्न भगवत्-कृपा साध्य है और वह भगवत् कृपा प्राप्त है। भगवान्‌की दया है, यह तो यही बात रही है कि भगवान्‌की प्राप्ति होगी। भरतजी महाराज जैसे कह रहे हैं—

जन अवगुन प्रभु मान न काऊ । दीन बंधु अति मृदुल सुभाऊ ॥

(रा.च.मा.उत्तर १/६)

अर्थ— [परन्तु आशा इतनी ही है कि] प्रभु सेवकका अवगुण कभी नहीं मानते। वे दीनबन्धु हैं और अत्यन्त ही कोमल स्वभावके हैं।

जन जो हैं इनके दोषकी तरफ भगवान् देखते ही नहीं। क्योंकि वे बड़े दयालु हैं।

मोरे जियँ भरोस दृढ़ सोई । मिलिहहिं राम सगुन सुभ होई ॥

(रा.च.मा.उत्तर १/७)

भरतजी कहते हैं मेरे मनमें दृढ़ विश्वास है कि भगवान् मिलेंगे। वे अपने दासोंके दोषोंकी ओर देखते ही नहीं। पूर्वमें यह बात कही है।

जौं करनी समुझै प्रभु मोरी । नहिं निस्तार कलप सत कोरी ॥

(रा.च.मा.उत्तर १/५)

यदि मेरी करनी की ओर ध्यान दें तो सौ कल्पमें भी उद्धार होनेका रास्ता नहीं है। हमारे भी पापोंकी तरफ देखे तो क्या करोड़ों जन्मोंमें भी उद्धार हो सकता है? परन्तु (भगवान्‌के) वहाँ तो ऐसा कानून है भगवान् इस तरफ देखते ही नहीं, सब भुला देते हैं। दूसरी बात है भरतजीको सगुन अच्छे होते हैं, दाहिनी भुजा फड़कती है। अपने यहाँ सगुन यह है कि उत्तम जाति, उत्तम देश, उत्तम धर्ममें अपना जन्म हुआ है, लक्षण अच्छे हैं, इसपर भी क्यों नहीं विश्वास करना चाहिये कि हमें भगवान् मिलेंगे। यदि कहो हमें तो खाने-पीने (शरीरके पोषण)-की चिन्ता है। तो यह तो मूर्खता है। जब कुत्ते भी जीते हैं, उनके न व्यवसाय है, न आढ़त, न दलालीका काम है फिर वे भी जीते ही हैं। हमलोग तो बोल भी सकते हैं सब कुछ कर सकते हैं। फिर इस बातके लिये क्या चिन्ता? यह तो मामूली बात है, जीनेकी क्या चिन्ता है? यह बात सोचकर हमलोग परमात्माकी प्राप्तिके साधनमें लग जायँ तो थोड़े समयमें ही परमात्मा मिल सकते हैं। जिस दिन हम मरेंगे यह सब यहीं धरा रह जायेगा। अपने पिता, पितामह चले गये, लाखों रुपये अपने पासमें हैं उनसे उनको क्या लाभ मिल सकता है। यही दशा हमारी होनेवाली है। ध्यान देना चाहिये अनन्त जीव हैं। कुत्ते, गधे, कीट पतंग सब चक्करमें चढ़े हुए हैं, इस चक्करसे निकलनेका उपाय इस घोर कलिकालमें परमात्माकी प्राप्ति है।

पतंगे दीपकमें जल रहें हैं दूसरे पतंगे भी उसीमें आकर पड़ते हैं, ऐसी ही दशा मनुष्योंकी हो रही है। भोगोंमें फँसे हैं, नतीजा भी मिल रहा है। कितनी मूर्खताकी बात है तुच्छ गन्दी चीजोंमें मनुष्य

जीवन खर्चकर मृत्युका शिकार बन जाना, और दूसरी तरफ कितना आनन्द है चाहे (इस शरीरको) आगमें जला दो चाहे बोटी-बोटी काट डालो, उसके आनन्दमें कभी कमी नहीं आती। **न हन्यते हन्यमाने शरीरे** (गीता 2/20)। आत्मा जो है वह न तो जन्मता है, न मरता है। वह अज है, शाश्वत है फिर यह बात आई कि खूब तत्परतासे ईश्वरकी भक्ति करनी चाहिये। फिर भी तत्परतासे साधन क्यों नहीं होता? विश्वास नहीं है।

प्रश्न– विश्वास कैसे हो?

उत्तर– साधन करे, प्रत्यक्ष फल हो तो आपही विश्वास हो जाता है। साधन भी सुगम है। जप करें तो क्या कोई परिश्रम होता है?

हर समय मनुष्य भगवान्‌को याद रख सकता है। भगवान्‌में प्रीति नहीं है। प्रीति क्यों नहीं है? विश्वास नहीं है, विश्वास करना चाहिये। किसान लोग विश्वास करके ही तो अनाज मिट्टीमें मिला देते हैं। इसी प्रकार हमें हमारे इस सुखको ठुकरा देना चाहिये और असली सुखके लिये प्रयत्न करना चाहिये। संसारके भोग पदार्थ तो दु:खरूप ही हैं।

(यह लेख पेड नं. 99 पृष्ठ संख्या 73 से 77 तक से लिया गया है।

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

।। श्रीहरि: ।।

इस बातपर भगवान् गारन्टी देते हैं

(प्रवचन नं. 15) सुबह, वटवृक्षके नीचे
दिनांक 21-05-1953

कोई-सा भी साधन हो किन्तु भगवान्‌के नामका जप और परमात्माके स्वरूपकी स्मृति अवश्य करें। वह चाहे वाणीसे हो या श्वाससे। चिन्तन तो मनसे ही होता है बुद्धि और लगा दें। परमात्मा हैं ! इस प्रकार माननेमें न कौड़ी लगती है न छदाम। ऐसा दृढ़ निश्चय करें कि फिर यह निश्चय कायम रहे। बुद्धिसे मान लेवें कि परमात्मा हैं। भक्तिपूर्वक, आदरपूर्वक बुद्धिमें विश्वास हो इसीका नाम ही श्रद्धा है। इस प्रकार बुद्धिकी मान्यतानुसार मनसे भगवान्‌का स्मरण करना चाहिये यानी भगवान्‌को याद रखना चाहिये, वाणीसे उनके नामका जप भी होना चाहिये। स्मरण और जप हरवक्त बना रहे इसके लिये शक्ति अनुसार प्राण-पर्यन्त चेष्टा करनी चाहिये। मृत्युको स्वीकार कर लेवे किन्तु भगवान्‌के नामजप व स्मरणको नहीं छोड़ें। मरना तो है ही फिर भगवान्‌के नामको लेते हुए यदि मृत्यु हो, तो इससे बढ़कर और क्या होवे? बल्कि प्रार्थना करें कि मरते समय आपके नामका जप हो, चाहे आप दर्शन न दें किन्तु श्रद्धा भक्तिपूर्वक आपके नामका जप और स्मृति बनी रहे, यह भगवान्‌से प्रार्थना करे, माँग करे। यह कामना होती हुई भी इतनी शुद्ध और पवित्र है कि इससे मुक्ति हो जावे। शरीर भी बरतने (छूटने)-वाला होवे तो आज ही छूट जावे किन्तु भगवान्‌को याद करते हुए छूटे। चाहे गंगाके किनारे मृत्यु न होकर किसी हरिजनके घर मृत्यु हो जाय किन्तु आपकी स्मृति सदा बनी रहे। भगवान्‌से भी प्रार्थना करे कि हे भगवन्! आप कृपा करके इसमें मदद

करिये। यही सिद्धान्त है, यही साधन है, यही साधनोंका निचोड़ है। इस साधनको सिद्धान्त मानकर इसका पालन करें। यह पालन करें फिर साधनमें कोई कमी भी रह जाय तो यह साधन स्वयं उसको संभाल लेता है। किन्तु इसमें कमी रह जाय तो फिर न तो कोई सहायक है और न साधन है। इस बातपर भगवान् गारन्टी देते हैं–

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥

(गीता ८/१४)

अर्थात्– हे अर्जुन ! जो पुरुष मेरेमें अनन्यचित्तसे स्थित हुआ, सदा ही निरन्तर मेरेको स्मरण करता है, उस निरन्तर मेरेमें युक्त हुए योगीके लिये मैं सुलभ हूँ, अर्थात् सहज ही प्राप्त हो जाता हूँ।

अनन्य चित्तसे नित्य-निरन्तर स्मरण करे तो भगवान् सुलभतासे प्राप्त हो सकते हैं। अब-से अन्ततक अभ्यास करें तो हमारा कल्याण हो जाय।

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् ।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥

(गीता ८/५)

अर्थात्– जो पुरुष अन्तकालमें भी मेरेको ही स्मरण करता हुआ शरीरको त्याग कर जाता है, वह मेरे साक्षात् स्वरूपको प्राप्त होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

भगवान् कहते हैं कि अन्तकालमें मेरा स्मरण करता हुआ शरीर त्यागकर जाता है, वह मुझे ही प्राप्त होता है। यह भगवान्का कानून है।

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् ।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ॥

(गीता ८/६)

अर्थात्– हे अर्जुन ! यह मनुष्य अन्तकालमें जिस-जिस भी भावको स्मरण करता हुआ शरीरको त्यागता है, उस उसको ही प्राप्त होता है। परन्तु सदा जिस भावका चिन्तन करता है अन्तकालमें भी प्रायः उसीका स्मरण होता है।

सदा तद्भावसे भावित हुआ यदि भगवान्के नामका जप करता हुआ मरता है, वह परमात्माको ही प्राप्त होता है। जो जिसको याद करता हुआ जाता है, वह उसीको प्राप्त होता है। देवताओंको याद करता हुआ जाता है वह देवताओंको प्राप्त होता है। और जो भूत-प्रेत और पिशाचोंको याद करता हुआ जाता है वह उन्हींको प्राप्त होता है। ऐसे ही जो भगवान्को याद करता हुआ जाता है वह भगवान्को ही प्राप्त होता है। यदि रोज (भगवान्का या भगवन्नामका) अभ्यास होगा तो मृत्युके समय भी भगवान्की स्मृति हो जायेगी। इसलिये भगवान् अर्जुनको बहुत जोर देकर कहते हैं– **'तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च।'** (गीता ८/७) **अर्थात्–** ''इसलिये हे अर्जुन ! तू हरेक समयमें मेरा स्मरण कर और युद्ध भी कर।'' युद्धमें तो बड़ा ही जोर आता है। जब भगवान्को याद रखते हुए युद्ध हो सकता है, तो फिर हमारेको सब काम करते हुए स्मरण क्यों नहीं हो सकता? इसलिये माता-बहिनों तथा भाइयोंको हरवक्त भगवान्को याद रखते हुए कार्य करते रहना चाहिये। भगवान्को याद रखते हुए काम करनेसे बुरा काम तो होगा ही नहीं और आगे पीछेके सभी पाप स्वाहा हो जायेंगे। इस बातको मानकर इसके लिये कटिबद्ध हो जाना चाहिये।

(यह लेख पेड नं. 42 पृष्ठ संख्या 84, 85 से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

॥ श्रीहरिः ॥

बहुतसे जन्म तो हमारे हो चुके

(प्रवचन नं. 16) वटवृक्षके नीचे
दिनांक 22-05-1953

आज आपको जो बात बताई जाती है वह बहुत फायदे की है। यदि समझमें आ जावे तो बात ही क्या है। जो परमात्माकी प्राप्तिके मार्गमें चलता है, जो साधनावस्थामें है उससे भूल होना स्वाभाविक ही है। मनुष्य अज्ञ है, अज्ञानतामें दोष आ ही जाता है। जितने भी सिद्धान्त हैं, मान्यतायें हैं या मत-मतान्तर हैं सभी भ्रममें भी डालनेवाले हैं और मुक्ति भी देनेवाले हैं। एक-से-एक अलग है, इस तरह तो ये भ्रममें डालनेवाले हैं और किसी एकको मानकर उसके अनुसार आचरण करे तो मुक्ति भी हो जाय। ख्याल करना चाहिये आपलोगोंको बड़ी महत्त्वकी बात बताई जाती है, समझनेकी जरूरत है। हमारी जो भावना है यानी नीयत है रुपयोंकी प्राप्तिकी, वह नहीं होनी चाहिये बल्कि भगवान्‌की प्राप्तिकी नीयत होनी चाहिये। नीयत असली होनी चाहिये फिर साधनमें कोई भूल हो भी जाती है तो भगवान् स्वयं माफ कर देते हैं। उसे भगवान् अपने आप संभाल लेते हैं। हमें चिन्ता करनेकी जरूरत नहीं। हमारी नीयतमें दोष नहीं होना चाहिये। परमात्माको प्राप्त करना सच्ची नीयत है। फिर बीचमें मान-बड़ाई तथा शरीरके आरामको आदर देता है तो वह नीयतका दोष है। जहाँ मान-बड़ाई प्राप्त हुई तो फिर चाहे भगवान् नाराज हों उसको आदर न दें। यदि आदर देता है तो वह साधन परमात्माकी प्राप्तिके लिये नहीं मान-प्रतिष्ठाके लिये है। क्योंकि जब मान-प्रतिष्ठा मिलती है तो फूल जाते हैं और भगवान्‌को भूल जाते हैं। यह भगवान्‌की प्राप्तिमें विघ्न है ऐसा मानकर इसका तिरस्कार कर देना चाहिये। जो भगवान्‌की प्राप्तिमें बाधक है

उसे लात मारकर निकाल देना चाहिये। यदि परमात्माकी प्राप्तिके लिये साधन होगा तो कंचन-कामिनीमें, मान-बड़ाईमें अटकेंगें नहीं। यदि हम साधनकी खातरी (आदर) नहीं करेंगें तो नीयत उच्चकोटिकी नहीं है। दम्भी पाखण्डी जो होते हैं वे भजन-ध्यानका ढ़ोंग करके दूसरोंको मोहित कर लेते हैं और अपनी सेवा पूजा करवाने लग जाते हैं। जब पूजा स्वीकार करने लग जाता है तो वह पूजाका दास हुआ, न कि भगवान्‌का दास। जो स्त्रीके वशमें हो जाता है तो वह स्त्रीका दास है, परमात्माका दास नहीं, ईश्वरका दास नहीं। यदि ईश्वरका दास होता तो इन सबको ठुकरा देता। कई साधक बाहरमें (खुली जगहमें) बैठकर खूब जोरोंसे ध्यान करते हैं, लोगोंको दिखानेके लिये और जब वे एकान्तमें होते हैं तो उनसे कभी माला हाथमेंसे गिरती है तो कभी नींद आती है क्योंकि वहाँ कोई देखता तो है नहीं, बाहर तो वह दूसरोंको दिखानेके लिये ही करता है। वहाँ भगवान् नहीं आते क्योंकि वहाँ तो वह ठगता है। ऐसी जगहसे भगवान् बहुत दूर रहते हैं। भीतरसे भगवान्‌को चाहे और भगवान्‌के आनेमें देर होगी तो भीतरमें दुःख होगा कि अभी तक भगवान् नहीं आये क्या बात है? हे भगवन् ! यदि आप नहीं आयेंगे तो हमारी क्या गति होगी, हम तो मारे जायेंगे। आपके बिना हमारा कोई भी सहायक नहीं। यह भाव होना चाहिये।

(साधन-भजन) हो गया सो हो गया ऐसा कहनेसे भगवान् नहीं मिलते। हमारा समय यदि ठीक नहीं बीत रहा है तो इसे ठीक बितानेकी चेष्टा करनी चाहिये। जब दाँत टूट जायेंगे, मुहँपर झुर्रियाँ पड़ जायेंगी, चलना-उठना-बैठना मुश्किल हो जायेगा तब हमारा क्या सुधार होगा? क्या अभी आपके हाथमें समय है? भरोसा नहीं कब मृत्यु हो जाय। कब इस संसार-सागरसे पार हो जायँ। मृत्यु आ जायेगी तो क्या आप उसे कहेंगे कि आज नहीं कल आ जाना। कहनेसे भी कौन सुनेगा? फिर तो शरीरके साथमें सब सम्पत्ति यहीं छूट जायेगी।

किसीके साथमें कुछ भी सम्बन्ध नहीं रहेगा। कुटुम्बके साथमें पाई भर भी सम्बन्ध नहीं रहेगा। शरीर भी साथमें नहीं जायेगा। केवल प्राण, इन्द्रियाँ, मन और बुद्धि ये ही साथमें जायेंगे। स्थूल शरीरको छोड़कर सूक्ष्म शरीरसे चले जाओगे। तुमको अपनी सारी उम्रमें वही धन प्राप्त करना चाहिये जिससे फिर भगवान् खरीदे जायें। यदि इस जीवनमें भगवान् नहीं मिलेंगे तो पूँजी तो रहेगी ही (यानी जो भजन-ध्यान, नाम-जप किया है वह पूँजी तो रहेगी ही।) तो अगले जन्ममें योगभ्रष्टके रूपमें जन्म हो जायेगा तब मुक्ति हो जायेगी। और किसी योनिमें तो भगवान्की प्राप्ति होनी मुश्किल है। मनुष्य योनि तभी मिलेगी, जब योगभ्रष्ट हो जावोगे।

अयतिः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः ।
अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति ॥

(गीता ६/३७)

भगवान्से अर्जुन पूछ रहे हैं कि जो संयमी नहीं है किन्तु योगमें कहीं श्रद्धा हो ऐसा योगसे चलित हुए मनवाला साधक संसिद्धिको न पाकर कौन-सी गतिको जाता है?

पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते ।
न हि कल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति ॥

(गीता ६/४०)

अर्थात्– इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्ण भगवान् बोले, हे पार्थ ! उस पुरुषका, न तो इस लोकमें और न परलोकमें ही नाश होता है, क्योंकि हे प्यारे ! कोई भी शुभ कर्म करनेवाला अर्थात् भगवत्-अर्थ कर्म करनेवाला दुर्गतिको प्राप्त नहीं होता है।

अच्छे कर्मोंको करनेवालेकी कभी दुर्गति नहीं होती। वह यहाँसे मरकर स्वर्गमें न जाकर योगियोंके घरमें जन्म लेता है। यह भी कोई आसान चीज नहीं, लाखोंमें कोई एक-दो ही ऐसे होते हैं।

महात्मा पुरुषोंको योगी कहते हैं, उनके यहाँ जन्म लेकर वह भी उनके जैसा ही आचरण करने लग जाता है, फिर उसे भगवान्की प्राप्ति हो जाती है। असली धन वही है, जिसके बलसे योगियोंके कुलमें जन्म होता है। वह अच्छी नीयतसे किया हुआ साधन है। इस जन्ममें मन-बुद्धिको शुद्ध बनाकर जायेंगे तो दूसरे जन्ममें भगवान्की प्राप्ति हो जायेगी। इसी जन्ममें 15 आना फायदा हो जायेगा तो आगे फिर जन्म नहीं लेना पड़ेगा।

इन्द्रियोंकी पवित्रता करनी चाहिये। नेत्रोंकी पवित्रता क्या है? माता-बहनोंको अच्छी दृष्टिसे देखें। अपनेसे बड़ी हो तो उसे माता, बराबरवाली हो तो बहिन समझें। सबमें ईश्वर देखे तो हमारे नेत्रोंकी विशेष पवित्रता है।

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते ।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥

(गीता ७/१९)

अर्थात्– जो बहुत जन्मोंके अन्तके जन्ममें तत्त्वज्ञानको प्राप्त हुआ ज्ञानी सब कुछ वासुदेव ही है अर्थात् वासुदेवके सिवाय अन्य कुछ भी नहीं, इस प्रकार मेरेको भजता है वह महात्मा अति दुर्लभ है।

बहुतसे जन्मोंके अन्तमें ज्ञानवान पुरुष मुझे प्राप्त होता है। किन्तु वासुदेव सब जगह है ऐसा माननेवाला महात्मा बड़ा ही दुर्लभ है। बहुतसे जन्म तो हमारे हो चुके। इसी जन्ममें यदि हम भगवान्की प्राप्ति कर लें तो यही हमारा शेषका (अन्तिम) जन्म हो जाय। सबमें भगवद्बुद्धि हो जाय, सबको भगवान् समझकर सेवा करें तो हाथ पवित्र हो जाय। कान पवित्र होते हैं-भगवान्के गुण, प्रभाव एवं प्रेमकी बात सुननेसे। मिथ्या बातें सुननेसे तो कान दूषित होते हैं। दोषोंको इकट्ठा करके ले जायेंगे तो फोनोग्रामकी तरह खींचे जायेंगे। **वासुदेवः सर्वमिति** ऐसा उच्चभाव रखना चाहिये। वाणीसे किसीको

भी गाली नहीं देनी चाहिये। किसीको गाली देनेसे, निन्दा करनेसे, मिथ्या भाषणसे वाणी दूषित होती है। ये संस्कार मरनेपर साथ जायेंगे। वाणीके द्वारा भगवान्‌के नाम, गुणोंका स्वाध्याय हो तो वाणी परम पवित्र हो जाय, तब तो हमारा इसी जन्ममें कल्याण हो जाय।

ये इन्द्रियाँ यदि यहाँ पर (इसी जन्ममें) ही शुद्ध हो जायँ तो यहीं प्राप्ति, नहीं तो अगले जन्ममें भगवान्‌की प्राप्ति होगी। यदि हमने वाणीमें कूड़ा-करकट भर लिया तो नरकोंमें ही गिरना पड़ेगा। ऐसी तामसी योनियाँ मिलेंगी जहाँ परमात्माकी प्राप्ति हो ही नहीं सकती। हमको इतनी तेजीसे चेष्टा करनी चाहिये कि हमें भगवान्‌की प्राप्ति इसी जन्ममें हो जाय। हमारे पास जितनी भी शक्तियाँ हैं उन सबको परमात्माकी प्राप्तिमें लगा देना चाहिये। नहीं तो घोर पश्चात्ताप करना पड़ेगा।

कालहि कर्महि ईश्वरहि मिथ्या दोस लगाइ ।

(रा.च.मा.उ.-४३)

इन सब बातोंको सोचकर हमें इसको (परमात्माकी प्राप्तिको) नहीं छोड़ना चाहिये। जब हितकी बात है, हितकी ही नहीं परमहितकी तो इसे नहीं छोड़ना चाहिये। इससे बढ़कर और कोई हित नहीं। आप भटकते फिरते हैं क्योंकि आपको पूर्णानंदकी प्राप्ति नहीं हुई तभी भटकते हैं। जब मनुष्य उस आनन्दसे तृप्त हो जाता है तो उसे कोई भी चीज अच्छी नहीं लगती। जब उस आनन्दसे भर जाता है तब उसे किसी भी चीजकी आवश्यकता नहीं रहती। उस आनन्दकी प्राप्तिके बाद शरीरको चाहे काट डालो, जला दो पर आनन्दकी स्थिति वैसी ही बनी रहेगी। यह परीक्षा है।

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः ।
यस्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते ॥

(गीता ६/२२)

जिसको पाकर उससे बढ़कर और कुछ नहीं समझता। जिस परमात्माके स्वरूपमें स्थित होकर भारी-से-भारी दुःखसे भी चलायमान नहीं होता है। इसलिये हमारे पास शरीर मौजूद है तो इस चीजको अवश्य प्राप्त करना चाहिये। यह बहुत शीघ्र और सुगमतासे हो सकता है। हमने इसकी अवहेलना कर रखी है इसलिये वञ्चित रह जाते हैं। **''कर्तुं सुसुखं''** करनेमें बड़ा ही सुगम है। वह जल्दी ही धर्मात्मा बन जाता है। चाहे घोर पापी भी क्यों न हो।

तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात् ।
भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ॥

(गीता १२/७)

अर्थात्– हे अर्जुन ! उन मेरेमें चित्तको लगानेवाले प्रेमी भक्तोंका मैं शीघ्र ही मृत्युरूप संसारसमुद्रसे उद्धार करनेवाला होता हूँ।

जिन्होंने मेरेमें चित्त लगा दिया है उन्हें मैं इस संसार-सागरसे शीघ्र ही पार कर देता हूँ। देरीका काम नहीं। **योगयुक्तो मुनिर्ब्रह्म नचिरेणाधिगच्छति** (गीता ५/६) **अर्थात्-** भगवत्स्वरूपको मनन करनेवाला निष्काम कर्मयोगी परब्रह्म परमात्माको शीघ्र ही प्राप्त हो जाता है।

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः ।
ज्ञानं लब्ध्वा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति ॥

(गीता ४/३९)

अर्थात्– हे अर्जुन ! जितेन्द्रिय, तत्पर हुआ, श्रद्धावान् पुरुष ज्ञानको प्राप्त होता है, और उस ज्ञानको पाकर तत्क्षण भगवत्प्राप्तिरूप परमशान्तिको शीघ्र ही प्राप्त हो जाता है।

भगवान्‌ने जगह-जगह जल्दी ही प्राप्ति बताई है। देरीका काम नहीं है। आप कहते हैं कि हमें तो साधन करते हुए बहुत-से वर्ष हो गये, हमें तो अभी तक किसी भी चीजकी प्राप्ति नहीं हुई है। तो आप

झूठ भले ही कहो वास्तवमें तो आपने साधन किया ही नहीं। साधन तो दामी होना चाहिये जब आप दामी चीज चाहते हैं। आप कठिन मानते हैं और भगवान् कहते हैं **सुसुखं** । भगवान् कहते हैं फल भी प्रत्यक्ष है। आज काम करो और दूसरे जन्ममें उसका फल मिलेगा यह बात नहीं है।

राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम् ।
प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम् ॥

(गीता ९/२)

अर्थात्– यह ज्ञान सब विद्याओंका राजा तथा सब गोपनीयोंका भी राजा है एवं अति पवित्र, उत्तम, प्रत्यक्ष फलवाला और धर्मयुक्त है, साधन करनेको बड़ा सुगम और अविनाशी है।

भगवान् अर्जुनसे कहते हैं तू मेरा अतिशय प्यारा है इसलिये कहता हूँ। नहीं तो भगवान्‌को क्या पड़ी थी। कैसा भी पापी हो, जिस प्रकार साबुन मैले-से-मैले कपड़ेको साफ कर देता है उसी प्रकार ज्ञानमें भी इतनी शक्ति है कि वह पापियोंको भी पवित्र कर डालता है। फल भी प्रत्यक्ष होता है जिस प्रकार भोजनसे क्षुधा निवृत्ति होती है, जलसे प्यासकी निवृत्ति होती है। यह भूख-प्यासकी निवृत्ति तो एक बार होती है फिर वापिस आवश्यकता हो जाती है किन्तु यह अविनाशी है। इसके वास्ते परिश्रम भी नहीं करना पड़ता। कठिन मानते हैं यह मूर्खता है। हमें भगवान्‌के वचनोंपर विश्वास करके इसमें लग जाना चाहिये और यह निश्चय कर लेना चाहिये कि या तो भगवान्‌को प्राप्त ही करेंगे नहीं तो प्राण छोड़कर मर मिटेंगे।

(यह लेख पेड नं. 42 पृष्ठ संख्या 86 से 90 तक से लिया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

॥ श्रीहरिः ॥

चेतावनी

(प्रवचन नं. 17) स्वर्गाश्रम, वटवृक्ष
आषाढ़ कृ. 8-9 संवत् 2001
बुधवार सन् 1944

जितने जो सुन्दर-सुन्दर शरीर हैं इन सबकी एक दिन खाक या मिट्टी होनेवाली है। आज यदि मृत्यु हो जाय तो आज ही खाक है। और उस खाकको फिर कोई छुवेगा भी नहीं। अपना हाड़-मांस है और भी जो कुछ है सबकी भस्मी हो जायेगी, कोई चीज काम नहीं आवेगी। इसलिये जब तक इसकी भस्मी न हो तब तक इससे खूब काम लेना चाहिये। अभी तो इसको बढ़िया-से-बढ़िया काममें लिया जा सकता है। हजारों बार अपने शरीरकी खाक हुई है, इस शरीरकी भी होनेवाली है। ऐसा सुन्दर शरीर, ऐसा दामी शरीर, लाख रुपया देनेपर भी नहीं मिल सकता, जिसकी भस्मी होनेवाली है। कितनी मूर्खता है जो इससे काम न लिया जाय। मरनेके बाद इसका कोई दाम नहीं, इसे कोई घरमें रखेगा ही नहीं। इसलिये इस शरीरसे खूब काम लेना चाहिये। यही बुद्धिमानी है। पूरे दिनकी भाड़ेकी मोटर होती है और उसे भाड़ा दे दिया गया, तो अब उससे खूब काम लो। जो उससे काम नहीं लेता, वह मूर्ख है। जैसे किसी खेतमें धातु है और उसे एक सालके लिये ठेकेपर ले लिया, अब उसमेंसे जितना धातु निकाल लिया जाय वही अपना है, एक साल बाद तो अपना अधिकार रहेगा नहीं। इसी प्रकार जब तक यह शरीर है इससे खूब काम लेना चाहिये। इसमें भी भगवान्‌का भजन-ध्यान-सत्संग करना बहुत दामी है। रत्न भी इसके सामने कोई मुकाबलेकी चीज नहीं है, इसलिये इस शरीरसे लाभ उठाना चाहिये। ऐसा लाभ उठावे कि सदाके लिये सुखी हो जावें। वर्तमानमें तो हम रात-दिन जल रहे हैं उबलते हुए तेलमें जैसे

बड़ा (पकोड़ा) पसीजता है इस तरह पसीजते रहते हैं। इस दुःख, चिन्ता, भय, शोकको सदाके लिये दूर करना चाहिये। ईश्वरने जब हमें बुद्धि, विवेक, ज्ञान दिया है तब उससे लाभ उठाना चाहिये। हम महान् दुःखी हो रहे हैं इसका तो अत्यन्त अभाव कर देना चाहिये। जो बात बीत गई सो बीत गई आनेवाले दुःखका तो अभाव कर देना चाहिये और यह हो सकता है। मनुष्य शरीरमें भी दुःख क्यों होता है? मूर्खतासे। मूर्खता है, अज्ञानसे। अज्ञानका नाश होता है ज्ञानसे और ज्ञान होता है अन्तःकरण शुद्ध होनेसे। इसलिये हमलोगोंको भजन-ध्यान-सत्संग करना चाहिये जिससे अन्तःकरण शुद्ध हो। भगवान् गीताजीमें कहते हैं—

कायेन मनसा बुद्ध्या केवलैरिन्द्रियैरपि ।
योगिनः कर्म कुर्वन्ति सङ्गं त्यक्त्वात्मशुद्धये ॥

(गीता ५/११)

अर्थात्— निष्काम कर्मयोगी ममत्वबुद्धिरहित केवल इन्द्रिय, मन, बुद्धि और शरीरद्वारा भी आसक्तिको त्याग कर अन्तःकरणकी शुद्धिके लिये कर्म करते हैं।

वे आसक्तिको त्यागकर निष्कामभावसे कर्म करते हैं। जिससे उन्हें शाश्वत शान्ति मिलती है। शान्ति मिलती है निष्काम कर्म करनेसे या ईश्वरके भजनसे।

युक्तः कर्मफलं त्यक्त्वा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम् ।

(गीता ५/१२)

अर्थात्— निष्काम कर्मयोगी कर्मोंके फलको परमेश्वरके अर्पण करके भगवत्प्राप्तिरूप शान्तिको प्राप्त होता है।

फिर भगवान् कहते हैं—

विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः ।
निर्ममो निरहंकारः स शान्तिमधिगच्छति ॥

(गीता २/७१)

अर्थात्— जो पुरुष सम्पूर्ण कामनाओंको त्यागकर ममतारहित

और अहंकाररहित स्पृहारहित हुआ बर्तता है, वह शान्तिको प्राप्त होता है।

जो आदमी सम्पूर्ण कामना, ममता, अहंकारको त्यागकर विचरता है, वह शान्तिको प्राप्त हो जाता है। यदि आपको नित्य शान्ति, परम आनन्दकी आवश्यकता है तो सबसे प्रेम हटाकर भगवान्में प्रेम करो, यही सरल उपाय है।

कीर्तन- नारायण नारायण नारायण श्रीमन्ननारायण नारायण नारायण...........

जैसे हमने यहाँ कीर्तनकी धुन लगाई इसी तरह मरनेवाले आदमीके पास लगानी चाहिये। वह नारायणका ध्यान करता-करता मर जाय तो उसका बेड़ा पार है। भगवान्ने गीताजीमें कहा है—

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् ।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥

(गीता ८/५)

अर्थात्— जो पुरुष अन्तकालमें मेरेको ही स्मरण करता हुआ शरीरको त्याग कर जाता है, वह मेरे साक्षात् स्वरूपको प्राप्त होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

मरनेके बाद और मरनेके समय यह प्रबन्ध तो करना ही चाहिये। छोटा मरे चाहे बड़ा। इस तरह कीर्तन सुनते हुए मरना ही सराहने लायक है। जिस प्रकार भीष्मजी गंगा किनारे मरे (यानी शरीर छोड़ा) तो यह बड़े आनन्दकी बात है।

मरनेके वक्त बाहरके प्रयत्नमें सबसे बढ़कर यही है कि मरणासन्न व्यक्तिको भगवान्के नामका कीर्तन सुनावे या गीताजी सुनावे। उसका स्वतः भगवान्में, भगवन्नाम या गीताजीमें ध्यान हो वह तो फायदेकी चीज है ही। नारायणका नाम श्रवण करता हुआ मृत्युको प्राप्त हो जाय तो बेड़ा पार, यह बात संक्षेपमें कह दी।

(यह लेख पेड़ नं. 73 पृष्ठ संख्या 31, 32 से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

॥ श्रीहरिः ॥

भगवान्‌के चिन्तनका महत्त्व

(प्रवचन नं. 18) स्वर्गाश्रम, वटवृक्ष दोपहरको
आषाढ़ सुदी 2 संवत् 2001, सन् 1944

भजन-ध्यान-सेवा यह खेती है, इन्हें सींचना चाहिये। इसकी सिंचाई होती है सत्संग-रूपी जलसे। सत्संग नहीं मिले तो साधक पुरुषोंका संग करना चाहिये, वह भी नहीं मिले तो गीता, रामायण आदि शास्त्रोंका स्वाध्याय करना चाहिये, इससे भी खेती हरी-भरी रह सकती है।

स्वामीजी रामसुखदासजीने कहा आगेके लिये साधन बना रहे, उसके लिये बात बताइये। उसके लिये एक बात है। बात है बहुत दामी, हम समझ लें कि मृत्युका कोई भरोसा नहीं है, न मालूम कब मृत्यु हो जाय, मृत्युके समय भगवान्‌की स्मृति नहीं रही तो निश्चय दुर्गति है। पता नहीं कब मृत्यु आ जाय। इसलिये हमें हर समय भगवान्‌का चिन्तन करना चाहिये। चाहे हमारे प्राण चले जायँ किन्तु हम भगवान्‌को नहीं भूलें। निरन्तर जो भगवान्‌का भजन-ध्यान है उसके लिये गीताजीमें बताया है—

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥

(गीता ८/१४)

अर्थात्— हे अर्जुन ! जो पुरुष मेरेमें अनन्यचित्तसे स्थित हुआ, सदा ही निरन्तर मेरेको स्मरण करता है, उस निरन्तर मेरेमें युक्त हुए योगीके लिये मैं सुलभ हूँ अर्थात् सहज ही प्राप्त हो जाता हूँ।

नित्य निरन्तर भगवान्‌का स्मरण है, इससे भगवान् सुलभ हैं। भगवान् मिल गये तो जीवन सफल हो गया। पहली बात तो यह है कि शरीरका भरोसा नहीं, यदि भगवान्‌के भजन-ध्यानके बिना शरीर छूट गया तो पता नहीं कहाँ तक पतन हो सकता है। इसके लिये गीताजीमें बताया है—

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् ।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ॥

(गीता ८/६)

अर्थात्— हे कुन्तीपुत्र अर्जुन ! यह मनुष्य अन्तकालमें जिस-जिस भी भावको स्मरण करता हुआ शरीरको त्यागता है, उस उसको ही प्राप्त होता है, क्योंकि सदा जिस भावका चिन्तन करता है, अन्तकालमें भी प्रायः उसीका स्मरण होता है।

आप सोचो यदि हमें अन्त-समयमें पशुकी स्मृति हो गई तो पशु ही बन जायेंगे, जैसे जड़-भरत मुनि हिरण बन गये। अन्त-समयका पता नहीं इसलिये दूसरी चीजको मौका दें ही नहीं।

गोकुलचन्द नामका एक भाई बीमार था, आज उसकी मृत्यु हो गई। पच्चीस-तीस हजार रुपयेका उसके पास सामान और रुपया आदि था, पुलिस उठाकर ले गई। यदि वह जीते-जी रुपयोंको अच्छे काममें लगा देता तो कितना उपकार होता। यही दशा तो सबकी होनेवाली है। इसलिये जबतक मृत्यु दूर है, तबतक जो करना हो कर लेना चाहिये।

यह रुपया और शरीर तो जानेवाली चीज है ही, जिनके साथ संयोग है उनका वियोग होनेवाला ही है फिर इन्हें क्यों पकड़ना चाहिये। तुम्हारा तो परमात्माको छोड़कर और कोई नहीं है। स्त्री, पुत्र आदि तो तुम्हें त्यागनेवाले हैं। उत्तम बात तो यह है कि तुम पहले ही

इन्हें त्याग दो। आप लाख उपाय करो, कुछ भी आपके साथ जानेका नहीं है। यह शरीर भी आपके साथ जानेका नहीं। मरना अवश्य पड़ेगा, लाख उपाय करो तो भी शरीर रहनेका नहीं है। इसलिये शरीरसे तथा ऐश्वर्य (प्राप्त वस्तुओं)-से खूब काम लेना चाहिये, जब तक आपका अधिकार है तब तक लाभ उठा लेना चाहिये। यही बुद्धिमानी है। आपको पश्चात्ताप न करना पड़े, अन्तसमयमें रोना नहीं पड़े, जैसे वह भाई गोकुलचन्द गया। कुछ नहीं केवल भगवान्‌का स्मरण करे। भगवान्‌की अपने ऊपर दया समझकर भगवान्‌को याद रखें, प्रभुको मत बिसारो, उनको अपने लक्ष्यमें रखो, फिर बेड़ा पार है।

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् ।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥

(गीता ८/५)

अर्थात्– जो पुरुष अन्तकालमें मेरेको ही स्मरण करता हुआ शरीरको त्याग कर जाता है, वह मेरे साक्षात् स्वरूपको प्राप्त होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

इसलिये निरन्तर भगवान्‌का भजन करना चाहिये, पता नहीं मृत्यु कब आ जाय। हमलोग खूब राजी खुशी घूम रहे हैं। यदि हैजा हो जाय तो छः घण्टा या बारह घण्टेमें खतम। यह तो स्थिति है हमारी। आप रोक नहीं सकते कि हम हैजा नहीं चाहते। जैसे चूहे घूमते हैं अचानक बिल्ली पकड़ लेती है, इसी प्रकार काल ताक रहा है। वह अचानक आकर पकड़ेगा। इसलिये हमें हरवक्त मृत्युको याद रखना चाहिये। इसी बातको बतानेके लिये नारायण स्वामी कहते हैं–

दो बातनको भूल मत, जो चाहत कल्याण ।
नारायण इक मौतको, दूजे श्रीभगवान ॥

मृत्युको याद रखनेसे एक तो नया पाप नहीं होता और दूसरे

भगवान् याद रहते हैं। आपसे पुण्य कर्म नहीं बने तो न सही, पाप तो मत करिये। और प्रभुको याद रखिये फिर आपके कल्याणमें सन्देह नहीं है।

संत मिलन अरु हरिभक्ति (भजन) दुर्लभ जगमें दोय ।
सुत दारा ओर लक्ष्मी पापीके भी होय ॥

स्त्री, पुत्र सब दुनियाँमें (यानी सब योनियोंमें) होते हैं। दो ही बात दुर्लभ हैं, एक तो सत्संग, दूसरी ईश्वरकी भक्ति। ईश्वरकी भक्तिरूपी खेती सूख रही है, वह सत्संगसे हरी-भरी रहती है। इसलिये हरवक्त प्रफुल्लित रहनेके लिये सत्संग करना चाहिये।

दो बात आपसे बननेमें आवे तो बहुत ही उत्तम है नहीं तो एक ही बात भगवान्‌की स्मृति आप हर समय करिये। इससे सबकुछ हो सकता है। महर्षि पतंजलि भी कहते हैं– भगवान्‌के नामका जप और स्वरूपका ध्यान करना चाहिये, इससे सारे विघ्नोंका नाश हो जाता है। भगवान् गीताजीमें कहते हैं–

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक् ।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः ॥

(गीता ९/३०)

अर्थात्– मेरी भक्तिका प्रभाव सुनकर, यदि कोई अतिशय दुराचारी भी अनन्यभावसे मेरा भक्त हुआ मेरेको निरन्तर भजता है, तो वह साधु ही मानने योग्य है; क्योंकि वह यथार्थ निश्चयवाला है अर्थात् उसने भलीभाँति निश्चय कर लिया है कि परमेश्वरके भजनके समान अन्य कुछ भी नहीं है।

तुलसीदासजी भी कहते हैं–

जबहिं नाम हिरदे धर्‌यो, भयो पापको नास ।
मानौ चिनगी आग की, परी पुरानी घास ॥

निरन्तर भगवान्‌के चिन्तनसे भगवान्‌की प्राप्ति अवश्य हो जाती है। अन्तकालमें तो हो ही जाती है। पहले भी हो सकती है। अपने तो पुकार लगानी चाहिये। पुकार हो प्रेमकी। **केशव केशव कूकिये ना कूकिये असार**। यह तो सामान्य बात बताई, अब विशेष बात बताई जाती है–

हमें अपने घर जाकर सबके साथ प्रेमका व्यवहार करना चाहिये। एक ही बात है स्वार्थका त्याग करना चाहिये। स्वार्थ त्याग करनेसे प्रेम होता है। स्वार्थ त्याग ऐसी चीज है जो दूसरोंको आकर्षित करनेवाली है। यह मोहनी मंत्र है, इसमें दूसरोंको वशमें करनेकी अलौकिक शक्ति है। स्वार्थ त्यागसे आपही प्रेम होता है। यह बात हमें सीखनी चाहिये, इससे अलौकिक लाभ है। जब तक आपकी भोग और आराममें बुद्धि रहेगी तब तक आपका उद्धार हो ही नहीं सकता। भोग और आराम जब तक आप चाहते रहेंगे, आप ईश्वरसे दूर रहेंगे। **आज तक आपको परमात्माकी प्राप्ति नहीं हुई, इसके जड़में प्रधान कारण भोग और आराम है।** परमात्माकी प्राप्तिमें विघ्न है तो ये ही है। साधनमें रुकावट है तो इसीसे है। प्रेममें कमी है तो इसीसे है। इसलिये यदि परमात्माकी प्राप्तिकी आवश्कता है तो इन्हें छोड़ना चाहिये। मन तो एक है चाहे परमात्मामें लगाओ, चाहे विषयोंमें।

कबीरा मन तो एक है, भावे जहाँ लगाय ।
भावै हरिकी भक्ति कर, भावै विषय कमाय ॥

चाहे जिस प्रकार हो आपको मन परमात्मामें लगाना चाहिये। मनको परमात्मामें लगाना ही होगा।

मन फुरना से रहित कर जौ न विधी से होय ।
चाहे भक्ति कर चाहे योग कर ॥

इस समय योग और ज्ञानमार्ग कठिन हैं। इसलिये भक्ति करनेकी

बात कही जाती है। ईश्वरके प्रेममें पागल हो जाना चाहिये। फिर देखो मजा। भोग और ऐश्वर्यमें जो आपको आनन्द प्रतीत होता है उससे लाखों गुणा ज्यादा आनन्द वैराग्यमें है। और जब आगे बढ़ जाता है तो संसारसे उपरति हो जाती है, तब और भी आनन्द अधिक हो जाता है। और जब परमात्माका ध्यान होता है उस सुखकी तो जाति ही दूसरी है। जब परमात्मा प्राप्त हो जाते हैं उस सुखकी तो बात ही क्या है। परमात्माकी प्राप्ति कठिन भी नहीं है। भगवान् कहते हैं–

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया ।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥

(गीता ७/१४)

अर्थात्– क्योंकि यह अलौकिक अर्थात् अति अद्‌भुत त्रिगुणमयी मेरी योगमाया बड़ी दुस्तर है, परन्तु जो पुरुष मेरेको ही निरन्तर भजते हैं, वे इस मायाको उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् संसारसे तर जाते हैं।

इसलिये हमें लाख काम छोड़कर वही काम करना चाहिये, जिसके लिये हमें मनुष्य शरीर मिला है। संसारमें ऐसा कोई काम नहीं जो हमने नहीं किया, किन्तु हमने परमात्माकी प्राप्ति अभी तक नहीं की, यह काम करना है। मनुष्यका शरीर पाकर विषयोंमें मन देना तो मूर्खता है।

नर तनु पाइ बिषयँ मन देहीं । पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं ॥

(रा.च.मा.उ. ४४/१)

परमात्मा अमृत है, विषय भोग विष है। विष खानेसे तो खानेवाला एक बार ही मरता है, विषय भोगरूपी विषको खानेसे बार-बार जन्मता मरता ही रहता है। इसलिये अमृतरूपी परमात्माका सेवन करना चाहिये। यही प्रधान बात है। और यहाँसे (यानी गंगा किनारेसे) जाकर घरपर नित्य प्रति स्नानादि करके सन्ध्या, गीतापाठ

तथा भगवान्‌का ध्यान करना चाहिये। तथा भगवान्‌की मानसिक पूजा करनी चाहिये। साकार या निराकार कोई-सा भी ध्यान करना चाहिये। प्रातःकाल-सायंकाल ध्यान सहित नाम-जप करना तथा हरवक्त भगवान्‌को याद रखते हुए ही काम करना चाहिये। भजन-ध्यानकी खुराक बना लेनी चाहिये। अपने मनमें निश्चय कर लेना चाहिये कि हम भगवान्‌का भजन-ध्यान करेंगे, चाहे प्राण भले ही चले जायँ। ध्यानके लिये प्रातःकाल और सायंकालका समय बड़ा उत्तम है। यहाँका (यानी गंगाजीके किनारेका) चित्र याद करलें तो हमारे चित्तमें वैराग्य उत्पन्न हो सकता है। भजन-ध्यान खूब श्रद्धा और प्रेमसे करें। मनुष्य प्रेमसे विह्वल होकर थोड़ा भी भजन करता है तो भगवान् प्रसन्न हो जाते हैं। इसी प्रकार संध्या और गायत्रीजप प्रेम सहित करना चाहिये।

लोग सन्ध्या गायत्रीका जप करते हैं और मन कहीं घूमता है, इसलिये आपको परमात्माकी प्राप्ति नहीं हो रही है। सूर्य साक्षात् परमात्मा हैं। परमात्माके दर्शनसे जो हमें शान्ति, आनन्द हो उसी आनन्दका अनुभव हमें सूर्यके दर्शनसे हो। करना कुछ नहीं है भाव बदलना है। घरमें पारस पड़ा है, उसे पत्थर समझ रखा है इसलिये भूखे मरते हैं। किसी महात्माने वह पारस पत्थर देखा और उससे कहा तू सारे संसारको धनी बना सकता है। वे महात्मा घरमें गये और जाकर देखा कि एक पत्थर पड़ा है, पूछा यह क्या है? उसने कहा—इससे मैं चटनी बाँटता हूँ, यह पत्थर है। महात्माने कहा—हम इसे पत्थर नहीं मानते, यह तो पारस है, तुम्हारे घरमें लोहा हो तो लाओ। वह लाता है, महात्माने उस पत्थरको उस लोहेसे छुवाया, तो वह लोहा सोना हो गया। अब क्या उससे हम चटनी बाँटेंगे? इतने दिन दरिद्रता भोग रहे थे, वह मूर्खता ही थी। वही बात हममें है, हमारे भीतर परमात्मा हैं, किन्तु हम उन्हें मानते नहीं। कोई महात्मा आकर बता दे तो काम हो

जाय। गीताजीमें भगवान् कहते हैं—

सर्वस्य चाहं हृदि संनिविष्टो मत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च ।
वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यो वेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम् ॥

(गीता १५/१५)

अर्थात्— मैं ही सब प्राणियोंके हृदयमें अन्तर्यामीरूपसे स्थित हूँ तथा मेरेसे ही स्मृति, ज्ञान और अपोहन होता है और सब वेदोंद्वारा मैं ही जाननेयोग्य हूँ तथा वेदान्तका कर्ता और वेदोंका जाननेवाला भी मैं ही हूँ।

आपके हृदयमें ज्ञान है, यह क्या है? परमात्माका स्वरूप है। हमें नियम पूर्वक बड़े आदरसे भजन-ध्यान करना चाहिये। लाख काम छोड़कर हमें यह काम करना चाहिये।

भगवान्‌के भक्त कभी हँसते हैं, कभी रोते हैं, कभी नाचते हैं। भगवान्‌की दयाकी तरफ और उनके गुण-प्रभावकी तरफ जब भक्तकी दृष्टि जाती है तब हँसते हैं। जब अपने पापोंकी तरफ वृत्ति चली जाती है तब रोते हैं। और वे समझते हैं- **प्रभो !** मैं तो बड़ा पापी हूँ, क्या मेरा भी कल्याण हो सकता है? भगवान्‌के यहाँ तो सभीकी ही दाल गलती है। भगवान् केवल प्रेमियोंका ही उद्धार करें यह बात नहीं, वे तो दीनबन्धु हैं, पतित पावन हैं।

जो ऐसा समझता है- भगवान् न्यायकारी हैं, दयालु नहीं हैं उसके लिये भगवान् न्यायकारी ही हैं। जो समझता है न्यायकारी तो हैं ही, दयालु भी हैं उसका काम जल्दी ही हो जाता है। हमें समझना चाहिये भगवान् बड़े दयालु हैं फिर चिन्ता, भय, शोक जाते रहते हैं। हमें भगवान्‌के नामका कीर्तन करना चाहिये। कभी-कभी भगवान्‌के गुण, प्रभाव, रहस्यको समझकर प्रफुल्लित होना चाहिये। भगवान्‌की दयाका दिग्दर्शन कर प्रसन्न होना चाहिये, समझना चाहिये हमारे ऊपर

कैसी भगवान्‌की दया है !

जापर कृपा राम की होई । तापर कृपा करई सब कोई ॥

भगवान् रामकी जिसपर कृपा होती है उसपर सब कृपा करते हैं।

हमें जो भी सुख-दु:ख प्राप्त हो रहा है और होता है उसमें भगवान्‌की दया भरी है। इसलिये हर समय प्रभुकी दयाका दर्शन करें। जो कुछ परेच्छा या अनिच्छासे होता है वह भगवान्‌का ही प्रसाद है, पुरस्कार है। जो भगवान्‌के प्रेममें मस्त रहता है वह सारे ऐश्वर्यको लात मार देता है। हमें तो यह लक्ष्य रखना चाहिये कि हम ऐसे बनें कि हमारे दर्शन, भाषणसे लोगोंका कल्याण हो जाय। हमें ऐसा ही भाव रखना चाहिये। अपनी आत्माका कल्याण क्या बड़ी बात है ! हम तो अपना यही मत रखें कि सबका कल्याण हो। हमलोग कितनी बार इन्द्र हो गये, किन्तु अब तक परमात्माकी प्राप्ति नहीं हुई। इसलिये सब बातको छोड़कर भगवान्‌को याद रखना चाहिये। यह सब साधनोंका मूल है। यह नहीं हो तो भगवान्‌के नामकी रटन ही करो।

राम नाम जपते रहो, जब लगि घटमें प्रान ।
कबहुँक दीनदयालके, भनक परैगी कान ॥

बस रात-दिन दूसरा काम ही क्या करना है। जबतक देहमें प्राण हैं यही करना है।

काल भजन्ता आज भज, आज भजन्ता अब ।
पलमें प्रलय होयगी, बहुरि भजेगा कब ॥

इन सब बातोंका ख्याल करके भगवान्‌के नामकी रटन लगानी चाहिये। वाणीसे भगवान्‌के नामका जप, मनसे ध्यान, बुद्धिसे उस परमात्माका निश्चय करें। जब आपको यह निश्चय हो जाय कि भगवान् सब जगह हैं तब आपसे पाप नहीं बनेगा। जैसे गवर्नमेन्टकी यहाँ सत्ता है तो हम उसके विरुद्ध कुछ बोल नहीं सकते। गवर्नमेन्टकी

तो वह शक्ति भी नहीं है, पर परमात्मा तो सर्वत्र हैं और सर्व समर्थ हैं। इसलिये हमें हर समय भगवान्‌का चिन्तन करना चाहिये। सर्वत्र, सर्वदा भगवान्‌को देखना चाहिये। यह सार बात आपको बतलाई।

व्याख्यान सुनते समय गौरसे सुनना चाहिये और यह समझना चाहिये कि अपनेको व्याख्यानकी बातें काममें लानी है; और इस उद्देश्यसे सुनना चाहिये कि इसका प्रचार करना है। सुनकर प्रचार करे ; फिर देखो कितना लाभ होता है।

घरपर जाकर रोज पुस्तक पढ़े। एक आदमी पढ़े और सब सुनें। शहरमें जो अपने मित्र हों उनमें प्रचार करना चाहिये। स्कूल, लाइब्रेरियोंमें प्रचार करना चाहिये। ऐसा करनेपर थोड़े समयमें ही आपकी उन्नति हो सकती है। ऐसा मौका आपको बार-बार मिलनेका नहीं। प्रथम तो मनुष्य शरीर मिलनेका नहीं, क्योंकि असंख्य जीव हैं, भगवान् उन्हें भी तो मौका देंगे। मनुष्यका शरीर बड़ा दुर्लभ है, उसमें भी दुर्लभ है सत्पुरुषोंका संग। उनका मिलना ही कठिन है। मिल गये तो पहचाने नहीं जा सकते। समय जा रहा है, बातों बातोंमें ही १.३० घण्टा चला गया, कबीरदासजीने कहा है—

कबीरा नौबत आपनी दिन दस लेहु बजाइ ।
ए पुर पट्टन ए गली बहुरि न देखहु आइ ॥
आज कि काल्हि कि पाँच दिन जंगल होगा बास ।
ऊपरि ऊपरि हल फिरै ढोर चरेंगे घास ॥
मरेंगे मर जायँगे, कोई न लेगा नाम ।
ऊजड़ जाय बसायँगे, छोड़ बसंता गाम ॥

आप जंगलमें वास करोगे, आपको श्मशानमें ले जाकर लोग जला कर खाक कर देंगे।

हाड़ जलै ज्यूँ लाकड़ी केस जलैं ज्यूँ घास ।
सब जग जलता देखि करि भया कबीर उदास ॥

जैसे लकड़ियाँ जलती हैं ऐसे ही तुम्हारी हड्डियाँ जलेंगी और जैसे घास जलती है ऐसे ही केश जलेंगे।

चलती चाकी देखिके, दिया कबीरा रोय ।
दो पाटनके बीचमें, साबित रहा न कोय ॥

कालकी चक्की चल रही है सबका नम्बर लग रहा है। आपका भी नम्बर है। समय तो बीत रहा है अब समय कहाँ है? आयुकी तरफ देखे तो समयका क्या विश्वास है? अब कूच नगारा बजता है, चलनेकी फिकर करो बाबा ! जिस प्रकार अब यहाँ से गाँव चलनेकी तैयारी कर रहे हैं, उसी प्रकार वहाँकी भी तैयारी रखनी चाहिये। टिकट कटाकर तैयार रहना चाहिये। टिकट कटाकर तैयार रहना क्या है? भगवान्‌को प्राप्त कर लेना।

ऐसा मूल्यवान मनुष्य शरीर देकर भगवान् कहते हैं- मुझे भजो। लाख रुपया खर्च करनेपर भी एक मिनट और नहीं जी सकते हैं। आपके लाख काम पड़े हैं, पड़े ही रह जायेंगे। जमके दूत आवेंगे तो वे रुकेंगे नहीं। सिपाही लोग वारन्ट लेकर आते हैं, वे घूस लेकर समय दे सकते हैं किन्तु वहाँ घूस नहीं चलती। जब ऐसी परिस्थिति है तब हमें सावधान रहना चाहिये। इस घोर कलिकालमें भगवान्‌की भक्तिके समान कोई उपाय नहीं। भगवान्‌की भक्तिमें, भगवान्‌की स्मृतिके समान कोई उपाय नहीं है। इसलिये भगवान्‌को कभी न भुलावें। हरवक्त समझें भगवान् हमारे साथ हैं। या निराकार रूपसे सब जगह हैं। जर्रे-जर्रेमें हैं और वे प्रेमसे प्रकट होते हैं। प्रेमका सरल उपाय यही है परमात्माके नामका जप, स्वरूपका ध्यान और अच्छे पुरुषोंका संग, तीनों ही हों तब तो बात ही क्या है। एक-एकसे भी काम हो

सकता है।

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते ।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

(गीता ९/२२)

अर्थात्– जो अनन्यभावसे मेरेमें स्थित हुए भक्तजन मुझ परमेश्वरको निरन्तर चिन्तन करते हुए, निष्काम भावसे भजते हैं, उन नित्य एकीभावसे मेरेमें स्थितिवाले पुरुषोंका योगक्षेम मैं स्वयम् प्राप्त कर देता हूँ।

तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात् ।
भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ॥

(गीता १२/७)

अर्थात्– हे अर्जुन ! उन मेरेमें चित्तको लगानेवाले प्रेमी भक्तोंका मैं शीघ्र ही मृत्युरूप संसार समुद्रसे उद्धार करनेवाला होता हूँ।

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय ।
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः ॥

(गीता १२/८)

अर्थात्– इसलिये हे अर्जुन ! तू मेरेमें मनको लगा और मेरेमें ही बुद्धिको लगा, इसके उपरान्त तू मेरेमें ही निवास करेगा, अर्थात् मेरेको ही प्राप्त होगा, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

हमें समझ लेना चाहिये भगवान्‌ने अर्जुनको निमित्त बनाकर हम सबके लिये गीताजीका उपदेश दिया है। गीताजीका यह सार है सबसे हेतु रहित प्रेम करना। तुलसीदासजी कहते हैं–हेतु रहित प्रेम करनेवाले दो ही हैं एक भगवान्; दूसरे भगवान्‌के प्यारे प्रेमी भक्त।

स्वारथ मीत सकल जग माहीं । सपनेहुँ प्रभु परमारथ नाहीं ॥

(रा.च.मा.उत्तर ४७/३)

अर्थ– जगत्‌में [शेष] सभी स्वार्थके मित्र हैं। हे प्रभो ! उनमें स्वप्नमें भी परमार्थका भाव नहीं है।

सुर नर मुनि सब कै यह रीती । स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती ॥

(रा.च.मा.किष्किन्धाकाण्ड १२/१)

अर्थ– देवता, मनुष्य और मुनि सबकी यह रीति है कि स्वार्थके लिये ही सब प्रीति करते हैं।

हेतु रहित जग जुग उपकारी । तुम्ह तुम्हार सेवक असुरारी ॥

(रा.च.मा.उत्तर ४७/३)

अर्थ– हे असुरोंके शत्रु ! जगत्‌में बिना हेतुके (निःस्वार्थ) उपकार करनेवाले तो दो ही हैं–एक आप, दूसरे आपके सेवक।

यह सब सोचकर हमें सबके साथ स्वार्थ त्यागकर प्रेम करना चाहिये। फिर आप दमक उठेंगे। जिस प्रकार पतिव्रता स्त्री पतिकी सेवा करके भगवान्‌को प्राप्त हो जाती है, इसी प्रकार हम जनता-जनार्दनकी सेवा करके परमात्माको प्राप्त हो जायेंगे।

कैसा ही कोई मूर्ख-से-मूर्ख हो, पापी-से-पापी हो उसको भी परमात्माकी प्राप्ति हो सकती है। यदि हमें गीताजी पर विश्वास है, महात्माओं पर विश्वास है तो हर समय भगवान्‌का चिन्तन करना चाहिये। कैसा ही कोई पापी है आज ही उसका कल्याण हो सकता है। बस एक ही बात है आजसे जब तक वह रहे तब तक भगवान्‌को याद रखे।

केवल सत्संगसे कल्याण हो सकता है। इसके लिये भगवान् गीताजीमें कहते हैं–

अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वान्येभ्य उपासते ।
तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः ॥

(गीता १३/२५)

अर्थात्– जो मन्दबुद्धिवाले पुरुष हैं वे स्वयं इस प्रकार न जानते हुए, दूसरोंसे अर्थात् तत्त्वके जाननेवाले पुरुषोंसे सुनकर ही

उपासना करते हैं, अर्थात् उन पुरुषोंके कहनेके अनुसार ही श्रद्धासहित तत्पर हुए साधन करते हैं और वे सुननेके परायण हुए पुरुष भी मृत्युरूप संसारसागरको निःसन्देह तर जाते हैं।

ज्ञानयोग, ध्यानयोग, कर्मयोगसे तो कल्याण होता ही है, किन्तु जिसमें विवेक नहीं है ऐसा पुरुष भी जो जाननेवाले पुरुष हैं उनके पास जाकर सुनता है और सुनकर यथायोग्य आचरण करता है, उसका भी कल्याण हो जाता है। इसी प्रकार केवल भगवान्‌के नामजपसे भी कल्याण हो जाता है। और कैसा भी कोई पापी हो उसका सत्संगसे तो कल्याण हो ही जाता है। तुलसीदासजी कहते हैं–

तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग ।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सत्संग ॥

(रा.च.मा.सुन्दरकाण्ड-४)

अर्थ– हे तात ! स्वर्ग और मोक्षके सब सुखोंको तराजूके एक पलड़ेमें रखा जाय, तो भी वे सब मिलकर [दूसरे पलड़ेपर रखे हुए] उस सुखके बराबर नहीं हो सकते, जो लव (क्षण) मात्रके सत्संगसे होता है।

और क्या कहते हैं तुलसीदासजी–

बिनु सतसंग न हरि कथा तेहि बिनु मोह न भाग ।
मोह गएँ बिनु राम पद होइ न दृढ़ अनुराग ॥

(रा.च.मा.उत्तरकाण्ड-६१)

अर्थ– सत्संगके बिना हरिकी कथा सुननेको नहीं मिलती, उसके बिना मोह नहीं भागता और मोहके गये बिना श्रीरामचन्द्रजीके चरणोंमें दृढ़ (अचल) प्रेम नहीं होता।

सब प्रकारसे यही बात सिद्ध होती है कि सत्संग करना चाहिये। तुलसीदासजी और भी कहते हैं–

पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न संता । सतसंगति संसृति कर अंता ॥

(रा.च.मा.उत्तरकाण्ड-४५/३)

अर्थ– और पुण्यसमूहके बिना संत नहीं मिलते। सत्संगति ही संसृति (जन्म-मरणके चक्र) का अन्त करती है।

इसी प्रकारसे नामकी महिमा है। नामका तो ऐसा प्रभाव है कि उससे पापी-से-पापी भी तर जाते हैं।

अपतु अजामिलु गजु गनिकाऊ । भए मुकुत हरि नाम प्रभाऊ ॥

(रा.च.मा.बालकाण्ड-२६/४)

अर्थ– नीच अजामिल, गज और गणिका (वेश्या) भी श्रीहरिके नामके प्रभावसे मुक्त हो गये।

भगवान्‌के नामका प्रभाव देखो, कैसा अद्‌भुत प्रभाव है। ऐसा नाम रहते हुए हमें दु:खरूप शरीरमें फिर आना पड़े यह बड़ी लज्जाकी बात है। नामकी कैसी महिमा गाई है। तुलसीदासजी कहते हैं–

कहौं कहाँ लगि नाम बड़ाई । रामु न सकहिं नाम गुन गाई ॥

(रा.च.मा.बालकाण्ड-२६/४)

अर्थ– मैं नामकी बड़ाई कहाँतक कहूँ, (स्वयं) राम भी नामके गुणोंको नहीं गा सकते।

तुलसीदासजीने तो यहाँ तक कह दिया नाम-रामसे भी बढ़कर है।

राम एक तापस तिय तारी । नाम कोटि खल कुमति सुधारी ॥

(रा.च.मा.बालकाण्ड-२४/२)

अर्थ– श्रीरामजीने एक तपस्वीकी स्त्री (अहिल्या) को ही तारा, परन्तु नामने करोड़ों दुष्टोंकी बिगड़ी बुद्धिको सुधार दिया।

भगवान्‌के भजनसे ही कल्याण हो जाता है। फिर भगवान्‌का ध्यान भी साथमें रहे तो बात ही क्या है ! और सत्संग मिलता रहे तो भजन-ध्यान तेजीके साथ होते हैं। इसलिये हमें कटिबद्ध होकर साधन तेजीके साथ करना चाहिये।

(यह लेख पेड नं. 73 पृष्ठ संख्या 87-95 से लिया गया है।)

॥ श्रीहरि: ॥

संसारसे वैराग्य और भगवान्‌में प्रेमके विषयमें

(प्रवचन नं. 19)

वटवृक्षके नीचे
दिनांक 17-05-1945
प्रात:काल 7.30 बजे

वैराग्य यहाँपर स्वाभाविक है ही। यहाँपर वैराग्यवान् पुरुषके द्वारा वैराग्यकी बात कही जावे तो ज्यादा फायदा है। हमें तो भगवान् और महात्माके वचनोंका अनुवाद करना है। भगवत्प्रेमका विषय तो बड़ा गंभीर है, प्रेम कहाँसे लावें? कहीं बिकता हो तो ले आवें?

प्रेम न बाड़ी नीपजे, प्रेम न हाट बिकाय ।

प्रेमका तत्त्व एक नम्बरपर भगवान् जानते हैं। दूसरे नम्बरपर भगवान्‌के जो प्रेमी हैं वे जानते हैं किन्तु वह भी कह नहीं सकते। यह विषय **'मूकास्वादनवत्'** है, प्रेम ऐसी चीज है। संसारसे वैराग्य और भगवान्‌से प्रेम, बात बड़ी अच्छी है। वर्तमानमें हमारा संसारसे प्रेम है और भगवान्‌से वैराग्य है–बात बिलकुल उल्टी है। क्या करना चाहिये? सब बात उलट देनी चाहिये। संसारसे वैराग्य होनेसे उपरामता आप ही हो जाती है। भगवान्‌में प्रेम होनेसे भगवान्‌का ध्यान आपही हो जाता है। यहाँपर वैराग्य आपही होना चाहिये। यहाँका दृश्य–वन, पहाड़ और गंगाजी ये तीनों ही दीखते हैं। यह स्थान पवित्र है तथा यहाँ एकान्त भी है। ध्यानके लिये यह उपयोगी स्थान है। यहाँपर भक्ति, ज्ञान और वैराग्यकी मानो वर्षा हो रही है। ध्यानावस्थामें यदि प्राण जावें तो बेड़ा पार है। कोई भी मृत्युका अवसर प्राप्त हो जावे तो परमात्माके ध्यानमें मस्त हो जावे फिर चाहे प्राण चले जावें। और यदि

उस वक्त हाय-तौबा मचाने लग जावे तो नरकमें जावे।

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।

इस श्लोकके तात्पर्यको खूब याद कर ले। कैसा ही नीच, पापी, नास्तिक क्यों न हो उसका उद्धार हो जाता है। हिचकी, डकार, छींक या कोई भी खटकेकी बात हो तो भगवान्को याद कर लें (यानी उस वक्त भगवान्का नाम लेलें या स्मरण करें)। और हरवक्त मृत्युकी प्रतीक्षा करता रहे। मार्कण्डेय मुनि शिवजीकी उपासना करते थे। यम पाश लेकर आये तो मार्कण्डेयजीने झट शिवलिंगको पकड़ लिया। यमराज अपना मुँह लेकर वापस चला गया। अपने तो **'हारे का हरिनाम'** जब हताश हो जावें तो भगवान्का आश्रय लेना चाहिये। द्रौपदीने चीर हरणके समय भगवान्को याद किया, तो भगवान्ने रक्षा की। अपने तो हरवक्त भगवान्को याद रखें। भगवान्का भी नियम है जो भगवान्को हरवक्त याद रखता है तो भगवान् उसको हरवक्त याद रखते हैं। अपने तो यह होड़ करें (शर्त लगावें) कि कौन हारता है। हरवक्त भगवान्को याद रखें, अभ्यास करें उससे वैराग्य बढ़ जावेगा और वैराग्य बढ़ गया तो अभ्यास आप ही बढ़ेगा। भगवान्के नामका जप करना बहुत सरल काम है। अभ्यास करना आपके हाथकी बात है। जीभसे नामका जप करें। श्वास हरवक्त चलता रहता है उसके द्वारा नाम-जप करें। श्वास मृत्युके समय तक चलता रहता है तो मृत्युके समय नामका स्मरण हो ही जाता है। श्वासके द्वारा नामका जप करें यह सबसे सुगम उपाय है। जिस वक्त वैराग्य हो उसके साथ-साथ उपरति आप ही हो जाती है। संसारसे मनको हटाना उपरति है। भगवान्ने कहा– **''असङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्त्वा''** संसार वृक्षकी मूल (जड़ें) दृढ़ हैं तो शस्त्र भी दृढ़ होना चाहिये। संसारको काटना क्या है? संसारको भुलाना। भुलाना क्या? संसारसे उपराम होना।

परम-उपरति हो जावे तो परम-शान्ति हो जाती है। ध्यानावस्थामें परम-शान्ति पहली सीढ़ी है। **प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः** (गीता ६/१४) ।

समं कायशिरोग्रीवं...... (गीता ६/१३) **अर्थात्–** काया, शिर और ग्रीवाको समान और अचल धारण किये हुए दृढ़ होकर, ऐसे स्थानपर बैठे तो ध्यान आप ही लगता है। संसारका चिन्तन करते हुए मरोगे तो संसारमें फिर जन्म लेना पड़ेगा। जड़-भरतमें बड़े उच्चकोटिका साधन था किन्तु अन्तकालमें हिरणकी स्मृति हो गई, तो हिरण बनना पड़ा। मृत्यु अचानक आ जाती है, इस बातको याद रखते हुए भगवान्को हरवक्त याद रखें। वैराग्यका नशा अलौकिक है, यह मादक नशेकी भाँति नहीं है। यह तो आपको जब प्राप्त होगा तब अनुभव होगा। नशा करे तो वैराग्यका करें, यह सात्त्विक है इससे उपरति होती है और इससे परमात्माका ध्यान आप ही होता है।

(यह लेख पेड नं. 5 पृष्ठ संख्या 81 से 84 तक से लिया गया है)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

॥ श्रीहरिः ॥

एक बार भगवान्‌को प्रणाम करना दस अश्वमेघ यज्ञसे बढ़कर है

(प्रवचन नं. 20) प्रथम वैशाख शु. 6 संवत् 1981
सन्–1924 दोपहर

संसारके ऐश–आराम गिरानेवाले हैं, सबसे बढ़कर उत्तम कार्य करना चाहिये। कलियुगमें सबसे उत्तम कार्य भजन माना गया है। यदि वह निष्कामभावसे किया जावे तो बहुत उत्तम है।

जबहिं नाम हिरदे धर्‌यो, भयो पापको नास ।
मानौ चिनगी आग की, परी पुरानी घास ॥

कलिजुग सम जुग आन नहिं जौं नर कर बिस्वास ।
गाइ राम गुन गन बिमल भव तर बिनहिं प्रयास ॥

(रा.च.मा.उत्तरकाण्ड-१०३)

अर्थ– यदि मनुष्य विश्वास करे, तो कलियुगके समान दूसरा युग नहीं है। [क्योंकि] इस युगमें श्रीरामजीके निर्मल गुणसमूहोंको गा-गाकर मनुष्य बिना ही परिश्रम संसार [रूपी समुद्र] से तर जाता है।

इसलिये हर समय भगवान्‌का भजन ही करना चाहिये।

कलियुग केवल नाम अधारा । सुमिरि सुमिरि नर उतरहिं पारा ॥

नामके जपसे नामी याद आता है और नामीकी स्मृतिसे काम बनता है। भगवान्‌ने कहा–**अन्तकाले च मामेव** एक क्षणमें यानी अन्तमें स्मरण करनेसे कल्याण हो जाता है। तो फिर एक नामसे कल्याण हो जावे तो बात ही क्या है! एक पुरुष अपनी पूरी सम्पत्तिको यज्ञ, दानादि में खर्च करके समाप्त कर चुका और दूसरेने अन्तकालमें भगवान्‌का स्मरण किया है तो उससे वह अन्तकालमें

भगवान्‌का स्मरण करनेवाला बहुत ही उत्तम है। क्योंकि जिसने दानादि किया है वह उनके पुण्य क्षीण होनेपर फिर संसारमें आता है। यह गीताजीमें आया है–

त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापा यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते ।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोकमश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान् ॥

(गीता ९/२०)

अर्थात्– जो तीनों वेदोंमें विधान किये हुए सकाम कर्मोंको करनेवाले और सोमरसको पीनेवाले एवं पापोंसे पवित्र हुए पुरुष मेरेको यज्ञोंके द्वारा पूजकर स्वर्गकी प्राप्ति चाहते हैं, वे पुरुष अपने पुण्योंके फलरूप इन्द्रलोकको प्राप्त होकर स्वर्गमें दिव्य देवताओंके भोगोंको भोगते हैं।

ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति ।
एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना गतागतं कामकामा लभन्ते ॥

(गीता ९/२१)

अर्थात्– और वे उस विशाल स्वर्गलोकको भोगकर, पुण्य क्षीण होनेपर, मृत्युलोकको प्राप्त होते हैं, इस प्रकार स्वर्गके साधनरूप तीनों वेदोंमें कहे हुए सकाम कर्मके शरण हुए और भोगोंकी कामनावाले पुरुष बारंबार जाने-आनेको प्राप्त होते हैं अर्थात् पुण्यके प्रभावसे स्वर्गमें जाते हैं और पुण्य क्षीण होनेसे मृत्युलोकमें आते हैं।

प्रेमसे अन्तसमयमें यानी प्राण जानेके समय जो एक बार भगवान्‌को प्रणाम कर लेता है वह मुक्त हो जाता है। ऐसा दस अश्वमेघ यज्ञसे भी नहीं होता। एक बार भगवान् श्रीकृष्णको प्रणाम करना दस यज्ञ करनेवालेसे बढ़कर है। वह यज्ञ करनेवाला तो वापस आता है, पर भगवान्‌को नमस्कार करनेवाला नहीं लौटता।

जन्म जन्म मुनि जतनु कराहीं । अंत राम कहि आवत नाहीं ॥
जासु नाम बल संकर कासी । देत सबहि सम गति अबिनासी ॥

(रा.च.मा.किष्किन्धाकाण्ड १०/२)

अर्थ– मुनिगण जन्म-जन्ममें (प्रत्येक जन्ममें) [अनेकों प्रकारका] साधन करते रहते हैं। फिर भी अन्तकालमें उन्हें 'राम' नहीं कह आता (उनके मुखसे राम नाम नहीं निकलता)। जिनके नामके बलसे शंकरजी काशीमें सबको समानरूपसे अविनाशिनी गति (मुक्ति) देते हैं।

मम लोचन गोचर सोइ आवा । बहुरि कि प्रभु अस बनिहि बनावा ॥

(रा.च.मा.किष्किन्धाकाण्ड १०/३)

अर्थ– वह श्रीरामजी स्वयं मेरे नेत्रोंके सामने आ गये हैं। हे प्रभो ! ऐसा संयोग क्या फिर कभी बन पड़ेगा?

बाली कहता है मुनि लोग अनेक प्रकारके यज्ञ दानादि करते हैं पर आत्माका उद्धार नहीं होता। अन्तमें राम कहकर जो जाते हैं वे फिर लौटते नहीं। मुनी लोग अनेक प्रकारके यत्न करते हैं। बिना भक्तिके किया हुआ कर्म वापस आनेवाला होता है। ऐसा कौन मूर्ख होगा जो इस मौकेको खोवेगा? बालीने यही कहा महाराज आपके दर्शनके बाद भी मैं क्या पापी रहा ?

सुनहु राम स्वामी सन चल न चातुरी मोरि ।
प्रभु अजहूँ मैं पापी अंतकाल गति तोरि ॥

(रा.च.मा.किष्किन्धाकाण्ड–९)

अर्थ– [बालिने कहा–] हे रामजी ! सुनिये, स्वामी (आप) से मेरी चतुराई नहीं चल सकती। हे प्रभो ! अन्तकालमें आपकी गति (शरण) पाकर मैं अब भी पापी ही रहा क्या?

आपका ध्यान करता हुआ पुरुष भी वापस नहीं आता फिर मैं तो आपका दर्शन करता हूँ।

<u>एक भगवान्‌के नामका त्रिलोकीके राज्यके लिये भी बदला नहीं करना चाहिये।</u> त्रिलोकीका राज्य उसके सामने तुच्छ है। वह भी मूढ़ है जो उसके बदले त्रिलोकीका राज्य लेता है। उसका मूल्य कुछ

नहीं, जो प्रभुके नामका है। भगवान् गीताजीमें कहते हैं, जो मुझको जान लेता है वह फिर सर्व प्रकारसे मुझे ही भजता है।

यो मामेवमसम्मूढो जानाति पुरुषोत्तमम्।
स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत॥

(गीता १५/१९)

अर्थात्– हे भारत ! इस प्रकार तत्त्वसे जो ज्ञानी पुरुष मेरेको पुरुषोत्तम जानता है, वह सर्वज्ञ पुरुष सब प्रकारसे निरन्तर मुझ वासुदेव परमेश्वरको ही भजता है।

जो यह कहता है कि कितना भजन करनेसे भगवान् मिलते हैं, ऐसा कहनेवाला तो भक्त नहीं। भक्त तो यही कहता है कि मैं तो रात-दिन भजन ही करता रहूँ। जो भजनसे छुट्टी चाहता है उसे भगवान्‌से छुट्टी नहीं मिलती, जो प्रभुको दिलमें बसाना चाहता है उसपर भगवान्‌की कृपा होती है। हे प्रभो ! हमारा आपमें अनन्य प्रेम हो, प्रेम नहीं तो आपका चिन्तन ही हो। अत: हमको चलते फिरते प्रभुका चिन्तन करना चाहिये। भगवान्‌के स्मरणके लिये नाम सहायक है, अत: कम-से-कम २१६०० श्वाससे ही मालाके हिसाबसे नाम-जप करना चाहिये (यानी हम दिन भरमें २१६०० श्वास लेते हैं।)। इस हिसाबसे १४ माला ही कम-से-कम **(हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे–हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे)** फेरे। तो इसके लिये विचार करना चाहिये और आजसे ही माला फेरनी चालू कर देनी चाहिये। इस भूमिमें जो साधन-भजन करता है उसका महान् फल होता है। यहाँ दान पात्रके अनुसार दुखियोंको, अनाथोंको देना चाहिये, यज्ञोंमें सबसे बढ़कर जपयज्ञ है, इसलिये जप करना चाहिये। महात्माओंका सत्कार, शास्त्रका अध्ययन, रात-दिन उत्तम कार्य करते रहना चाहिये। पूर्वमें यहाँ लोग आया करते तो केवल उत्तम कार्य ही करते थे। जो समय चला गया वह तो चला गया, अब तो भविष्यका समय

आनन्दमय बना लेना चाहिये। हमलोग मनुष्य हैं यह बात समझ गये फिर भी यदि काम नहीं होवेगा यानी भगवत्प्राप्ति नहीं होवेगी तो पछताना पड़ेगा। तुलसीदासजी कहते हैं–

सो परत्र दुख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताइ ।
कालहि कर्महि ईस्वरहि मिथ्या दोष लगाइ ॥

(रा.च.मा.उत्तरकाण्ड–४३)

अर्थ– वह परलोकमें दुःख पाता है, सिर पीट–पीटकर पछताता है तथा [अपना दोष न समझकर] कालपर, कर्मपर और ईश्वरपर मिथ्या दोष लगाता है।

जो अपने समयको व्यर्थ बितावेगा उसे फिर धुन–धुन पछताना पड़ेगा।

जो न तरै भव सागर नर समाज अस पाइ ।
सो कृत निंदक मंदमति आत्माहन गति जाइ ॥

(रा.च.मा.उत्तरकाण्ड–४४)

अर्थ– जो मनुष्य ऐसे साधन पाकर भी भवसागरसे न तरे, वह कृतघ्न और मन्दबुद्धि है और आत्महत्या करनेवालेकी गतिको प्राप्त होता है।

मुनष्यका शरीर और ऐसी तीर्थ भूमि, उसमें भी भगवत् चर्चा ऐसा मौका लगनेपर भी यदि कल्याण नहीं करेगा तो, वह निन्दाका पात्र, मन्दबुद्धि, आत्म–हत्यारा है। यह सब ख्याल करके अपने समयको एक क्षण भी व्यर्थ नहीं बिताना चाहिये। सबसे उत्तम समय यही है कि भगवान्‌को हर समय याद रखना।

(यह लेख पेड नं. 32, पृष्ठ संख्या 5,6,7 से लिया गया है)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

॥ श्रीहरिः ॥

भगवान् खुद आकर ले जाते हैं

(प्रवचन नं. 21) स्वर्गाश्रम, प्रातःकाल
ज्येष्ठ शु. 5 संवत् 2002

रातको बहुत दामी बातें हुई थी। मनुष्य यह कर ले कि– ''मरनेके समय कल्याण हो ही जायेगा'' यह आधार कच्चा है। वह जो आधार है उसे अब काममें लाओ यानी हर समय भगवान्‌का स्मरण करो ।

अन्तकालमें भगवान्‌का स्मरण करता हुआ मरे, तो कल्याण हो जाता है, यह बात ठीक है–

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् ।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥

(गीता ८/५)

अर्थात्– जो पुरुष अन्तकालमें मेरेको ही स्मरण करता हुआ शरीरको त्याग कर जाता है, वह मेरे साक्षात् स्वरूपको प्राप्त होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

किन्तु अन्तकालमें आपको भगवान्‌की स्मृति होगी ही, इसके वास्ते आपके पास क्या प्रमाण है? श्रद्धाकी कमी नहीं हो, तो युक्ति और शास्त्र किसी प्रमाणकी जरुरत नहीं है। भगवान्‌ने भी गीताजीमें शास्त्रका प्रमाण दिया–

ऋषिभिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक् ।
ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः ॥

(गीता १३/४)

अर्थात्– यह क्षेत्र और क्षेत्रज्ञका तत्त्व, ऋषियोंद्वारा बहुत प्रकारसे कहा गया है अर्थात् समझाया गया है और नाना प्रकारके वेदमन्त्रोंसे, विभागपूर्वक कहा गया है तथा अच्छी प्रकार निश्चय किये

हुए युक्तियुक्त ब्रह्मसूत्रके पदोंद्वारा भी वैसे ही कहा गया है।

भगवान्ने श्रुति, स्मृतिका प्रमाण देकर अर्जुनको विश्वास दिलाया। यह बात तो सही है कि–अन्तकालमें भगवान्की स्मृति हो जाय तो, कल्याण है। कोई एक बातका मनुष्यके हाथमें जोर रहना चाहिये। अन्तकालमें एक तो पुरियों (सप्तपुरीयोंके नाम–अयोध्या, मथुरा, मायापुरी, काशी, काँची, अवन्तिका, द्वारकापुरी)-की प्रधानता है। वहाँ वास हो, तो मुक्ति हो। यह स्थानकी महिमा है। इसपर निर्भर हों, तो यह एक रास्ता है।

इसी प्रकार परमात्माके नामका जप और स्वरूपका ध्यान है–यह भी बड़ी जोर की बात है। वही मनुष्य कह सकता है कि–''मेरे कल्याणमें सन्देह नहीं है'' जिसके निरन्तर भजन होता है, क्योंकि भगवान् कहते हैं–

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः॥

(गीता ८/१४)

अर्थात्– हे अर्जुन ! जो पुरुष मेरेमें अनन्यचित्तसे स्थित हुआ, सदा ही निरन्तर मेरेको स्मरण करता है, उस निरन्तर मेरेमें युक्त हुए योगीके लिये मैं सुलभ हूँ अर्थात् सहज ही प्राप्त हो जाता हूँ।

जो ऐसा साधन करता है, उसको तो अन्तकालमें नहीं, भगवान् पहले ही मिल जाते हैं। निरन्तर परमात्माका स्मरण करना–यह पुख्ता नींव है। कल्याण करनेवाले (भगवान्) पहले ही आ जाते हैं, अन्तकालकी जरूरत ही नहीं।

किसी प्रकारका जोर होना चाहिये। दूसरा तीर्थ-स्थानका वास है। कोई आदमी वृजमें और कोई काशीमें रहते हैं। उनका निश्चय है कि–''हम तो यहाँ ही मरेंगे, यहाँसे छोड़कर कहीं जायेंगे ही नहीं''–यह एक प्रकारकी तीर्थकी शरण है। वह पक्का है।

एक योगकी शरण है–जैसे समाधि लगाना आ जाय। जब मृत्यु आवे तो समाधि लगाकर बैठ जाए। योगीके पास योगका जोर है।

योगका, तीर्थका या भगवान्की स्मृतिका जोर होना चाहिये। स्मृतिका जैसे जोर है, ऐसे ही नामकी स्मृतिका जोर हो, वह भी उत्तम है। यदि नामकी मानसिक स्मृति हो, क्योंकि–

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् ।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ॥

(गीता ८/६)

अर्थात्– हे कुन्तीपुत्र अर्जुन ! यह मनुष्य अन्तकालमें जिस-जिस भी भावको स्मरण करता हुआ शरीरको त्यागता है, उस उसको ही प्राप्त होता है, क्योंकि सदा जिस भावका चिन्तन करता है, अन्तकालमें भी प्रायः उसीका स्मरण होता है।

जो भगवान्के नाम या स्वरूपको याद करता है, अन्तकालमें उसको स्मृति होगी ही क्योंकि–

साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदुः ।
प्रयाणकालेऽपि च मां ते विदुर्युक्तचेतसः ॥

(गीता ७/३०)

अर्थात्– जो पुरुष अधिभूत और अधिदैवके सहित तथा अधियज्ञके सहित सबका आत्मरूप मेरेको जानते हैं अर्थात् जैसे भाफ, बादल, धूम, पानी और बर्फ यह सभी जलरूप हैं वैसे ही अधि भूत, अधिदैव और अधियज्ञ आदि सब कुछ वासुदेवस्वरूप हैं, ऐसे जो जानते हैं, वे युक्त चित्तवाले पुरुष अन्तकालमें भी मुझको ही जानते हैं, अर्थात् मुझको ही प्राप्त होते हैं।

यदि अभेदज्ञानका ज्ञान हो, उस सच्चिदानन्दघन ब्रह्ममें बुद्धिको प्रवेश करा दे। उसकी बुद्धिमें उस परमात्माका तत्त्व समझमें आ जाय, तो वह हट नहीं सकता है। वह साधनावस्था है, किन्तु किसी समय भी वह मरे, उसका कल्याण ही है। उसकी बुद्धि तद्रूप हो गई है।

यह भी नहीं होकर यदि सच्चिदानन्दघन परमात्मा जिनकी बुद्धिमें अच्छी प्रकार समा गये हैं, बुद्धिकी सत्ता मौजूद है, परमात्माका ज्ञान बुद्धिमें हो गया है, यह प्राप्ति होनेके पहलेकी बात है, जो बात

बुद्धिके समझमें आ गई है, तो वह बात छूट नहीं सकती। जैसे सगुण भगवान्के स्वरूपका ध्यान करनेवाला है, वह स्वरूपका रसास्वाद लेता है, तो फिर उसका वह त्याग नहीं कर सकता। जैसे गोपियाँ भगवान्के स्वरूपको भुलाना चाहें, तो भी वे भूल नहीं सकतीं।

भगवान्के स्वरूपका जिसे रसास्वाद आता है, उसका गला काट डाले, तो भी वह उस आनन्दसे विचलित नहीं होता। ऐसे यह एक बड़ा जोर है।

जो निरन्तर जिस बातका चिन्तन करेगा, उसको उसकी स्मृति अन्तकालमें होगी ही, यह नियम है। भगवान्का चिन्तन करता है उसे स्वप्न आवेगा, तो भगवान्का ही आवेगा। उसे सन्निपात होगा, तो वह भगवान्के विषयकी बात ही बहकेगा। नामकी महिमा तुलसीदासजी कहते हैं–

सुमिरहु नाम राम कर सेवहु साधु ।
तुलसी उतरि जाहु भव उदधि अगाधु ॥

(बरवै रामायण उत्तरकाण्ड दोहा- ६१)

अर्थ– तुलसीदासजी कहते हैं–अरे मन ! रामनामका स्मरण करो और सत्पुरुषोंकी सेवा करो। (इस प्रकार) अपार संसार-सागरके पार उतर जाओ।

कोई भी एक चीज कायम रह जाय, तो कल्याणमें सन्देह नहीं है। सत्संगका आधार भी एक चीज है। असली सत्संग तो वह है कि सत् जो परमात्मा है, उसमें प्रेम होना। उस सत्संगकी तो मुक्ति दासी है।

तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग ।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सत्संग ॥

(रा.च.मा.सुन्दरकाण्ड-४)

अर्थ– हे तात ! स्वर्ग और मोक्षके सब सुखोंको तराजूके एक पलड़ेमें रखा जाय, तो भी वे सब मिलकर [दूसरे पलड़ेपर रखे हुए] उस सुखके बराबर नहीं हो सकते, जो लव (क्षण) मात्रके सत्संगसे होता है।

यह सत्संग कौन-सा है?– इसका भागवत्‌में प्रकरण आया है। वहाँ यही बात दिखाई है कि सत् जो परमात्मा हैं, उनमें जो प्रेम है, उसीका नाम सत्संग है।

भगवत्प्रेमकी महिमा जितनी बताओ थोड़ी है। भगवत्प्रेमी पुरुष तो मुक्तिका सदावर्त बाँट सकते हैं। शिवजी काशीमें मुक्तिका सदावर्त बाँटते हैं। प्रेमका जो प्रभाव है, उसे मैं तो नामके प्रभावसे दामी मानता हूँ। नामका प्रभाव भी मैं दामी मानता हूँ। प्रेमके मुकाबलेमें मुक्ति कोई चीज नहीं है। या योगका जोर हो–

सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च ।
मूर्ध्न्याधायात्मनः प्राणमास्थितो योगधारणाम् ॥

(गीता ८/१२)

अर्थात्– हे अर्जुन ! सब इन्द्रियोंके द्वारोंको रोककर अर्थात् इन्द्रियोंको विषयोंसे हटाकर तथा मनको हृद्देशमें स्थिर करके और अपने प्राणको मस्तकमें स्थापन करके, योगधारणामें स्थित हुआ।

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन् ।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम् ॥

(गीता ८/१३)

अर्थात्– जो पुरुष, ॐ ऐसे एक अक्षररूप ब्रह्मको उच्चारण करता हुआ और उसके अर्थस्वरूप मेरेको चिन्तन करता हुआ, शरीरको त्याग कर जाता है, वह पुरुष परमगतिको प्राप्त होता है।

ऐसे जो योगी हैं, उनके पास योगका पक्का जोर है। सारी इन्द्रियोंके द्वारोंको रोक दिया है जिन्होंने, मनको हृद्देशमें स्थापन कर दिया है, प्राणोंको मस्तकमें रोक दिया है (योगकी धारणासे), फिर उच्चारण किया–ॐ,ॐ। भगवान् श्रीकृष्ण गीताजीमें कहते हैं–''इस तरह मेरा ध्यान करता हुआ शरीर छोड़कर जाता है, वह मेरे स्वरूपको प्राप्त होता है।''

इसमें भगवान्का ध्यान तथा नाम-जप ही प्रधान है। पहला श्लोक (गीता ८/१२) चाहे हटा दो, (८/१३) कायम रख लो तो भी

बेड़ा पार है। किन्तु (८/१३) हटा दो और (८/१२) रखो, तो कुछ नहीं। यह सब बातें योगीके पास हैं, उसके पास जोर है। योगके बिना आप जप, ध्यान कायम रख सको, तो योग भले ही मत होओ। यह आपके पास जोर हो, तो बहुत ही ठीक है।

सत्संगके जोरकी बात आपको बताई। **भगवान्में प्रेम हो, तो वह सबसे दामी चीज है।**

दो नम्बर सत्संग वह है—जो महापुरुषोंका संग है। किन्तु प्रथम तो महापुरुष संसारमें बहुत ही कम हैं। चालीस करोड़ मनुष्य इस देशमें माने जाते हैं। इनमेंसे मैं तो समझता हूँ चालीस आदमी भी महापुरुष मिल जाएँ तो बहुत हैं। होवें तो भी हम उन्हें पहचान नहीं सकते। वनमें रहते हों, तो हमें मिलें नहीं। चालीस करोड़में शायद 39 करोड़ तो गृहस्थ होंगे। संन्यासी एक करोड़ होंगे। करोड़ोंमें कोई एक महात्मा होता है। गीताजीसे भी यह झलक निकलती है—

मनुष्याणां सहस्त्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः॥

(गीता ७/३)

अर्थात्— हजारों मनुष्योंमें कोई ही मनुष्य मेरी प्राप्तिके लिये यत्न करता है और उन यत्न करनेवाले योगियोंमें भी कोई ही पुरुष मेरे परायण हुआ मेरेको तत्त्वसे जानता है अर्थात् यथार्थ मर्मसे जानता है।

हजारोंमें कोई एक परमात्माकी प्राप्तिके लिये यत्न करता है। बाकी तो सब रुपयोंके लिये भागते फिरते हैं—खाओ, पीओ, मौज उड़ाओ। खाओ, पीओ, मौज उड़ाओ—यह चौरासी लाख योनियोंमें डालनेवाली है। लाखों, करोड़ों बार एक-एक योनियोंमें हम गये हैं। अब तो यह चक्कर बन्द करना ही चाहिये। चक्कर बन्द होता है—इस मनुष्य शरीरमें, कुत्तेकी योनिमें नहीं। मनुष्यका शरीर पाकर हमने भी कुत्तेके जैसी योनि पूरी की, तो शास्त्र कहेगा कि—"तुम्हें धिक्कार है।" हमपर दुःख-पर-दुःख आ रहे हैं, फिर भी हम उन्हें रोकनेका प्रयत्न नहीं करते। दुःख आकर प्राप्त होता है, तब रोता है। रोनेका

स्वभाव पड़ गया है। भोगो—फिर ८४ लाख योनियाँ।

मनुष्याणां सहस्त्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये ।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः ॥

(गीता ७/३)

"हजारों मनुष्योंमें मेरी प्राप्तिके लिये कोई एक यत्न करता है, और उन यत्न करनेवालोंमें कोई एक ही मुझे जानता है।" सब क्यों नहीं जानते? कारण कि उनमें तीव्र साधन नहीं है। इस न्यायसे यह माना जाता है कि करोड़ोंमें कोई एक ही उस परमात्माको जानता है।

महात्माको जानें कैसे? ईश्वरकी कृपासे। या महात्मा जनाना चाहें तो जानें। जाननेमें हेतु होती है—श्रद्धा।

भगवान्से प्रार्थना करें, तो प्रभु इस कामको कर सकते हैं।

प्रश्न— महात्माका हम तत्त्व, रहस्य जान जाएँ—इसकी परीक्षा क्या? कि हम जान गये हैं।

उत्तर— जो भगवान्के तत्त्व रहस्यको जान जाता है, प्रेमके तत्त्वको जान जाता है, तो प्रेम उससे छूटता नहीं। ध्यानके तत्त्वको जान जाता है, तो ध्यान उससे छूटता नहीं। इसी प्रकार महात्माके तत्त्वको जान जाता है, तो महात्मा उससे छूटता नहीं।

आप कहें कि वह तो नहीं छोड़े, किन्तु महात्मा छोड़ दें, तो? नहीं। इन तीनके प्रतिज्ञा है—धर्म, ईश्वर और महात्मा—इनको जो पकड़ लेता है, वे फिर उसको छोड़ते नहीं। शास्त्र कहता है— "सारे प्यारे-प्यारे बन्धु श्मशानमें छोड़कर चले आते हैं, किन्तु धर्म साथमें जाता है।"

प्रश्न— क्या ईश्वर नहीं जाता है?

उत्तर— ईश्वर वहाँ तक क्या जाए; ईश्वर तो उसे गले लगाकर पहले ही अपने परमधाममें ले जाते हैं। श्मशानमें तो लाश जाती है।

आप पूछें कि— "भगवान् खुद आकर ले जाते हैं या आदमी भेजते हैं?" दोनों ही बात हैं। या तो वे खुद आते हैं, या अपने

पार्षदोंको भेज देते हैं। भगवान्के जो दूत हैं उनका ही नाम पार्षद है। जो बहुत ज्यादा प्रेमी होता है, प्रेमसे भगवान्को खरीद लेता है, तो वहाँ भगवान् खुद आते हैं। यदि ध्यानका बल होता है तो पार्षद आते हैं।

आप कहें कि– ''यमराज खुद भी आते हैं क्या? हाँ खुद भी आते हैं। सत्यवान् (सावित्रीके पति)-के लिये यमराज आए। अधिकांशमें उनके दूत ही आते हैं।

इसी प्रकार जो साधक पुरुष होते हैं, उनके लिये तो भगवान्के पार्षद ही आते हैं। सिद्ध जो पुरुष होते हैं उनके लिये भगवान् ही आते हैं।

सत्संगकी बात है– जो महात्माको जान जाता है, उससे महात्मासे वियोग नहीं होता। प्रारब्धके कारण शरीरका तो वियोग हो जाता है, किन्तु भीतरका वियोग नहीं होता। भीतरका संयोग ही असली संयोग है। समझो आपसे मेरा प्रेम है, तो आप हजारों मील दूर रहें तो भी पासमें ही हैं। यदि प्रेम नहीं है, और यहाँ व्याख्यान हो रहा है, पासमें बैठे हैं, तो सोते रहते हैं। तीर्थयात्रामें कोई अजनबी पासमें बैठा है, तो समीप होते हुए भी दूर ही है। यह महात्माका सत्संगका जोर बताया।

कोई भी एक जोर है तो उसके कल्याणमें सन्देह नहीं है।

कोई भी जोर हो उस जोरके आधारपर पहले ही काम बना लेना चाहिये। सत्संगका जोर हो तो सत्संगसे, योगका जोर हो तो योगसे, प्रेमका जोर हो तो प्रेमसे पहले ही भगवान् मिल सकते हैं। यही बातें रातको कही गई थी।

आप पूछें कि– तीर्थमें वास करता-करता फिर तीर्थको छोड़ देता है तो? छोड़ देता है तो तीर्थके रहस्यको समझा नहीं।

इसी प्रकार महात्माको छोड़ देता है तो, महात्माके तत्त्वको समझा नहीं। प्रेमको छोड़ देता है तो प्रेमके तत्त्वको नहीं समझा। सबमें एक ही गुर (रहस्य) है। तत्त्व-रहस्यको समझता, तो उसको छोड़ नहीं

सकता। रुपयोंका लोभी क्या रुपयोंको छोड़ सकता है? यदि महात्मा हो, वैरागी हो, तो वह रुपयोंको छोड़ सकता है। रुपयोंमें जिसकी प्रीति है, वह कैसे छोड़ सकता है?

ख्याल करना चाहिये अर्जुन अपने पितामह भीष्म और द्रोणाचार्य जो कुलगुरु हैं, उन्हें बाणोंसे मारता है, क्योंकि भगवान्की आज्ञा है। आज्ञा पालन करते हुए भी भीष्मजीमें जो पूज्यभाव है, वह कम नहीं है। भीष्मजीको बाणोंसे मारकर उनके चरणोंमें नमस्कार करता है। भीष्मने कहा– ''तकिया लाओ !'' कौरवादि मखमलका तकिया लाते हैं। भीष्मने कहा ''मेरे लायक तकिया लाओ !'' तब भीष्मने अर्जुनकी तरफ देखा। अर्जुनने उनके सिरमें बाण मारकर सिरको ऊँचा कर दिया। भीष्म खुश हो गये और अर्जुनसे कहा ''तुमको धन्य है। तुम यदि इस प्रकारका तकिया नहीं देते तो मैं तुम्हें शाप देता।''

फिर भीष्मजीने जल माँगा। सब लोग झारी लेकर दौड़े। भीष्मजीने कहा–''मेरे लायक यह जल नहीं है।'' मरनेकी उस समय तैयारी है। अर्जुनने जमीनमें बाण छोड़ा। जमीन फोड़कर गंगाजी निकली और भीष्मके मुखमें आकर गंगाजल गिरने लगा।

(यह लेख पेड नं. 87, पृष्ठ संख्या 16 से 20 तक में से लिया गया है)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

॥ श्रीहरिः ॥

भगवान् प्रत्येककी इच्छा पूर्ण करते हैं

(प्रवचन नं. 22) स्वर्गाश्रम

दिनांक 15-05-1952

प्रश्न– रामायणमें कहा है– **''राम सदा सेवक रुचि राखी।''** तो क्या अंगदजी भगवान्‌के सेवक नहीं थे, जो उन्होंने अंगदको अपने पास न रखकर अयोध्यासे भेज दिया?

उत्तर– भगवान् तो सदा भक्तकी रुचि रखते ही हैं। उनमें कुछ वासना ही होगी, तब ही उनको वहाँ भेजा। भगवान् अन्तर्यामी हैं, वे तो मनकी बातें जानते हैं। मनमें कुछ वासना समझकर ही उसे (किष्किन्धा) भेजा होगा। अंगद भगवान्‌के ऊपर कोई भार तो था ही नहीं। अंगदकी युवराज पदमें प्रीति थी, उसका उस तरफ खिंचाव था। यह सोचना चाहिये कि भगवान् जो करते हैं, सब ठीक ही करते हैं। भगवान्‌की कोई (किष्किन्धामें) दुकान तो चलती थी नहीं, जो उसे वहाँ भेजते। वाल्मीकीय रामायणमें लिखा है कि– रामजीने पूछा था कि– ''लवणासुरको कौन मार सकता है?'' शत्रुघ्नजीने कहा–''मैं मार सकता हूँ।'' तो भगवान्‌ने उनको भेज दिया (और वहाँ का राजा बना दिया)। भगवान् सब कुछ जानते हैं, वे ठीक ही करते हैं। ऐसे ही सीताजीने कहा– ''मैं वनमें जाकर ऋषियोंके दर्शन करूँगी।'' तब महाराजने लक्ष्मणके साथ कुछ ही दिनोंमें सदाके लिये वनमें भेज दिया।

भगवान्‌को भीतरी इच्छाका पता होनेसे वे प्रत्येककी इच्छाको पूर्ण करते हैं। अंगद वहाँ (किष्किन्धामें) रहना चाहता था, इसलिये ही उसे वहाँ भेजा था- यही मतलब निकालना चाहिये।

अंगद यदि भगवान्‌के बिना नहीं रह सकता था, तो फिर प्रार्थना करता। प्रार्थना करनेका तो उसका अधिकार था ही। इसलिये ऐसा मालूम होता है कि उसकी रुचि ही वहाँ रहनेकी थी। भगवान् उसके लिये जो विधान बनाते हैं, वह तो ठीक ही है। जो कुछ भी हो, उसकी पूर्ति करनी चाहिये।

गीताजीसे लाभ उठाना चाहिये। गीताजी रोम-रोममें रमानी चाहिये, जिस प्रकार रामजीके नामको हनुमानजीने रोम-रोममें रमाया था, उसी प्रकार हमें भी गीताजी रोम-रोममें जमानी चाहिये। गीताजीके समान कोई भी ग्रन्थ नहीं है। भगवान्‌ने गीताजीमें कहा है–

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् ।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥

(गीता ८/५)

अर्थात्– जो पुरुष अन्तकालमें भी मुझको ही स्मरण करता हुआ शरीरको त्याग कर जाता है, वह मेरे साक्षात् स्वरूपको प्राप्त होता है–इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च ।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम् ॥

(गीता ८/७)

अर्थात्– हे अर्जुन ! तू सब समयमें निरन्तर मेरा स्मरण कर और युद्ध भी कर, इस प्रकार मेरेमें अर्पण किये हुए मन, बुद्धिसे युक्त हुआ निःसन्देह मेरेको ही प्राप्त होगा।

''अन्तकालके समय मेरा स्मरण करता हुआ शरीरको छोड़कर जो जाता है, वह परमगतिको प्राप्त होता है।'' ''इसलिये सब समयमें मेरा स्मरण कर और युद्ध भी कर। मेरेमें अर्पण किये हुए मनवाला मेरा परम-भक्त है।''

यही बात हमें अपने पर घटानी चाहिये। हमें भगवान्को याद करके हमारी सारी क्रियाओंको करना चाहिये। गोपियाँ हरवक्त भगवान्को याद रखती थी। यह बात भागवत्के दशम् स्कन्धमें है– गोपियाँ बिलौनेके ही समय क्या, वे तो हर समय भगवान्को याद रखती थी। कभी भी नहीं भूलती थी। अतः भगवान्को बाध्य होकर यह कहना पड़ा कि–''गोपियोंके समान कोई भक्त नहीं है।'' ''मेरेको जो बुद्धि अर्पण कर देता है, वह मुझे प्राप्त हो जाता है।'' जो अन्तकालमें मेरा ही नाम-जप करता हुआ मरता है, वह मेरे भावको प्राप्त होता है।

पता नहीं, कब मर जाएँ? कब यात्रा करते हुए गाड़ीकी पटरीके नीचे आ जाएँ? क्या पता, कब हार्टफेल हो जाए? इसलिये जब हम हर समय भगवान्के नामोंका जप करेंगे, तो ही अन्तकालमें भगवान्का नाम याद आयेगा। और नाम याद आनेसे हम निश्चय ही भगवान्के धामको चले जायेंगे। यदि हम यह समझें कि अन्तकालमें नाम-जप कर लेंगे, तो बिना अभ्यास ऐसा नहीं हो सकता। जो बात हर समय याद रहती है, वही बात अन्तकालमें याद रहती है। भगवान्की स्मृतिमें जो आनन्द मिलता है, वह आनन्द सांसारिक विषयोंमें नहीं मिल सकता–

नर तनु पाइ बिषयँ मन देहीं । पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं ॥

(रा.च.मा. उत्तर ४४/१)

अर्थ– जो लोग मनुष्य-शरीर पाकर विषयोंमें मन ले जाते हैं, वे मूर्ख अमृतको बदलकर विष ही ग्रहण करते हैं।

तुलसीदासजीकी इस चौपाई पर विश्वास कर लेना चाहिये। जो विषय-भोगोंमें मन लगाता है, वह तो अमृतकी जगह विष ही ग्रहण करता है।

कहाँ भगवान्का **चिन्तन**, कहाँ विषय ! कहाँ राजा भोज,

कहाँ गाँगिया तेली ! कहाँ **राम-राम**, कहाँ टाँय-टाँय ! जो प्रेमकी मूर्ति हैं, अमृत-स्वरूप हैं, उसको छोड़कर जो विष-स्वरूप विषयोंकी तरफ मन ले जाता है, वह मूर्ख अमृतके बदले विष लेता है–

ताहि कबहुँ भल कहइ न कोई । गुंजा ग्रहइ परस मनि खोई ॥

(रा.च.मा. उत्तर ४४/२)

अर्थ– उसे कोई भी भला नहीं कहेगा, जो पारसमणिको त्यागकर गुंजा (चिरमी) ग्रहण करता है।

चमकती तो है चिरमी, पारस तो पत्थरका-सा ही दिखता है। बच्चोंके सामने यदि ये दोनों चीजें रख दी जायें, तो वे चिरमी ही लेंगे। उसी प्रकार वह मनुष्य भी बच्चेकी तरह ही हैं जो पारसमणिको छोड़कर चिरमी माँगते हैं। ध्यान देकर समझना चाहिये भजन-ध्यानमें कितना आनन्द है, इसके रहस्यको तो वही समझता है, जो भजन-ध्यान करता है। दूसरा इसको नहीं जान सकता। जो अमृत देवता पान करते हैं, उसे हम क्या समझें? वे देवता ही समझते हैं। इसी प्रकार यह अमृत है।

कोई कहे कि–''भगवान्के नाममें कोई मजा नहीं है, अतः मन नहीं लगता,'' तो वह कुछ समझता है ही नहीं। शक्करके ढेलेपर एक चींटीको रख दो। यदि वह उसे नहीं चखेगी, तो स्वाद भी नहीं आयेगा। उसी प्रकार हम भगवान्के नामोंपर कुछ ध्यान नहीं देते हैं, इसलिये ही उसका आनन्द नहीं आता। वैराग्य करना चाहिये। हमें ही वैराग्यकी बातें जाननी चाहिये। यदि हम वैश्याको वैराग्यके विषयमें पूछेंगे तो वह वैश्या क्या बतावेगी?

सन्त-महात्मापुरुषोंमें भगवद्बुद्धि करनी चाहिये। सन्त-महात्माओंमें ईश्वरकी मान्यता इसलिये बताई गयी है कि वे जो भी कुछ उपदेश देंगे, हमारे भलेके लिये ही देंगे। यदि वह (सन्त-महात्मा)

सच्चा नहीं है तो भगवान् उसकी बुद्धि ठीक करेंगे। हमारे यहाँ तो अन्धेर है, परमात्माके यहाँ तो अन्धेर है ही नहीं। यदि हम दूसरोंमें ईश्वरबुद्धि करेंगे तो हमारा उद्धार हो जायेगा। ईश्वरपर निर्भर होकर रहना चाहिये। एकान्तमें बैठकर रोना चाहिये—''हे भगवन् ! यदि हमारेमें गलती है तो सुधारिये। धोखेमें हैं तो सुधारिये। जो कुछ हमारी चेष्टा है, वह आपके लिये ही है। हम तो कुछ जानते हैं ही नहीं। आप ही जानते हो।'' भगवान्पर निर्भर होकर गद्गद् वाणीसे प्रार्थना करनी चाहिये। फिर जो आदेश मिले, उसपर विश्वास कर लेना चाहिये। अन्तमें एक रामबाण बताते हैं कि—भगवान्से प्रार्थना करनेसे भगवान् जो प्रेरणा करेंगे, उस प्रेरणाके अनुसार व्यवहार करनेसे मुक्ति हो सकती है। मनुष्यकी सलाहसे तो क्या होनी जानी है ?

अब मैं महात्माका कर्तव्य बताता हूँ। यदि किसी जिज्ञासुने उसपर भगवद्बुद्धि कर ली, तो उस महात्माको इसका घोर विरोध करना चाहिये। यदि वह शास्त्र-सम्मत काम नहीं करता है, यदि वह ऐसा नहीं कहता है, तो वह दूसरोंको धोखा देता है। महात्माका कर्तव्य होता है कि वह यथाशक्ति रोकनेकी कोशिश करे। ऐसा करनेसे वह दोषका भागी नहीं होता। यदि वह प्रोत्साहन देता है, और अपनेमें श्रद्धा करवाता है, या जमवाता है, तो वह महात्मा नहीं है।

हम ४८ वर्षसे इस कामको कर रहे हैं। हमारी जब २० वर्षकी आयु थी, तबसे ही यह काम शुरु कर दिया था। यदि आप इस बातको काममें लावेंगे, तो मेरा इतना परिश्रम सफल हो जायेगा। यही युक्ति-युक्त, शास्त्र-सम्मत बात आपसे कही गई है। महात्मामें यदि कोई ईश्वर बुद्धि करे तो उसे रोकना चाहिये। यदि वह नहीं रोकता है तो अपनेको तथा शिष्यको दोनोंको ही गर्तमें डालता है। जिन्होंने अनुचित श्रद्धा की है, उन्होंने पश्चाताप भी किया है। इसलिये यदि

किसीकी महात्मामें भगवद्बुद्धि हो जाय, तो महात्माको ही चाहिये कि वह उसे रोके। आप यदि मुझे ईश्वर मानेंगे और यदि मैं प्रोत्साहन दिला दूँगा, तो बहुत ही खराब होगा। यदि मैं उसे रोकूँगा, तो वह किस प्रकार गर्तमें जा सकता है?

प्रश्न— यदि कोई अपनेको महात्मा नहीं मानने देगा, तो (हमारा) किस प्रकार उद्धार हो सकता है?

उत्तर— हमें यदि कोई (साहूकार मानकर) कहे कि—''आप हमारे रुपये जमा कर लो, ब्याज भी नहीं लेंगे'' तो हम यदि उनके रुपये जमा नहीं करेंगे तभी हमारी बड़ाई है। यदि हम जमा कर लें, तो यह बहुत ही खराब चीज है। यदि कोई अपनेको श्रेष्ठ माने, तो वह उसके लिये बहुत ही पतनकी चीज है। जो अपने-आप अपनी पूजा करवाता है, उसमें उसकी श्रद्धा अवश्यमेव हट जाती है। यह बात एक प्रकारसे समझनी चाहिये कि— हम माता-पिता, गुरुजनोंकी सेवा करें और वे यदि मना करें, तो उनकी तरफ आदर बढ़ता है, दूसरोंपर बड़ा ही अच्छा असर पड़ता है। यह त्याग है। इस त्यागका जितना प्रभाव पड़ता है, उतना और किसीका नहीं। रुपयोंका त्याग, ऐश-आरामका त्याग, मान-बड़ाई-इन सबका त्याग करना चाहिये। हम त्यागकी बात दूसरोंको तो कहते हैं, हममें यदि त्यागकी भावनाएँ नहीं है, तो दूसरोंपर इतना अधिक प्रभाव नहीं पड़ता है। जिसमें त्यागकी भावना जितनी ज्यादा है, वह उतना ही श्रेष्ठ है। यदि मैं खूब मान-बड़ाईके त्यागकी बात कहूँगा और यदि वे मेरेमें इसका अभाव देखेंगे, तो उनमें मेरे प्रति घृणा ही होगी। यदि मैं भी इसके योग्य होऊँगा तो मेरा प्रभाव पड़ेगा। आजकल जो भाषण देते हैं, उनका प्रभाव इसलिये ही नहीं पड़ता है, क्योंकि उनमें वे बातें घटती नहीं, जो कुछ उनके द्वारा कही जाती हैं।

मैं तो भक्तोंकी गाथाओंमेंसे तथा भगवान्‌के वचनोंमेंसे कह दिया करता हूँ। उसका पालन मैं करूँगा तो मुझे फायदा होगा, यदि कोई दूसरा भी इसका पालन करेगा तो उसे फायदा होगा। यदि मैं ऐसा कहूँगा कि–''मैं इतना बड़ा आदमी हूँ, मेरेमें सब बातें हैं'' तो मुझे महात्मा कोई भी नहीं कहेगा। अपने मुँहसे अपनी बड़ाई तो करनी ही नहीं चाहिये, उससे किसीपर प्रभाव नहीं पड़ता है।

प्रश्न– स्त्रीको ओंकारका उच्चारण करना चाहिये या नहीं?

उत्तर– स्त्रीको ॐ कारकी उपासना या उच्चारण नहीं करना चाहिये ओर जिस मंत्रमें ॐ आता है उसका भी शास्त्रोंमें इसका निषेध किया है। हम तो यहाँ इसके निषेधकी प्रार्थना करते हैं। यदि कोई न सुने, तो हमारेको कोई मतलब नहीं। हमारे व्यक्तिगत न कोई लाभ है, तथा न कोई हानि है। यह तो विनयके रूपमें कहा गया है। वह माने, चाहे न माने उनकी मर्जी है। हमारा उससे कोई भी मतलब नहीं। वैदिक मन्त्रोंका स्त्रीके लिये निषेध है। पौराणिकके लिये मनाही नहीं है। वेदोंमें जो मन्त्र हैं, उनमें हरि ॐ होता है। ॐ का उच्चारण स्त्री, शूद्रको (द्विजको, जिनका जनेऊ संस्कार नहीं हुआ हो; उन्हें भी) कभी भी नहीं करना चाहिये। अच्छे-अच्छे विद्वानोंकी बातें सुनकर ही यह कहा गया है। इतिहास-पुराण तो सुननेका ही नहीं, पढ़ने तक का अधिकार है।

एक बार हम और अच्छे-अच्छे सन्त आदमी यहीं ऋषिकेशमें इकट्ठे हुए थे। मैं तो एक साधारण आदमी ही हूँ। मालवीयजीका यह पक्ष था कि–''स्त्रियाँ पौराणिक बातें पढ़-सुन सकती हैं।'' और करपात्रीजी महाराजने कहा–''सुन सकती हैं, किन्तु पढ़ नहीं सकतीं।'' जब हमारेसे राय ली, तब हमने तो कहा कि–''दोनों ही बातें शास्त्रोंमें आती हैं।''

शूद्र तथा स्त्री ओंकारका जप न करें। द्विजातियोंके लिये भी विकल्प है। कहीं-कहीं यह भी मिलता है कि–''दण्डी स्वामी ही ओंकारका जप कर सकते हैं।'' किन्तु रामके नामका उतना ही महत्त्व है जितना ओंकारका महत्त्व है। हमारे तो मुक्तिका द्वार खुला हुआ है, हम क्यों ओंकारके जपके लिये जिद्द करें। मैं तो कहता हूँ कि– ''अल्लाह-अल्लाह जिस प्रकार मुसलमान करते हैं, यदि वे प्रेममें मग्न होकर करें, तो उन्हें भी उतना ही फल मिलेगा।''

तुलसीदासजी राम-नामके उपासक थे। उन्होंनें कहा- ''राम-नामकी महिमा सबसे बढ़कर है।'' उन्होंने रामचरितमानसकी रचना करके राम-नामको पार उतरनेका साधन बता दिया। सूरदासजीने कहा– ''कृष्णका नाम सबसे बड़ा है।'' ध्रुव कहेंगे– ''ॐ नमो भगवते वासुदेवाय'' मुसलमान कहेगा कि– ''अल्लाह, ऊदा ही श्रेष्ठ हैं'' जैसे कोई पानीको कहे– जल, कोई कहे– आपः, कोई कहे– नीर, कोई कहे– वाटर (water) या पानी, कुछ भी क्यों न कहो, अर्थ तो जल ही होगा। ऐसी ही परमात्माके बहुत-से नाम हैं, कोई भी नाम लो मुक्ति मिल सकती है।

बच्चा कहता है– 'बू' तो माँ समझकर उसे दूध पिला देती है। इसी प्रकार हम ॐ कार का जप न करके, राम नामका जप करेंगे, तो राम नामके जपसे हमारा उद्धार क्यों नहीं होगा? अवश्य होगा।

(यह लेख पेड नं. 87, पृष्ठ संख्या 74 से 79 तक से लिया गया है)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

॥ श्रीहरिः ॥

व्यवहार इतना करे जिससे भजनमें बाधा न आवे

(प्रवचन नं. 23)

ईश्वरपर विश्वास रखना चाहिये। फिर किसीकी भी मजाल नहीं है, जो बाल भी बांका कर सके।

नाम-जप व सत्संगकी विशेष चेष्टा करनी चाहिये। हजार काम छोड़कर यह चेष्टा करनी चाहिये। भगवान्‌के भजनके प्रभावसे सबकुछ ठीक हो सकता है।

भगवान्‌के भक्तको देखनेसे, चिन्तन करनेसे भगवान् तुरन्त याद आने चाहिये। यदि महापुरुषके शुद्ध हृदयमें अपनी स्मृति हो गयी तो अपना कल्याण हो जावेगा।

महापुरुष अपनेको छुवे तो अपने सारे शरीरमें प्रेमकी बिजली दौड़ जायेगी। उनके छूनेमें ज्यादा लाभ है। अपने छूनेसे भी लाभ है। इसमें अग्निका और घासका दृष्टान्त लागू पड़ता है।

महापुरुष जिस रास्तेसे फिरेंगे सबके पापको नाश करते फिरेंगे (जायेंगे)। महापुरुष अपनेको देखें तो हम सब ही पवित्र हो गये।

आपको यह बात प्रत्यक्ष समझ लेनी चाहिये कि आपने किसी (भी जीव)-को जाकर भगवान्‌का नाम सुनाया और वह सुनता हुआ मर गया तो उस आदमीका तो जन्म ही सफल हो गया।

१. अपना कल्याण चाहनेवालेको तो भोत (बहुत) ज्यादा व्यवहार करना नहीं चाहिये। इतना व्यवहार करे जिससे भजनमें बाधा न आवे।

२. यदि जीविका चल सके तो व्यवहार न करे। फिर तो हर समय भजन-ध्यान सेवा ही करे।

३. सेवा भी उतनी ही करे जितनी भजन-ध्यानके रहते हुए हो सके।

४. अभ्यास डालनेसे भजन-ध्यान करते हुए भी सेवा हो सकती है।

५. वर्तमान समयमें व्यवहारका विस्तार रखते हुए कल्याण हो जावे, असम्भव बात है। ये बातें प्रत्यक्ष अनुभव करके, बहुत लोगोंसे सुनकर अनुभव की हुई है।

(यह लेख पेड नं. 94, पृष्ठ संख्या 63 से लिया गया है)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

।। श्रीहरिः ।।

भगवान्‌की प्राप्ति 24 घण्टेमें हो सकती है

(प्रवचन नं. 24) गोविन्द भवन-कलकता

दिनांक 28-12-1963

ध्यानके समय परमात्माके सिवाय और किसी चीजका चिन्तन नहीं करे। भगवान्‌से प्रार्थना करे कि प्रभु आप आनेमें क्यों विलम्ब कर रहे हैं। आप तो दीन-बन्धु हैं और मैं दीन हूँ, आप तो अपने दासोंके दोषोंको देखते नहीं अगर आप मेरे दोषोंकी तरफ देखें तो मेरा कहीं टिकाव नहीं है। करुणाभावसे भगवान्‌को पुकारे **हे नाथ ! हे हरि !!** करुणाभावसे पुकारनेसे भगवान् विशेष रूपसे सुनते हैं।

यह विश्वास रखे कि भगवान् आह्वान करने (बुलाने,पुकारने) से आ जाते हैं। भगवान् तो अपनी विशेष कृपाके प्रभावसे ही दर्शन दे सकते हैं और भगवान्‌की कृपा तो है ही। भगवान्‌का ध्यान करनेमें तो मनुष्य स्वतन्त्र हैं।

भगवान्‌के कीर्तनके प्रभावसे वातावरण शुद्ध हो जाता है और सब विघ्न-बाधा भाग जाती है।

शरीरका सुख तथा आसक्ति परमात्माकी प्राप्तिमें महान् विघ्न है। परमात्मामें आसक्ति करनी, वैसा सुख और कहीं नहीं है। संसारकी आसक्ति भय देनेवाली और जन्म-मरण देनेवाली है। इस संसारकी आसक्तिको विवेक विचारसे हटावें।

जप, ध्यान, सत्-शास्त्रोंका अध्ययन और सत्संग ये दामी साधन है।

दुखियोंकी निष्कामभावसे सेवा, मन इन्द्रियोंका संयम, संसारसे वैराग्य ये सब होना साधनमें अत्यन्त आवश्यक है। वैराग्य होनेसे मन

इन्द्रियोंका संयम अपने आप हो जाता है।

अंत समयमें भगवान्‌की याद कम रहती है सो यह जवानीकी उम्रमें गफलत रखी उसका परिणाम है। (गीता ८/६)

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् ।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ॥

(गीता ८/६)

सदा जिस भावका चिन्तन करता है अन्तकालमें भी प्रायः उसीका स्मरण होता है। इसलिये भगवान् कहते हैं- **तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च** (गीता ८/७)। **अर्थात्**- मुझको याद रखते हुए युद्ध कर यानी मुझे याद रखते हुए काम कर।

एक कहानी– एक बनियेको एक महात्माने कहा कि भगवान्‌का भजन किया कर, बनियेने कहा फुरसत नहीं है। फिर महात्माके कहनेसे बनियेने नहानेके समय भगवान्‌को याद [नाम-जप] करनेका नियम लिया, जब मरते समय उसको स्नान कराया तो उसको भगवान् याद आ गये और उसका कल्याण हो गया। इसलिए भगवान्‌को हर समय याद रखना चाहिये। इसमें परिश्रम नहीं है और कुछ खर्च भी नहीं होता है। वह नहानेका समय काममें आ गया इससे बढ़कर और कुछ है ही नहीं।

विशेष बात यह है कि मरते समय घरमें चिड़िया, कौवा आदि कोई भी पशु-पक्षी शब्द करते हों तो उन्हें वहाँ से हटा देना चाहिये। मरनेवालेसे कुछ भी (सांसारिक बात) नहीं कहना चाहिये। कारण कि अगर उसका ध्यान परमात्मामें लगा हुआ होगा और हमने उससे संसारकी बात चला दी तो उसका जन्म होना सम्भव है। मरनेवालेको भगवान्‌की याद दिलावें एवं संसारकी कोई बात उससे नहीं करनी चाहिये।

मनुष्य कैसा भी पापी क्यों न हो उसे मृत्युके समयमें भगवान्‌का स्मरण हो जाए तो निश्चय ही उसका कल्याण होगा। इसमें सन्देह नहीं है।

भगवान्‌की प्राप्ति २४ घण्टेमें हो सकती है। इसके लिए पाँच चीजका त्याग करना जरूरी है– आहार, जल, नींद, टट्टी और पेशाब एवं दो चीजको ग्रहण करना जरूरी है- भगवन्नाम-जप और भगवान्‌का ध्यान।

पक्षी तथा जानवरोंकी बोलीमें मरते समय उसका मन वहाँ चला जावे तो उसका एक जन्म अवश्य होगा, इसलिये किसीके मरनेके समय पक्षी तथा जानवरोंका शब्द सुनाई नहीं पड़ना चाहिये।

यदि मृत्युके समय कुत्तेकी आवाज सुनाई दे तो मरनेवाला भी कुत्ता होता है। चाहे मरनेवाला कैसा भी उच्चकोटिका साधक क्यों न हो। इसलिये सावधानी रखे कि अन्त समयमें उसे भगवान्‌की स्मृति रहे, ऐसी चेष्टा रखनी चाहिये।

(यह प्रवचन पेड नं.- 95 पृष्ठ 7, 8 से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

॥ श्रीहरिः ॥

भगवान्‌के स्वरूपके ध्यानके लिये प्रेरणा

स्वर्गाश्रम, वटवृक्ष

(प्रवचन नं. 25) आषाढ़ बदी 1 सं. 2001

7-6-1944, प्रातःकाल

श्रीकृष्ण गोविन्द हरे मुरारे हे नाथ नारायण वासुदेव॥

भगवान्‌के जितने अवतार हुये हैं, उनमें भगवान् श्रीराम और भगवान् श्रीकृष्णके अवतार प्रधान हैं। ध्यानके पूर्व आसनकी जरूरत है और आसनके लिये भगवान्‌ने गीताजीमें बताया है–

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः ।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥

(गीता ६/११)

अर्थात्– शुद्ध भूमिमें, जिसके ऊपर क्रमशः कुशा, मृगछाला और वस्त्र बिछे हैं, जो न बहुत ऊँचा है और न बहुत नीचा, ऐसे अपने आसनको स्थिर स्थापन करके।

इससे पवित्र और क्या देश होगा? दूसरा- एकान्त देश और उसपर गंगाजीकी बालू-यह बड़ी पवित्र है। **'चैलाजिनकुशोत्तरम्'** तीनों मिलाकर आसन बनाया जावे, तो भी गंगाजीकी रेणुकासे बढ़कर नहीं हो सकता। यदि कोई कहे कि 'तो फिर भगवान्‌ने गंगाजीकी रेणुका का ही आसन क्यों नहीं बताया?' बात यह है कि यह सबके लिये सुगम नहीं है। यह रेणुका का बड़ा पवित्र आसन है और इसमें सादगी है। तथा यहाँके परमाणुओंमें ध्यान लगानेकी शक्ति है।

अब आसन जमाना चाहिये **'समं कायशिरोग्रीवं'** (गीता ६/१३) काया, शिर और ग्रीवाको समान रक्खें। मेरुदण्ड सीधा रखें, जिससे निद्रा नहीं आवे और नासिकाके अग्रभागमें दृष्टि जमावें। निद्रा,

आलस्य नहीं आवे, तो नेत्र बंद कर सकते हैं।

प्रश्न– भगवान्‌के स्वरूपका ध्यान 'बाहरमें करें कि भीतरमें?'

उत्तर– जैसा आपको सुगम पड़े।

प्रश्न– साकारका करें कि निराकारका?

उत्तर– निराकारके सहित ही साकारका करें।

जैसे–आकाशमें पूर्णिमाका चन्द्रमा है। आकाशकी तरह परमात्माका निराकार स्वरूप है और चन्द्रमाकी तरह साकार स्वरूप है। हृदय आकाशमें ध्यान करो, चाहे ब्रह्म आकाशमें। साकार, निराकार एक ही है। दो वस्तु नहीं है। एक ही के दो भेद हैं। ऐसे परमात्माके स्वरूपका ध्यान करे। भगवान्‌के मुखारविन्दकी उपमा चन्द्रमाकी दी जाती है।

प्रश्न– सगुण-साकारमें विष्णुका ध्यान करे, या रामका?

उत्तर– जिसमें आपकी रुचि हो, वही आपके लिये ज्यादा फायदेकी चीज है।

चन्द्रमाकी उपमा तो है ही, भगवान्‌के नामके साथमें भी चन्द्र जोड़ दिया है जैसे– श्रीरामचन्द्र, श्रीकृष्णचन्द्र। श्रीकृष्णदास नहीं जोड़ा है।

(यह लेख पेड नं. 71, पृष्ठ संख्या 43 से लिया गया है)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

॥ श्रीहरिः ॥

ध्यानावस्थामें प्रभुसे वार्तालाप

(प्रवचन नं. 26)

साधक एकान्त और पवित्र स्थानमें कुश या ऊन के आसनपर स्वास्तिक, सिद्ध या पद्मासन आदि किसी आसनसे स्थिर, सीधा और सुखपूर्वक बैठे और इन्द्रियोंको विषयोंसे हटाकर सम्पूर्ण सांसारिक कामनाओंका त्याग करके स्फुरणासे रहित हो जाय। पश्चात् आलस्यरहित और वैराग्ययुक्त पवित्र चित्तसे अपने इष्टदेव भगवान्‌का आह्वान करे। यह ख्याल रखना चाहिये कि जब ध्यानावस्थामें भगवान् आते हैं तब चित्तमें बड़ी प्रसन्नता, शान्ति, ज्ञानकी दीप्ति एवं सारे भूमण्डलमें महाप्रकाश नेत्रोंको बंद करनेपर प्रत्यक्ष-सा प्रतीत होता है। जहाँ शान्ति है, वहाँ विक्षेप नहीं होता और जहाँ ज्ञानकी दीप्ति होती है, वहाँ निद्रा-आलस्य नहीं आते। और यह विश्वास रखना चाहिये कि भगवान्‌से स्तुति और प्रार्थना करनेपर ध्यानावस्थामें भगवान् आते हैं। अपने इष्टदेवके साकाररूपका ध्यान करनेमें कठिनाई भी नहीं है। यदि कहो कि देखी हुई चीजका ध्यान होना सहज है, बिना देखी हुई चीजका ध्यान कैसे हो सकता है? सो ठीक है; किन्तु शास्त्र और महात्माओंके वचनोंके आधारपर तथा अपने इष्टदेवके रुचिकर चित्रके आधारपर भी ध्यान हो सकता है। इसलिये साधकको उचित है कि नेत्रोंको मूँदकर अपने इष्टदेव परमेश्वरका आह्वान करे और साधारण आह्वान करनेसे न आनेपर उनके नाम और गुणोंका कीर्तन एवं दिव्य स्तोत्र और पदोंके द्वारा स्तुति और प्रार्थना करते हुए श्रद्धा और प्रेमपूर्वक करुणाभावसे गद्‌गद होकर भगवान्‌का पुनः-पुनः आह्वान करे और भगवान्‌के आनेकी आशा और प्रतीक्षा रखते हुए इस

चौपाईका उच्चारण करे–

एक बात मैं पूछहु तोही । कारन कवन बिसारेहु मोही ॥

फिर यह विश्वास करना चाहिये कि हमारे इष्टदेव भगवान् आकाशमें हमारे सम्मुख करीब दो फीटकी दूरीपर प्रत्यक्ष ही खड़े हैं। तत्पश्चात् चरणोंसे लेकर मस्तकतक उस दिव्य मूर्तिका अवलोकन करते हुए यह चौपाई पढ़नी चाहिये–

नाथ सकल साधन मैं हीना । कीन्ही कृपा जानि जन दीना ॥

हे नाथ ! मैं तो सम्पूर्ण साधनोंसे हीन हूँ, आपने मुझे दीन जानकर दया की है अर्थात् मैंने तो कोई भी ऐसा साधन नहीं किया कि जिसके बलपर ध्यानमें भी आपके दर्शन हो सके। किन्तु आपने मुझे दीन जानकर ही ध्यानमें दर्शन दिये हैं। इस प्रकार भगवान्‌के आ जानेपर साधक ध्यानावस्थामें भगवान्‌से वार्तालाप करना आरम्भ करता है।

साधक कहता है–प्रभो ! आप ध्यानावस्थामें भी प्रकट होनेमें इतना विलम्ब क्यों करते हैं? पुकारनेके साथ ही आप क्यों नहीं आ जाते? इतना तरसाते क्यों हैं?

भगवान् कहते हैं–तरसानेमें ही तुम्हारा परम हित है।

साधक–तरसानेमें क्या हित है, मैं नहीं समझता। मैं तो आपके पधारनेमें ही हित समझता हूँ।

भगवान्–विलम्बसे आनेमें विशेष लाभ होता है। विरहव्याकुलता होती है, उत्कट इच्छा होती है, उस समय आनेमें विशेष आनन्द होता है। जैसे विशेष क्षुधा [भूख] लगनेपर अन्न अमृतके समान लगता है।

साधक–ठीक है, किन्तु विशेष विलम्बसे आनेपर निराश होकर साधक ध्यान छोड़ भी तो सकता है।

भगवान्–यदि मुझपर इतना ही विश्वास नहीं है और मेरे

आनेमें विलम्ब होनेके कारण जो साधक उकताकर ध्यान छोड़ सकता है, उसको दर्शन देकर ही क्या होगा।

साधक–ठीक है, किन्तु आपके आनेसे आपमें रुचि तो बढ़ेगी ही और उससे साधन भी तेज होगा, इसलिये आपको पुकारनेके साथ ही पधारना उचित है।

भगवान्–उचित तो वही है जो मैं समझता हूँ और मैं वही करता हूँ, जो उचित होता है।

साधक–प्रभो ! मुझे वैसा ही मानना चाहिये जैसा आप कहते हैं, किन्तु मन बड़ा पाजी है; वह मानने नहीं देता। आप कहते हैं वही बात सही है, फिर भी मुझे तो यही प्रिय लगता है कि मैं बुलाऊँ और तुरंत आप आ जायँ। यह बतलाइये वह कौन-सी पुकार है जिस एक ही पुकारके साथ आप आ सकते हैं?

भगवान्–गोपियोंकी भाँति जब साधक मेरे ही लिये विरहसे तड़पता है तब वैसे आ सकता हूँ या मुझमें प्रेम और विश्वास करके द्रौपदी और गजेन्द्रकी भाँति जब आतुरतासे व्याकुल होकर पुकारता है तब आ सकता हूँ। अथवा प्रह्लादके सदृश निष्कामभावसे भजनेवालेके लिये भी आ सकता हूँ।

साधक–विरहसे व्याकुल करके आते हैं यह आपकी कैसी आदत है? आप विरहकी वेदना देकर क्यों तड़पाते हैं ?

भगवान्–विरहजनित व्याकुलताकी तो बड़े ऊँचे दर्जेकी स्थिति है। विरहव्याकुलतासे प्रेमकी वृद्धि होती है, फिर भक्त क्षणभरका भी वियोग सहन नहीं कर सकता। उसको सदाके लिये मेरी प्राप्ति हो जाती है। एक दफा मिलनेके बाद फिर कभी छोड़ता ही नहीं। जैसे भरत चौदह सालतक विरहसे व्याकुल रहा, फिर मेरा साथ उसने कभी नहीं छोड़ा।

साधक—आपको कभी कार्य होता तो आप प्राय: लक्ष्मण और शत्रुघ्नको ही सुपुर्द करते, भरतको नहीं; इसका क्या कारण था?

भगवान्—प्रेमकी अधिकताके कारण भरत मेरा वियोग सहन नहीं कर सकता था।

साधक—फिर उन्होंने चौदह सालतक वियोग कैसे सहन किया?

भगवान्—मेरी आज्ञासे बाध्य होकर उसको वियोग सहन करना पड़ा और उसी विरहसे प्रेमकी इतनी वृद्धि हुई कि फिर उसका मुझसे कभी वियोग नहीं हुआ।

साधक—पर उस विरहमें आपने भरतका क्या हित सोचा?

भगवान्—चौदह सालतक विरह सहन करनेसे वह विरह और मिलनके तत्त्वको जान गया। फिर एक क्षणभरका वियोग भी उसको एक युगके समान प्रतीत होने लगा। यदि ऐसा नहीं होता तो मेरी ओर इतना आकर्षण कैसे होता?

साधक—विरहकी व्याकुलतासे निराशा भी तो हो सकती है?

भगवान्—कह ही चुका हूँ ऐसे पुरुषोंके लिये फिर दर्शन देनेकी आवश्यकता ही क्या है?

साधक—फिर ऐसे पुरुषोंको आपके दर्शनके लिये क्या करना चाहिये?

भगवान्—जिस किस प्रकारसे मुझमें श्रद्धा और प्रेमकी वृद्धि हो, ऐसी कोशिश करनी चाहिये।

साधक—क्या बिना श्रद्धा और प्रेमके दर्शन हो ही नहीं सकते?

भगवान्—हाँ, नहीं हो सकते, यही नीति है।

साधक—क्या आप रियायत नहीं कर सकते?

भगवान्—किसीपर रियायत की जाय और किसीपर नहीं की जाय तो विषमताका दोष आता है। सबपर रियायत हो नहीं सकती।

साधक—क्या ऐसी रियायत कभी हो भी सकती है?

भगवान्—हाँ, अन्तकालके लिये ऐसी रियायत है। उस समय बिना श्रद्धा और प्रेमके भी केवल मेरा स्मरण करनेसे ही मेरी प्राप्ति हो जाती है।

साधक—फिर उसके लिये भी यह विशेष रियायत क्यों रखी गयी?

भगवान्—उसका जीवन समाप्त हो रहा है। सदाके लिये वह इस मनुष्य-शरीरको त्यागकर जा रहा है। इसलिये उसके वास्ते यह खास रियायत रखी गयी है।

साधक—यह तो उचित ही है कि अन्तकालके लिये यह विशेष रियायत रखी गयी है। किन्तु अन्त समयमें मन, बुद्धि और इन्द्रियाँ अपने काबूमें नहीं रहते; अतएव उस समय आपका स्मरण करना भी वशकी बात नहीं है।

भगवान्—इसके लिये सर्वदा मेरा स्मरण रखनेका अभ्यास करना चाहिये। जो ऐसा अभ्यास करेगा उसको मेरी स्मृति अवश्य होगी।

साधक—आपकी स्मृति मुझे सदा बनी रहे इसके लिये मैं इच्छा रखता हूँ और कोशिश करता हूँ, किन्तु चंचल और उद्दण्ड मनके आगे मेरी कोशिश चलती नहीं। इसके लिये क्या उपाय करना चाहिये?

भगवान्—जहाँ तहाँ तुम्हारा मन जाय, वहाँ-वहाँसे उसको लौटाकर प्रेमसे समझाकर मुझमें पुन:-पुन: लगाना चाहिये अथवा मुझको सब जगह समझकर जहाँ-जहाँ मन जाय वहाँ ही मेरा चिन्तन

करना चाहिये।

साधक–यह बात मैंने सुनी है, पढ़ी है और मैं समझता भी हूँ, किन्तु उस समय यह युक्ति मुझे याद नहीं रहती, इस कारण आपका स्मरण नहीं कर सकता।

भगवान्–आसक्तिके कारण यह तुम्हारी बुरी आदत पड़ी हुई है तथा आसक्तिका नाश और आदत सुधारनेके लिये महापुरुषोंका संग तथा नामजपका अभ्यास करना चाहिये।

साधक–यह तो यत्किञ्चित् किया भी जा सकता है और उससे लाभ भी होता है; किन्तु मेरे दुर्भाग्यसे यह भी तो हर समय नहीं होता।

भगवान्–इसमें दुर्भाग्यकी कौन बात है ? इसमें तो तुम्हारी ही कोशिशकी कमी है।

साधक–प्रभो ! क्या भजन और सत्संग कोशिशसे होते हैं? सुना है कि सत्संग पूर्वपुण्य इकट्ठे होनेपर ही होता है।

भगवान्–मेरा और सत्पुरुषोंका आश्रय लेकर भजनकी जो कोशिश होती है वह अवश्य सफल होती है। उसमें कुसंग, आसक्ति और सञ्चित बाधा तो डालते हैं; किन्तु इसके तीव्र अभ्याससे सब बाधाओंका नाश हो जाता है और उत्तरोत्तर साधनकी उन्नति होकर श्रद्धा और प्रेमकी वृद्धि होती है और फिर विघ्न-बाधाएँ नजदीक भी नहीं आ सकती। प्रारब्ध केवल पूर्वजन्मके किये हुए कर्मोंके अनुसार भोग प्राप्त कराता है, वह नवीन शुभ कर्मोंके होनेमें बाधा नहीं डाल सकता। जो बाधा प्राप्त होती है वह साधककी कमजोरीसे होती है। पूर्वसञ्चित पुण्योंके सिवा श्रद्धा और प्रेमपूर्वक कोशिश करनेपर भी मेरी कृपासे सत्संग मिल सकता है।

साधक–प्रभो ! बहुत-से लोग सत्संग करनेकी कोशिश करते

हैं, पर जब सत्संग नहीं मिलता तो भाग्यकी निन्दा करने लग जाते हैं। क्या यह ठीक है ?

भगवान्–ठीक है, किन्तु उसमें धोखा हो सकता है। साधनमें ढीलापन आ जाता है। जितना प्रयत्न करना चाहिये उतना करनेपर यदि सत्संग न हो तो ऐसा माना जा सकता है, परंतु इस विषयमें प्रारब्धकी निन्दा न करके अपनेमें श्रद्धा और प्रेमकी जो कमी है उसीकी निन्दा करनी चाहिये; क्योंकि श्रद्धा और प्रेमसे नया प्रारब्ध बनकर भी परम कल्याणकारक सत्संग मिल सकता है।

(यह लेख गीताप्रेसकी पुस्तक 'ध्यानावस्थामें प्रभुसे वार्तालाप' कोड नं. 299 से लिया है)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण ....

।। श्रीहरिः ।।

अन्तकालके स्मरणका महत्त्व

(प्रवचन नं. 27) स्वर्गाश्रम, वटवृक्ष

प्रातःकाल 01-06-1941

यह भूमि तो बड़ी पवित्र है। सैंकड़ों कोसमें ऐसी जगह नहीं मिलेगी, घर जाकर भी इस भूमिको याद कर लें तो वैराग्य हो जाय। यह मायापुरी है (कनखलसे लेकर लक्ष्मण झूले तक), इसमें मरनेसे फिर संसारमें आना नहीं होता।

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् ।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥

(गीता 8/5)

अर्थात्– जो पुरुष अन्तकालमें भी मुझको ही स्मरण करता हुआ शरीरको त्याग कर जाता है, वह मेरे साक्षात् स्वरूपको प्राप्त होता है–इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

भगवान् कहते हैं कि मनुष्य शरीर पाकर भी यदि इसका कल्याण नहीं हुआ, तो मरते समय तो किसी तरह इसका कल्याण होना चाहिये। इसलिये भगवान्ने यह नियम रखा कि मरते समय किसी तरह भी मेरा स्मरण हो गया तो कल्याण हो जायेगा।

जिस अपराधीको सरकार फाँसी की सज़ा देती है उसको भी फाँसी देते समय [अन्तसमयमें] उसकी इच्छापूर्ति करती है, अतः भगवान्ने भी जीवनकी यात्रा समाप्तिके समय और विशेष कानून बना दिया कि मरते समय मेरा स्मरण कर ले तो वह मुझे प्राप्त हो जाता है इसमें कोई शंका नहीं। भगवान्ने यह कानून सिर्फ अपने लिये ही नहीं बनाया है वरं सबके लिये ही बनाया है–

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् ।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ॥

(गीता 8/6)

अर्थात्– हे कुन्तीपुत्र अर्जुन ! यह मनुष्य अन्तकालमें जिस-जिस भी भावको स्मरण करता हुआ शरीरको त्यागता है, उस उसको ही प्राप्त होता है। क्योंकि वह सदा जिस भावका चिन्तन करता है, अन्तकालमें भी प्रायः उसीका स्मरण होता है।

अन्तकालमें जिस चेतनकी स्मृति हुई तब तो वह वैसा ही चेतन जीव हो जायेगा, पर यदि जड़ पदार्थकी स्मृति हुई तो मकानमें रहनेवाला चींटी-चूहा आदि बन जाता है, किन्तु भगवान्की स्मृति हो जाती है तो भगवान्की प्राप्ति हो जाती है। इसीसे भगवान् कहते हैं–

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च ।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम्॥

(गीता 8/7)

अर्थात्– हे अर्जुन ! तू सब समयमें निरन्तर मेरा स्मरण कर और युद्ध भी कर, इस प्रकार मेरेमें अर्पण किये हुए मन, बुद्धिसे युक्त हुआ तू निःसन्देह मेरेको ही प्राप्त होगा।

मन, बुद्धि मुझमें ही अर्पण कर दे। **मनका अर्पण करना क्या?**–हर वक्त भगवान्का चिन्तन करना। **बुद्धिका अर्पण करना क्या?**–बुद्धिमें भगवान्के अस्तित्त्वका निश्चय होना। ऐसा होनेसे अन्तसमयमें भगवान्का स्मरण होगा ही।

अब **नियतात्मभिः** (गीता ८/२) की बात चलती है। सगुण-साकार, निर्गुण-निराकार, सगुण-निराकार तीनों ही भगवान् श्रीकृष्ण हैं। इस जगह भगवान् श्रीकृष्णका ही ध्यान है, उस निराकार स्वरूपको लिये हुए ही भगवान्के सगुण-साकारके स्वरूपका यहाँ ध्यान है, क्योंकि **माम्** पदसे समग्र रूपका वर्णन है। भगवान् कहते हैं अधियज्ञ मैं ही हूँ। भगवान् कहते हैं कि मन, बुद्धि मुझे ही अर्पण कर दो।

अब नियतात्मपुरुषोंको किस तरह जाननेमें आता हूँ।

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना ।
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन् ॥

(गीता 8/8)

अर्थात्- हे पार्थ ! यह नियम है कि परमेश्वरके ध्यानके अभ्यासरूप योगसे युक्त अन्य तरफ न जानेवाले चित्तसे निरन्तर चिन्तन करता हुआ पुरुष परम प्रकाशस्वरूप, दिव्य पुरुषको अर्थात् परमेश्वरको ही प्राप्त होता है।

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन् ।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम् ॥

(गीता 8/13)

अर्थात्- जो पुरुष 'ॐ' ऐसे इस एक अक्षररूप ब्रह्मको उच्चारण करता हुआ और उसके अर्थस्वरूप मेरेको चिन्तन करता हुआ, शरीरको त्यागकर जाता है, वह पुरुष परमगतिको प्राप्त होता है।

अब यह बात आती है कि अन्त समयमें तो इतना करना बड़ा मुश्किल है, इसे भी नियतात्म पुरुष ही कर सकते हैं। तो अब भगवान् वही गीता अध्याय 8 श्लोक 5-6-7 में कही हुई बात कहते हैं।

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥

(गीता 8/14)

अर्थात्- हे अर्जुन ! जो पुरुष मेरेमें अनन्यचित्तसे स्थित हुआ, सदा ही निरन्तर मेरेको स्मरण करता है, उस निरन्तर मेरेमें युक्त हुए योगीके लिये मैं सुलभ हूँ, अर्थात् सहज ही प्राप्त हो जाता हूँ।

अनन्यचित्तसे स्मरण करनेवालेके लिये उपर्युक्त कठिन क्रिया नहीं करनी पड़ती।

सगुण-निराकार और निर्गुण निराकार दोनों ही साधन कठिन हैं, पर सगुण-साकार साधन सरल है।

अर्जुनकी तरह हम भी सोवें तो भगवान्को साथ लेकर सोवें, खावें तो भगवान्के साथ खावें। जैसे मन कहीं रहता है और भोजन करते रहते हैं, तो मनको कहीं न जाने दें और भगवान्का स्मरण करें। शरीर निर्वाहकी क्रिया तो प्रारब्ध अनुसार होती रहेगी, पर मनको भगवान्में लगा दें।

निर्गुण-निराकार, सगुण-निराकारके दो कठिन साधन न बतलाकर सरल साधन रखा, जिससे सरलकी तरफ सभीका मन चलता है।

मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते ॥

(गीता 8/16)

अर्थात्- परन्तु हे कुन्तीपुत्र ! मेरेको प्राप्त होकर उसका पुनर्जन्म नहीं होता है, क्योंकि मैं कालातीत हूँ और यह सब ब्रह्मादिकों के लोक काल करके अवधिवाले होनेसे अनित्य हैं।

यहाँ भगवान्की प्राप्ति ही परम सिद्धि है, परमगति है। अब भगवान् अपनी प्राप्तिकी विशेषता बतला रहे हैं।

आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन ।

(गीता 8/16)

अर्थात्- हे अर्जुन ! ब्रह्मलोकसे लेकर सब लोक पुनरावर्ती स्वभाववाले अर्थात् जिनको प्राप्त होकर पीछे संसारमें आना पड़े, ऐसे हैं।

औरों की तो बात ही क्या, ब्रह्मलोक तक के लोकमें गये हुए लोग वापस आ जाते हैं। पर परमात्माको प्राप्त हुए वापस नहीं आते।

अब यह बताते हैं कि ब्रह्मलोक तक के वापस क्यों आते हैं कि काल करके अवधिवाले हैं।

सहस्त्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः।

(गीता 8/17)

कलियुगसे दुगुना द्वापर है, तिगुना त्रेता है, चार गुना सत्युग है। ऐसे हजार बार चतुर्युगी होवे इतनी ब्रह्माकी रात है, उतना ही दिन है।

अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे ।

(गीता 8/18)

ब्रह्माके दिनका आदि ही सर्गका आदि है। ब्रह्माके दिनका अन्त ही सर्गका अन्त है। ब्रह्माके अव्यक्त शरीरसे ही उनके दिनके आदिमें ब्रह्मा ही सम्पूर्ण जीवोंको रचते हैं। जैसे कुम्हार मिट्टीके बर्तन बनाता है। निमित्त और उपादान दोनों ही कारण ब्रह्मा हैं। ब्रह्माका भी कारण परमात्मा है। ब्रह्माकी रात्रिके आरम्भमें सबके सब उसीमें विलीन हो जाते हैं।

भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते ।

(गीता 8/19)

उत्पन्न होवे और लीन होवे, उत्पन्न होवे और लीन होवे, इसलिये **भूत्वा भूत्वा** दो शब्द दे दिये। बार-बार ऐसा होता ही रहता है। जो मेरी प्राप्ति नहीं करता है वह इस चक्करमें चढ़ा ही रहता है। इससे ध्वनि निकलती है कि मेरी प्राप्तिकी ही चेष्टा करो।

(यह प्रवचन पेड नं. ११६ से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण..........

॥ श्रीहरिः ॥

भगवान्‌को खोकर भोगोंमें मन देना मूर्खता है

(प्रवचन नं. 28) गोरखपुर-बगीचेमें

दोपहर 20-11-1937

एक बड़े धनी सेठ थे। उसके यहाँ ग्वालिन आयी (बंगालकी बात है।) सूर्य अस्त होनेमें समय कम था। वह बोली, पैसा देन (पैसा दीजिये) उसके मुनीमने कहा—थोड़ी देर ठहरो। वह फिर बोली-समय नहीं है। मुनीमने कहा—थोड़ा और ठहरो। उसने फिर कहा—समय नहीं है। तीन बार उस स्त्रीने कहा, सूर्य डूब रहा है, समय नहीं है। तो फिर सेठने उसको पैसा दिलवा दिया और उसी समय रुपयों-पैसों का सबका हिसाब ठीक करके चल पड़ा, बोला समय नहीं है। हमारा सूर्य अस्ताचलमें जा रहा है। उस सेठको ग्वालिनका इतना ही उपदेश लग गया और प्रभुके शरण होकर महान् भक्त हो गया। हमारा भी यही हाल है, समय कहाँ है।

अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम् ।

(गीता 9/33)

अर्थात्– इसलिये तू सुखरहित और क्षणभंगुर इस मनुष्य शरीरको प्राप्त होकर निरन्तर मेरा ही भजन कर अर्थात् मनुष्य शरीर बड़ा दुर्लभ है; परन्तु है नाशवान और सुखरहित, इसलिये कालका भरोसा न करके तथा अज्ञानसे सुखरूप भासनेवाले विषयभोगोंमें न फंसकर निरन्तर मेरा ही भजन कर।

ऐसे शरीरको पाकर **मां भजस्व** मेरा ही भजन कर। कैसा भजन **मन्मना भव** (गीता 9/34) मेरे सिवा किसीको मनमें स्थान मत

दे। मेरा भक्त हो। मेरे सिवा किसीमें प्रेम करनेवाला मत हो। **मन्मना** से मनका, **मद्भक्तो** से अपने आपका समर्पण हो गया, **मद्याजी** से मेरा पूजन करनेवाला हो जा।

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम् ।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः ॥

(गीता 18/46)

अर्थात्- हे अर्जुन ! जिस परमात्मासे सर्व भूतोंकी उत्पत्ति हुई है और जिससे यह सर्व जगत् व्याप्त है उस परमेश्वरको अपने स्वाभाविक कर्मोंद्वारा पूजकर मनुष्य परमसिद्धिको प्राप्त होता है।

सारी इन्द्रियाँ भगवान्‌में ही लगा दें। **मां नमस्कुरु** से अपने आपको भगवान्‌के अर्पण कर दे। भगवान् कहते हैं–तू निश्चय मुझको ही प्राप्त होगा। कोई कहे समय कहाँ है? जो समय बचा है वह सारा समय प्रभुके समर्पण कर देना चाहिये। पहलेका सारा समय सांसारिक भोगोंमें चला गया, अब जो समय बचा है वह सारा समय भजन स्मरणमें लगाना चाहिये। जो इस प्रकार समझता है वही पुरुष धन्य है। जो बचा हुआ समय प्रभुके अर्पण कर दे यानी भगवान्‌के भजन-ध्यानमें बितावे वही समयकी कदर जानता है। किसी संतने कहा है–

आये थे कछु लाभ को, खोय चले सब मूल ।
फिर जावोगे सेठ पास, तो पले पड़ेगी धूल ॥

क्या फिर हमको मनुष्य शरीर मिलेगा? जब हम ठीक तरहसे समय नहीं बितायेंगे तो आगे जाकर सेठको क्या जवाब देंगे। इसलिये बचा हुआ समय तो प्रभुको समर्पण करो। यानी भगवान्‌के भजन-ध्यानमें बिताओ।

पायो परम पद हाथ सो जात, गई सो गई अब राख रही को ।

उदाहरण– एक धनी आदमी था। किसीको 100 रुपये व्यापार करनेके लिए उधार दिये और कहा कि मूल पूँजीमेंसे खर्च मत करना। उसने 100 रुपयोंमेंसे 75 रुपये खर्च कर दिये, 25 रुपये शेष रहे। तब उसके मिलनेवाले लोगोंने कहा मालिक बड़ा दयालु है जो कुछ बचा है वह लेकर चलो, तो वह बोला मेरी तो सेठजीके पास जानेकी हिम्मत नहीं है, आपलोग साथ चलो, तो वे लोग दयालु थे साथ चले गये। उसने सेठको सच्चा हाल कह दिया, संकोच और दुःख प्रदर्शित किया। तब मालिकने क्षमा कर दिया। इसी प्रकार हमलोग जो आयु भगवान्‌से लेकर आये थे अधिकांशतः खो चुके हैं। अब भी बाकी बची हुई आयु भगवान्‌को सौंप दें यानी उनके भजन-ध्यानमें ही समय बितावें तो ठीक है। महात्मा लोग भी सच्चे आदमीकी सिफारिश भगवान्‌से कर देते हैं। परन्तु जो लोग अब भी छिपाकर बात करते हैं, कपट रखते हैं, और शेष बचे 25 हैं बताता 15 है, उसकी सुनवाई नहीं होती। महात्माको भी भगवान् कहते हैं इसकी जेब तो सम्हालो। यदि 99 रुपये खर्च हो गये, और एक रुपया भी बचा हो तो वह तो पूरा-का-पूरा सौंप दो। उसमें भी चोरी करो तो काम नहीं चल सकता। मनुष्यका जीवन अमूल्य है किसी भक्तका कहना है–

हाथ उठाके कहत हूँ कहाँ बजाऊँ ढोल ।
श्वासा खाली जात है तीन लोक का मोल ॥

एक-एक श्वासका मूल्य त्रिलोकी है। अन्तके श्वासमें यदि भगवान्‌की स्मृति हो गई तो उसको भगवान्‌की प्राप्ति हो जावे।

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् ।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः ॥

(गीता 8/5)

अर्थात्– भगवान् कहते हैं–जो पुरुष अन्तकालमें मेरेको ही

स्मरण करता हुआ शरीरको त्यागकर जाता है, वह मेरे साक्षात् स्वरूपको प्राप्त होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है।

तीनों लोकका मूल्य तो किस गिनतीमें है एक क्षणका मूल्य बहुत अधिक है। भगवान्‌की प्राप्ति एक सालमें नहीं, एक महीनेमें, एक दिनमें, एक घड़ीमें क्या, एक क्षणमें हो सकती है। भगवान्‌के अनन्य शरण होनेसे किंचित् मात्र भी अपना किसीमें अधिकार नहीं समझे। सदाके लिये अपने आपको भूलकर प्रभुमें अनन्य होकर प्रभु आश्रित हो जावे। यानी भगवान्‌में स्थित हो जावे, भगवान्‌के सिवाय दूसरी तरफ मन जावे ही नहीं, भगवान्‌की स्मृति ही जीवनका आधार बन जावे तो उसी क्षण प्रभुकी प्राप्ति हो जावे। उससे भी अधिक मूल्य समयका है।

प्रभुका ऐसा कानून है कि अगर अन्त समयमें एक सेकेण्ड आपके हाथमें है, प्राण जानेवाले हैं, बस ! उसी समय आपकी मुक्ति हो सकती है। कैसै? प्रभुकी स्मृति या नामजप से। प्रभु बड़े दयालु हैं, प्रभुके यहाँ बड़ी छूट है। बादशाह भी फाँसीकी सजावालेको छूट देता है, फाँसी तो होगी ही पर इसकी इच्छा पूर्ण करने लायक होगी तो करेंगे। परन्तु प्रभु तो कहते हैं अन्त समयकी इच्छा अवश्यमेव पूर्ण होगी।

महान् पापी है, अन्त समयमें कैसा भी हो, कोई भी हो, भगवान्‌का स्मरण करनेके साथ ही उद्धार हो जाता है। इतनी भारी छूट है। पापियोंके लिये ही है, धर्मात्माको तो जरूरत ही क्या? प्रभु सोचते हैं अब यह मर जायेगा तो फिर न मालूम लाख या करोड़ जन्मके बाद कब मनुष्य होगा। प्रभु बड़े दयालु हैं, यह अन्त समयका मौका देते हैं। उस समय सब गुनाह माफ हैं, अन्तकालमें भगवान्‌का स्मरण करते जाओगे परमपदको प्राप्त हो जाओगे।

आपने समयकी कितनी कदर की है? यदि आप रुपये कमानेमें समय खोते हैं, तो धोखेमें हो। शरीर पोषणमें, कुटुम्ब पालनमें समय बिताते हो, तो भी मूर्खता है। सोचो—एक तरफ रुपया, एक तरफ भगवान्। नतीजा क्या होगा? एक तरफ शरीरका पोषण, दूसरी तरफ भगवान्। क्या हुआ शरीर पोषणमें, दो सेर मिट्टी ही तो बढ़ाई (यानी शरीरका ख्याल करनेसे वजन ही तो बढ़ेगा)। स्त्री-पुत्रोंका पोषण—अरे मूर्ख ! सारा संसार तुम्हारा ही कुटुम्ब है, यह तो तुम्हारी बड़ी मूर्खता है। कहाँ भौतिक उन्नति और कहाँ भगवान् ! भगवान्‌को खोकर इस प्रकार समय बिताता है? तुलसीदासजी कहते हैं—

ताहि कबहुँ भल कहइ न कोई । गुंजा ग्रहइ परस मनि खोई ॥

(रा.च.मा. उत्तर 44/2)

अर्थ— जो चिरमीको लेकर पारस खोता है। यानी जो पारसमणिको खोकर बदलेमें घुँघची लेता है, उसको कभी कोई भला (बुद्धिमान) नहीं कहता।

चिरमीका मूल्य एक कौडी भी नहीं है। भगवान्‌को खोकर समयको विषय भोगोंमें लगाते हो। मूढ़ ! चिरमी देखने मात्रसे ही सुन्दर है, उसका मूल्य कुछ नहीं है। पारस देखनेमें पत्थर है, परन्तु उसका मूल्य संसारभरको खरीद सकता है। चिरमीमें लाली चमकती है पर मुँह काला है। विषय भोग सुहावने दिखते हैं परन्तु भोगोंको भोगनेके अन्तमें मुँह काला है। प्रभुको नहीं भजोगे तो मरनेके बाद घोर नरकमें पड़ोगे। प्रभु साक्षात् अमृत हैं, प्रभुको पाकर अमर हो जाओगे। फिर कभी जन्मोगे मरोगे नहीं। ऐसे प्रभुको छोड़कर विषयभोगरूप विषपान करते हो, तो सदा जन्मते मरते रहोगे।

नर तनु पाइ बिषयँ मन देहीं । पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं ॥

(रा.च.मा. उत्तर 44/1)

ऐसा मनुष्य शठ, मूर्ख, मूढ़ है। प्रत्यक्ष बात है संसारमें विषयोंका चिन्तन है यह विष खाना है। प्रभुका चिन्तन और चितवन अमृत है। प्रभुके ध्यानमें जो आनन्द है वह त्रिलोकीके राज्यमें भी नहीं है।

विषयोंका विष– गुड़में लपेटा हुआ, लड्डूमें छिपाया हुआ विष है। दुर्योधनने भीमको लड्डूमें विष डालकर दिया था, भीम प्रसन्नतासे खा गया फिर दुर्योधनने लता-पतासे लपेटकर समुद्रमें गिरा दिया। समुद्रमें नाग लोकमें चला गया, और साँपोंने विष चूस लिया उससे उसका विष उतर गया। वह सावधान होकर घर चला गया, भीमको ऐसा मौका मिल गया तब तो बच गया नहीं तो मर जाता। उसने धोखेसे विष भरा लड्डू खाया, हम तो डंकेकी चोट खा रहे हैं। शास्त्र, महात्मा स्पष्ट कह रहे हैं, घोषणा कर रहे हैं कि यह विष है। भीमको कोई कह देता तो क्या वह खाता? इसलिये हमलोगोंको हमारा समय विषय-भोगोंमें न बिताकर प्रभुके भजन-ध्यानमें ही बिताना चाहिये। भजन-ध्यानका आनन्द प्रत्यक्ष है ऐसा नहीं है जैसे श्राद्ध, दानका फल परलोकमें मिलता है।

(यह प्रवचन पेड नं. ११६ से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण..........

।। श्रीहरिः ।।

भगवान्‌के रहनेके पाँच स्थान पुस्तक का अंश

(प्रवचन नं. 29)

ब्राह्मणने पूछा– देव ! आपने पिताके लिये किये जानेवाले श्राद्ध नामक महायज्ञका वर्णन किया। अब यह बताइये कि पुत्रको पिताके जीते-जी क्या करना चाहिये; कौन-सा कर्म करके बुद्धिमान पुत्रको जन्म-जन्मान्तरोंमें परम कल्याणकी प्राप्ति हो सकती है। ये सब बातें यत्नपूर्वक बतानेकी कृपा कीजिये।

श्रीभगवान् बोले– विप्रवर ! पिताको देवताके समान समझकर उनकी पूजा करनी चाहिये और पुत्रकी भाँति उनपर स्नेह रखना चाहिये। कभी मनसे भी उनकी आज्ञाका उल्लंघन नहीं करना चाहिये। जो पुत्र रोगी पिताकी भलीभाँति परिचर्या करता है, उसे अक्षय स्वर्गकी प्राप्ति होती है और वह सदा देवताओं द्वारा पूजित होता है। पिता जब मरणासन्न होकर मृत्युके लक्षण देख रहे हों, उस समय भी उनका पूजन करके पुत्र देवताओंके समान हो जाता है। (पिताकी सद्‌गतिके निमित्त) विधिपूर्वक उपवास करनेसे जो लाभ होता है, अब उसका वर्णन करता हूँ। सुनो, हजार अश्वमेध और सौ राजसूय यज्ञ करनेसे जो पुण्य होता है, वही पुण्य (पिताके निमित्त) उपवास करनेसे प्राप्त होता है। वही उपवास यदि तीर्थमें किया जाय तो उन दोनों यज्ञोंसे करोड़ गुना अधिक फल मिलता है। जिस श्रेष्ठ पुरुषके प्राण गंगाजीके जलमें छूटते हैं, वह पुनः माताके दूधका पान नहीं

करता, वरं मुक्त हो जाता है। जो अपने इच्छानुसार काशीमें रहकर प्राण-त्याग करता है, वह मनोवांछित फल भोगकर मेरे स्वरूपमें लीन हो जाता है।

वाराणस्यां त्यजेद्यस्तु प्राणांश्चैव यदृच्छया ।
अभीष्टं च फलं भुक्त्वा मद्देहे प्रविलीयते ॥

(पद्मपु., सृष्टिख. ४७/२५४)।

योगयुक्त नैष्ठिक ब्रह्मचारी मुनियोंको जिस गतिकी प्राप्ति होती है, वही गति ब्रह्मपुत्र नदीकी सात धाराओंमें प्राणत्याग करनेवालेको मिलती है। विशेषतः (अन्तकालमें) जो सोन नदीके उत्तर तटका आश्रय लेकर विधिपूर्वक प्राणत्याग करता है, वह मेरी समानताको प्राप्त होता है। जिस मनुष्यकी मृत्यु घरके भीतर होती है, उस घरके छप्परमें जितनी गाँठे बँधी रहती हैं, उतने ही बन्धन उसके शरीरमें भी बँध जाते हैं। एक-एक वर्षके बाद उसका एक-एक बन्धन खुलता है। पुत्र और भाई-बन्धु देखते रह जाते हैं, किसीके द्वारा उसे उस बन्धनसे छुटकारा नहीं मिलता। पर्वत, जंगल, दुर्गमभूमि या जलरहित स्थानमें प्राण-त्याग करनेवाला मनुष्य दुर्गतिको प्राप्त होता है। उसे कीड़े आदिकी योनिमें जन्म लेना पड़ता है। जिस मरे हुए व्यक्तिके शवका दाह-संस्कार मृत्युके दूसरे दिन होता है, वह साठ हजार वर्षोंतक कुम्भीपाक नरकमें पड़ा रहता है। जो मनुष्य अस्पृश्यका स्पर्श करके या पतितावस्थामें प्राण त्याग करता है, वह चिरकालतक नरकमें निवास करके म्लेच्छ-योनिमें जन्म लेता है। पुण्यसे अथवा पुण्यकर्मोंका अनुष्ठान करनेसे मर्त्यलोकनिवासी सब मनुष्योंकी मृत्युके समय जैसी बुद्धि होती है, वैसी ही गति उन्हें प्राप्त होती है।

पिताके मरनेपर जो बलवान् पुत्र उनके शरीरको कन्धेपर ढोता है, उसे पग-पगपर अश्वमेध यज्ञका फल प्राप्त होता है। पुत्रको

चाहिये कि वह पिताके शवको चितापर रखकर विधिपूर्वक मन्त्रोच्चारण करते हुए पहले उसके मुखमें आग दे, उसके बाद सम्पूर्ण शरीरका दाह करे। (उस समय इस प्रकार कहे—) 'जो लोभ-मोहसे युक्त तथा पाप-पुण्यसे आच्छादित थे, उन पिताजीके इस शवका, इसके सम्पूर्ण अंगोका मैं दाह करता हूँ; वे दिव्यलोकमें जायँ। इस प्रकार दाह करके पुत्र अस्थि-संचयके लिये कुछ दिन प्रतीक्षामें व्यतीत करे फिर यथासमय अस्थि-संचय करके दशाह (दसवाँ दिन) आनेपर स्नान कर गीले वस्त्रका परित्याग कर दे, फिर विद्वान् पुरुष ग्यारहवें दिन एकादशाह-श्राद्ध करे और प्रेतके शरीरकी पुष्टिके लिये एक ब्राह्मणको भोजन कराये। उस समय वस्त्र, पीढ़ा और चरणपादुका आदि वस्तुओंका विधिपूर्वक दान करे। दशाहके चौथे दिन किया जानेवाला (चतुर्थाह) तीन पक्षके बाद किया जानेवाला (त्रैपाक्षिक अथवा सार्धमासिक), छः मासके भीतर होनेवाला (ऊनषाण्मासिक) तथा वर्षके भीतर किया जानेवाला (ऊनाब्दिक) श्राद्ध और इनके अतिरिक्त बारह महीनोंके बारह श्राद्ध—कुल सोलह श्राद्ध माने गये हैं। जिसके लिये ये सोलह श्राद्ध यथाशक्ति श्रद्धापूर्वक नहीं किये जाते, उसका पिशाचत्व स्थिर हो जाता है। अन्यान्य सैकड़ों श्राद्ध करनेपर भी प्रेतयोनिसे उसका उद्धार नहीं होता। एक वर्ष व्यतीत होनेपर विद्वान् पुरुष पार्वण श्राद्धकी विधिसे सपिण्डीकरण नामक श्राद्ध करे।

(यह लेख गीताप्रेसकी पुस्तक 'भगवान्‌के रहनेके पाँच स्थान' कोड् नं. 261 से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण..........

॥ श्रीहरिः ॥

नामजपसे विधाताके लेख मिट जाते हैं और उसकी भगवान् स्वयं रक्षा करते हैं ।

(प्रवचन नं. 30)

सकृदपि परिगीतं श्रद्धया हेलया वा ।
भृगुवर नरमात्रं तारयेत् कृष्णनाम ॥

अर्थात्– श्रद्धासे, अवहेलनासे–कैसे भी एक बार भी किया हुआ कृष्णनामका कीर्तन मनुष्यमात्रको तार देता है।

प्रश्न– वर्षोंसे चेष्टामें लगा हूँ, बहुतेरे साधु-महात्माओंके दर्शन किये, तीर्थोंमें घूमा, मंत्रोंके अनुष्ठान किये, नाना प्रकारकी साधनाएँ की पर मेरा दुष्ट मन किसी प्रकार भी वशमें नहीं होता। शास्त्र और संत कहते हैं मनके वशमें हुए बिना भगवान्‌की प्राप्ति नहीं होती। यह तो निर्विवाद है कि भगवान्‌की प्राप्ति हुए बिना जीवन व्यर्थ है। मैं हताश हो गया हूँ, मैं चाहता हुआ भी भगवान्‌को नहीं पा सकूँगा, मेरे लिये कोई उपाय है? भगवान् क्या दया करके मुझ सरीखे चंचल चित्तको अपना लेंगे?

उत्तर– बात यह है, सच्ची लगन हो और दृढ़ता पूर्वक अभ्यास किया जाय तो मनका वशमें होना असम्भव नहीं है। मन वशमें करनेके बहुतसे उपाय हैं, उसके द्वारा मन वशमें अवश्य ही हो सकता है। परन्तु इस कलियुगी जीवनमें कहीं शान्ति नहीं है। नाना प्रकारकी आधि, व्याधियोंसे मनुष्यका मन सदा घिरा रहता है इसलिये मनको वशमें करनेके साधनमें लगाना बड़ा कठिन है। साधनमें लगनेपर भी नाना प्रकारके विघ्नोंके कारण सच्ची लगन और दृढ़ विश्वासका होना भी कठिन ही है।

प्रश्न– तो फिर क्या मनुष्य जीवनकी सफलताका कोई उपाय नहीं है?

उत्तर– है क्यों नहीं? वही बतला रहा हूँ। वह ऐसा सुन्दर उपाय है जिसे ब्राह्मणसे चाण्डाल तक, परम विद्वान्‌से वज्रमूर्ख तक, स्त्री-पुरुष सदाचारी कदाचारी सभी सहज ही कर सकते हैं। वह उपाय है वाणीके द्वारा भगवान्‌के नामकी रटन। कोई किसी भी अवस्थामें हो, नाम-जप अपने स्वाभाविक गुणसे जपनेवालेका मनोरथ पूर्ण कर सकता है और उसे अन्तमें भगवान्‌की प्राप्ति करा देता है। और साधनोंमें मनके वशमें होने तथा शुद्ध होनेकी आवश्यकता है। भावके अनुसार ही साधनका फल हुआ करता है। परन्तु नाम-जपमें यह बात नहीं है, किसी भी भावसे नाम लिया जाय वह तो कल्याणकारी ही है।

भायँ कुभायँ अनख आलसहूँ । नाम जपत मंगल दिसि दसहूँ ॥

(रा.च.मा.बालकाण्ड २८/१)

अर्थ– अच्छे भाव (प्रेम) से, बुरे भाव (वैर) से, क्रोधसे या आलस्यसे, किसी तरहसे भी नाम जपनेसे दसों दिशाओंमें कल्याण होता है।

इसलिये मन वशमें हो चाहे न हो। कैसा भी भाव हो, तुम विश्वास करके जैसे बने वैसे ही भगवान्‌का नाम लिये जाओ और निश्चय करो कि भगवान्‌के नामसे तुम्हारा अन्तःकरण निर्मल हुआ जा रहा है और तुम भगवान्‌की ओर बढ़ रहे हो। नाम लेते रहें, तांता न टूटा तो निश्चय ही इसीसे तुम अन्तमें भगवान्‌को पाकर कृतार्थ हो जाओगे।

कलिजुग सम जुग आन नहिं जौं नर कर बिस्वास ।
गाइ राम गुन गन बिमल भव तर बिनहिं प्रयास ॥

(रा.च.मा.उत्तरकाण्ड १०३ क)

अर्थ– यदि मनुष्य विश्वास करे, तो कलियुगके समान दूसरा युग नहीं है। [क्योंकि] इस युगमें श्रीरामजीके निर्मल गुणसमूहोंको गा-गाकर मनुष्य बिना ही परिश्रम संसार [रूपी समुद्र] से तर जाता है।

हरेर्नाम हरेर्नाम हरेर्नामैव केवलम् ।
कलौ नास्त्येव नास्त्येव नास्त्येव गतिऽरन्यथा ॥

अर्थात्– कलियुगमें केवल हरिका नाम ही सार है। मैं प्रतिज्ञा करके कहता हूँ, कलियुगमें हरिनामको छोड़कर दूसरी गति नहीं है, नहीं है, नहीं है।

श्रीप्रेमलताजीके वचनामृतमें नाम माहात्म्यकी बहुत-ही महत्वपूर्ण दिव्य वाणी है। कुटिलकर्मकी रेख भी नाम जपसे मिट जाती है। भगवान् स्वयं नाम-जापककी रक्षामें रहते हैं, इसलिये भगवान्का नाम जितना जपा जाय अधिक-से-अधिक निरन्तर लेते रहना चाहिये।

नाम रटन कहु कौन प्रयासा केवल जीभ हिलाना है।
लाभ अमित अति अकथ अनूपम गावत वेद पुराना है॥
नहि कोउ धर्म कर्म साधन सिधि तेहि सम ज्ञान न ध्याना है।
'प्रेमलता' ते धन्य नाम जिन सब विधि सर्वस माना है ॥१॥

कुटिल कर्म की रेख कठिन जो नाम रटे मिट जाती है।
अनहोनी ह्वै जात भलाई दसहू दिसि दरसाती है॥
मृत्यु मातु सम होइ नाम बल जो सब जगको खाती है।
'प्रेमलता' सो धन्य संत जेहि नाम सु रटना भाती है ॥२॥

कोटिन विघ्न विलाय नाम-धुनि सुनि कर दे जाते टाला।
पावक शीतल होइ, हलाहल करै नाम बल प्रतिपाला॥
अरिहु मित्रता करै, डरै तेहि बाघ-भालु, बिच्छू-ब्याला।
'प्रेमलता' जो सदा नामकी फेरा करता है माला ॥३॥

रामरूप धनु-बाण धारि कर, रक्षामें नित रहते हैं।
शिव त्रिशूल धरी, ब्रह्म दण्डकर, विष्णु चक्र नित लहते हैं॥
नारायण धरि गदा कौमुदी, जापकके रिपु दहते हैं।
'प्रेमलता' हनुमान मनोरथ पुरवहिं, जो कुछ चहते हैं ॥४॥

सियजू भोजन देहि, शक्ति सब करैं आय सिरपर छाया।
दानव-देव, भूत-किंनर, पशु-पक्षी, जो जगमें जाया॥
नाम-प्रताप विषमता परिहरि, करत सकल निसिदिन दाया।
'प्रेमलता' तेहि भजहिं न जड़मति पाइ अनूपम नर-काया॥५॥

त्रिगुणमयी माया जो प्रभुकी, जग कहँ नाच नचावति है।
सृजी पालति, संहरति लोक पुनि, रुख लखि बहुरि नसावति है॥
ज्ञानी, सुर, मुनीसन्हके मन छन महँ पकरि डुलावति है।
'प्रेमलता' सोइ नाम-जापकनि शिशु सम लाड़ लड़ावति है ॥६॥

नाम-प्रभाव अपार बखानत, रामहुँ हिये लजाते हैं।
पतितहुँ पावन होत रटत जेहि, बिनु श्रम पर-पद पाते हैं॥
यवन गयो प्रभु-धाम नाम जपि, ब्याधऊ ब्रह्म कहाते हैं।
'प्रेमलता' ते धन्य लोकमें, जे सियराम सुगाते हैं ॥७॥

जितना रटिहौ नाम, अन्तमें उतना ही सुख पाओगे।
जो न मानिहौ सीख मोह बस, तो पिछे पछताओगे॥
रटे बिना सिय-राम नामको दर-दर धक्का खाओगे।
'प्रेमलता' सिय-राम भजन बिनु, यमपुर बाँधे जाओगे ॥८॥

रटो-रटो सियराम नाम अब, नाहक देर लगाओ जी।
लोक-लाज कुलकी मर्यादा, नाता-नेह बहाओ जी॥
कादरपन तजि कपट-चातुरी, नित नव प्रेम बढ़ाओ जी।
'प्रेमलता' धरि मनुज-देहको, ताहि न व्यर्थ नसाओ जी॥९॥

श्रीसिय-राम-नामकी महिमा बहुबिधि पढ़ते-सुनते हौ।
रटते काहे न खूब निरन्तर, बातें क्यों कर गढ़ते हौ॥
हटते हौ क्यों, भजन पन्थमें आगे क्यों नहिं बढ़ते हौ।
'प्रेमलता' सिय राम-भजन-पथ धाय न काहे चढ़ते हौ ॥१०॥

(हितोपदेशक ६८-७७)

नारायण ! नारायण !! नारायण !!!

(यह लेख पेड नं. 88, पृष्ठ संख्या 71,72 से लिया गया है)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण..........

॥ श्रीहरिः ॥

भगवान् राजी हों वह काम करें

(प्रवचन नं. 31) कलकत्ता, गोविन्दभवन
दिनांक 02-08-1959

प्रश्न– जन्म-मरणके रोगकी मुख्य दवा क्या है?

उत्तर– निष्कामभावसे भगवन्नाम-जप और भगवान्‌का ध्यान करना।

चाहे जो कुछ हो घबराना नहीं और चिन्ता नहीं करनी। भगवान्‌का मंगल विधान मानकर खूब प्रसन्न रहना चाहिये। करुणाभावसे रोकर भगवान्‌से प्रार्थना करनी चाहिये। अगर आँसू नहीं आवें तो करुणाभावसे प्रार्थना करनी चाहिये। भगवान्‌की दयाके बलपर निर्भर हो जावे तो फिर घबराहट नहीं आ सकती। जितना आत्मबल है उससे हठसे और भगवान्‌की कृपाके बलपर आप जो भी बातें पढ़ें उनको धारण करनी चाहियें, दृढ़तासे। ऐसी स्थिति बनानेके लिये आपमें जितनी ताकत है उसको लगाना चाहिये। हठसे भी लगानी चाहिये। सारी चेष्टा भगवान्‌में प्रेम होनेके लिये, भगवान्‌की प्राप्तिके लिये होनी चाहिये। बीमारीमें भगवान्‌की दया समझनी चाहिये, अगर शरीरमें ज्यादा बीमारी होवे और दुःख होवे तो समझना चाहिये भगवान् मुझको जल्दी शुद्ध करना चाहते हैं। ज्यादा दुःख होनेसे भगवान्‌का स्मरण और याद ज्यादा आती है। इसलिये भगवान्‌को हर समय याद रखनेकी चेष्टा रखनी चाहिये। भगवान्‌को कहें कि आपमें प्रेम बना रहे चाहे शरीरमें कितने ही दुःख होते रहें।

अन्तःकरणकी शुद्धिके लिये नाम-जप, निष्काम-कर्म और निष्काम-सेवा करनेसे बहुत जल्दी शुद्धि होती है। तीर्थ, व्रत, सत्संग,

यज्ञ, दान, सेवा आदिके साथमें निष्काम-भाव जोड़ दिया जाय तो सबकी सामर्थ्य बढ़ जाती है। थोड़ा-सा निष्काम भाव संसारसे मुक्ति करा देता है। निष्कामका बड़ा भारी महत्व है। भीतरमें स्वार्थ है तो कलंक है।

गीताप्रेसका काम बेगार नहीं है साधनका काम है। गीताप्रेसका जितना काम है उन सभीको साधन माने।

जैसे कोई दरिद्र नारायण सड़क पर पड़ा है, उसको अस्पतालमें भर्ती करा दिया तो यह भगवान्‌का काम हो गया। छोटे-से-छोटा काम भी भाव उत्तम होनेसे बहुत उत्तम हो जाता है।

मरनेवालेको नाम सुनाया जाता है, सो जिसकी पारीमें मृत्यु होती है उसको विशेष लाभ है और दूसरोंको भी लाभ है।

भगवान्‌ने मृत्युके समय एक क्षणकी छूट दी है। मनुष्यने कितने ही पाप किये हों अन्तिम क्षणमें भगवान्‌का स्मरण हो जावे तो उसका कल्याण है।

गीताप्रेसकी पुस्तकोंका प्रचार है, यह भी परमसेवा है। और को परमसेवाका रूप देना पड़ता है क्योंकि भगवान् कहते हैं सब काम सेवा है, पर निष्काम भावसे करनेसे सब परमसेवा है। गीताजीका प्रचार, पुस्तक प्रचार, मृत्युके समय नाम सुनाना, व्याख्यान यह सब परम सेवा है।

बीमारोंको अस्पतालमें भर्ती करा देना, अगर वहाँके कम्पाउन्डर लोगोंको कुछ देना पड़े तो दे देना चाहिये। यह घूस नहीं है, यह तो इनाम है उसमें अपना क्या स्वार्थ है।

यहाँपर आपलोगोंकी दृष्टिमें परमसेवा और सेवाका विभाग है इसलिये दो है, हमारी दृष्टिमें तो सब परम सेवा है।

अपने तो सारे काम भगवान्के लिये करने हैं। जो भगवान्के काम नहीं हैं यानी पापकर्म, वे काम नहीं करने चाहिये। जिस कामसे भगवान् राजी होते हैं वह भगवान्का काम है। जिस कामके लिये भगवान्की आज्ञा है वह भगवान्का काम है। जिस कामके लिये भगवान्ने आज्ञा नहीं दी है वह भगवान्का काम नहीं है, वह नहीं करना चाहिये। जैसे व्यभिचार, क्रोध, लोभ आदि। कमेटी (परम-सेवा समिति) के नियमोंका पालन करना भी भगवान्का ही काम है। राग-द्वेषसे रहित होनेपर ही मनुष्यका कल्याण हो सकता है, राग-द्वेष रहते कल्याण नहीं हो सकता।

एक भगवान्की ही इच्छा करनी चाहिये और किसी बातकी इच्छा नहीं रखनी चाहिये। किसी बातकी इच्छा नहीं रखनी यह निष्काम भाव है।

भगवान् नहीं आ रहे हैं तो हमारे मनमें पदार्थोंकी इच्छा है इसीलिये भगवान्के आनेमें देरी हो रही है।

ममता केवल भगवान्में ही करनी चाहिये, दूसरोंमें ममता करना ही कलंक है। दूसरोंकी सेवा करो। क्योंकि इसके लिये भगवान्की आज्ञा है।

अपनेको तो गीता अध्याय 12 श्लोक संख्या 13 से 19 तक के अनुसार बनना चाहिये। क्योंकि भगवान् कहते हैं **यो मद्भक्तः स मे प्रियः** ।

निष्कामकर्म, भगवन्नामका जप और भगवान्का ध्यान करनेसे पापोंका नाश होता है। जपसे पापोंका नाश होता है और ध्यानसे विक्षेपका नाश होता है एवं भगवान्की कृपासे आवरणका नाश होता है।

भक्तियोगमें भगवान्को हर समय याद रखना यह खास बात है।

भगवान् (गीता 8/14) में कहते हैं जो मेरा नित्य निरन्तर स्मरण करता है उसको मैं सहजमें ही प्राप्त हो जाता हूँ। भगवान् इस साधनको सुगम बतलाते हैं और देखनेमें भी सुगम है। जब भगवान्की याद आती है उस समय भी प्रसन्नता रहती है और उसके फलमें भी प्रसन्नता। किसीभी भावसे नाम जप किया जावे तो अच्छा है। पर श्रद्धा पूर्वक किया जावे तो बहुत दामी है। तुलसीदासजीने नामके जप पर जितना जोर लगाया उतना स्मरण पर जोर नहीं दिया। नाम जपको गीतामें भगवान्ने अपना स्वरूप बतलाया और कहा यज्ञोंमें जपयज्ञ मैं हूँ।

भगवान्के नाम और रूपका जो स्मरण है, वह गीता-रामायणमें बहुत दामी बताया है।

प्रश्न– किस नामका जप करना चाहिये?

उत्तर– साधकको जिस नाम रूपमें श्रद्धा हो उसीका जप करना चाहिये। भगवान्के बहुतसे नाम हैं कलियुगमें विशेषकर– **हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे – हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे**, यह षोडश अक्षरका मंत्र बहुत दामी है। इस मंत्रका जप हर समय किया जा सकता है। शुद्ध अवस्था हो या अशुद्ध और अगर साढ़े तीन करोड़ भगवन्नामका जप किया जावे और अगर निष्काम भावसे किया जावे तो बहुत दामी है। निष्काम तो भाव है और जप क्रिया है अगर क्रियाके साथ निष्काम-भाव जोड़ दिया जावे तो दामी है। मेरा तो कहना है कि केवल जपसे भी भगवान् मिल जाते हैं। इस षोडश मंत्रमें **राम कृष्ण हरि** तीनों ही आ जाते हैं।

पापोंका हरण करनेवाला होनेके कारण भगवान्का नाम हरि है। कृष्णका जो अर्थ है– सच्चा आनन्द धातुसे जो अर्थ निकलता है वह निराकार परक है। रामका अर्थ है– जो सबमें रमण करे वह राम है अथवा योगी लोग जिसमें रमण करें वह राम है।

हरि, राम, कृष्ण ये तीनों, तीनों ही युगमें हुए, ये सच्चिदानन्दघन

ही थे। भगवान्‌के नामके स्वरूपकी जो स्मृति है वह बहुत दामी है। वैराग्य इसमें सहायक है। कर्मयोग, ध्यानयोग आदि स्वतंत्र साधन हैं।

भगवान् कहते हैं जो मेरा नित्य-निरन्तर स्मरण करता है उसके लिये मैं सुलभ हूँ, उसको मेरी प्राप्ति सहजमें हो सकती है (गीता 8/14)।

भगवान्‌ने (गीता 9/22) में कहा है जो अनन्य भावसे मेरा चिन्तन करते हैं उनका मैं योगक्षेम वहन करता हूँ। जैसे कुली भारको वहन करता है उसी माफिक मैं उसका भार ढ़ोता हूँ। साधक जहाँ तक पहुँच गया है वहाँतक उसकी रक्षा करता हूँ और जो अप्राप्ति है उसकी मैं प्राप्ति कराता हूँ।

भगवान् कहते हैं (गीता 10/11) में- उन नित्य निरन्तर भजन करनेवालोंको ज्ञान देता हूँ। यानी उनका उद्धार करता हूँ। भगवान्‌को हर समय याद रखना चाहिये। रात्रिमें सोनेके समय भगवान्‌को याद रखते हुवे सोना चाहिये। ऐसा करनेसे जो रात्रिका समय है वह साधन बन जाता है। सोते-जागते, उठते-बैठते भगवान्‌को याद रखें तो उसका निश्चय ही कल्याण हो जाता है।

भगवान् गीताजीमें कहते है- मनुष्य जिस भावको स्मरण करता हुआ शरीरको छोड़कर जाता है उस उसको ही प्राप्त हो जाता है। जैसे कुत्ता, बिल्ली आदिको स्मरण करते हुए जावेगा तो उनको प्राप्त होवेगा। जो मेरेको याद करते हुए जावेगा वह मुझको प्राप्त होवेगा। मृत्युका कुछ पता नहीं है किस समय आवे इसलिये हर समय भगवान्‌को याद रखना चाहिये (गीता 8/7)।

जिसकी जिस नाममें श्रद्धा भक्ति है उसको उसीका जप, स्मरण करना चाहिये। क्योंकि सब उसी भगवान्‌के नाम रूप हैं उसको सर्वोपरि मानना चाहिये।

इस समय धार्मिक पुस्तक इतने सस्ते दामोंमें मिलती हैं तथा सत्संग भी बहुत सस्तेमें मिल जाता है। सो इस समय लाभ उठा लेना चाहिये। यह ऐसा समय बहुत समय तक नहीं रह सकता। ४०० वर्ष पहले तुलसीदासजी, कबीरदासजी, मीराबाई आदि हुए थे, उस समय उनसे बहुतसे आदमियोंका कल्याण हुआ था, तो वह वैसा ही समय इस समय आया है। इससे लाभ उठा लेना चाहिये नहीं तो फिर बहुत पश्चात्ताप करना पड़ेगा। इसलिये इस बातको समझकर अपना काम जल्दी-से-जल्दी बना लेना चाहिये और आपलोगोंको ऐसे समयमें मनुष्य शरीर मिल गया है।

दोष अपना है और दूसरोंपर दोष लगावो यह भी पाप है। दूसरोंके दोषको न सुनना, न देखना, न कहना, इनसे जिस इन्द्रियोंसे दोषका देखना सुननेका काम करेंगे वही इन्द्रिय दोषी हो जावेगी। दूसरोंके पापोंकी चर्चा करते हैं तो पापोंकी चर्चा करनेवाला उनके पापोंका बँटवारा करते हैं। दोष अपने देखने चाहिये और गुण दूसरोंका देखना चाहिये।

महात्माकी परीक्षा– जिसके संगसे अपनेमें दैवी सम्पदाके लक्षण आवें, भगवान्‌के ध्यानमें स्थिति होवे तो समझना चाहिये कि यह पुरुष दैवी सम्पदावाला है। अगर आसुरी सम्पदाके लक्षण आवे यानी गीता 16/21 के लक्षण हैं इनका त्याग करना, इनको विषके समान समझकर त्याग करना चाहिये। जिसने अपना काम बना लिया ऐसे पुरुष लाखोंमें एक होते हैं। हजारोंमें भी नहीं मिलते।

जिनके संगसे अच्छे भावोंकी जागृति होवे, वे अच्छे पुरुष हैं। भगवान्‌का भक्त होगा उसके दर्शनसे भगवान्‌की स्मृति और भगवान्‌की याद आवेगी।

वक्ता ऐसा होना चाहिये जो खुद करे और बादमें कहे उसका

असर पड़ता है। केवल कहे और आप खुद पालन करे नहीं उसका असर नहीं पड़ता।

जहाँ स्वार्थ है वहाँ करामात नहीं है। स्वार्थ आनेके बाद करामात भाग जाती है यानी वह महात्मा नहीं है। जहाँ भोग-विलास है वहाँ भी महात्मा नहीं है। जहाँ करामात है वह तो ज्ञान, भक्ति, वैराग्यमें चूर (मस्त) रहते हैं। उच्चकोटिके पुरुष कभी अपनेको श्रेष्ठ नहीं बतावेंगे। दूसरे आदमी श्रेष्ठ बतावेंगे तो वह लज्जित हो जावेंगे।

मन लगानेके लिये भजन करना चाहिये। जिस भजनका अनुभव करके प्रह्लाद कहता है कि पिताजी देख लो यह अग्नि ठण्डी है।

औषध क्या है? रामनामका जप। साधकको इन तीनों बातोंपर विशेष ध्यान रखना चाहिये। जो भगवान्के लिये और भगवत् प्रेमके लिये सब चीजें अर्पण करनेको तैयार नहीं एवं जिसके हृदयमें भगवान्के लिये जलन नहीं, वह भक्त कैसा? अगर घरका एक आदमी बिगड़ता है तो घर बदनाम होता है। समाजका आदमी बिगड़ता है तो समाज बदनाम होता है। अगर भारतका नेता बिगड़ता है, तो भारत बदनाम होता है। अगर भक्त बिगड़ता है तो भगवान्को बदनाम करता है। मगर भगवान्का उससे कोई सम्बन्ध नहीं रहता है।

(यह लेख पेड नं. 88 पृष्ठ संख्या 17 से 22 तक से लिया गया है)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण..........

॥ श्रीहरिः ॥

मरणासन्न व्यक्तिको भगवन्नाम सुनाना अधिक महत्त्वका है

(प्रवचन नं. 32) स्वर्गाश्रम, संवत् 1998
दिनांक 1-5-1941

क्या सुनावें लोग सुनना नहीं चाहते और सुनते हैं तो वैसा काम नहीं करते। मरते हुए मनुष्यकी टट्टी-पेशाब साफ करना बड़ी सेवा है। पर वह तो दूर, मरणासन्न व्यक्तिको भगवान्का नाम और कीर्तन सुनाना भी मुश्किल हो रहा है (यानी मरणासन्न व्यक्तिको भगवान्का नाम सुनानेको भी लोग तैयार नहीं होते हैं)। इसके लिये भगवान्ने कहा है— **अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा** (गीता ८/५) इस श्लोकमें भगवान्ने कह दिया कि मेरा ही स्मरण करता हुआ शरीरको छोड़कर जाता है उसकी मुक्तिमें कोई शंकाकी बात नहीं। इसमें कोई शंका करे तो क्या कहें?

मैं तो समझता हूँ कि यहाँ ४०० आदमियोंको सत्संग सुनानेकी अपेक्षा मरणासन्न व्यक्तिको भगवन्नाम सुनाना अधिक अच्छा है। क्योंकि यदि एक व्यक्ति का भी भगवन्नाम सुनानेसे कल्याण हो गया तो मेरा तो काम बन गया। ज्ञानकी दृष्टिसे तो सभी आत्मा हैं, किसी भी शरीरकी आत्माका कल्याण हुआ तो अपना ही तो कल्याण हुआ, क्योंकि वह अपनी ही तो आत्मा है।

एक भाई रात-दिन तो इस तरह मरणासन्न व्यक्तिको भगवन्नाम सुना नहीं सकता न मालूम किसके सुनानेकी पारीमें वैसा अच्छा मौका आवे। हमें तो कोई युक्तिसे समझा दे कि यह (मरणासन्न व्यक्तिको भगवन्नाम सुनानेका काम) भजन, सत्संगसे बढ़कर नहीं। भगवन्नाम

सुनानेमें अपना तो भजन होता है और दूसरेको भी सुननेको मिलता है।

एक बात है- कोई बीमार है, कोई मर रहा है, उसकी सेवा करनेमें बड़ी दामी बात है। उसको भगवन्नामका जप, गीताजी सुनाना बड़ा कल्याणकारी है।

मरणासन्न व्यक्तिको गीता-पाठ, राम-नाम, नारायणका-नाम सुना रहे हैं और वह सुनते-सुनते मर गया तो उसको तो भगवान्‌की प्राप्ति हो गई, सुनानेवालेको क्या मिला? उसपर भगवान् कहते हैं- हे अर्जुन ! जो गीताको मेरे भक्तोंको सुनावे वह मेरी भक्तिके द्वारा मुझे प्राप्त हो जायगा। इस प्रकार करनेवाला मुझे बहुत प्यारा है, ऐसा प्यारा न कोई दूसरा हुआ है न होगा, यह भगवान्‌का वाक्य है।

एक आदमी है जो ५० वर्षोंसे साधन कर रहा है उसका यदि अपने द्वारा नाम सुनाने से कल्याण होता है, तो अपना भी कल्याण तो हो ही गया, नाम सुनानेका फल तो मिल गया।

अपना मनुष्य जन्म कल्याणके वास्ते है। यदि अपना कल्याण नहीं हुआ और अपने द्वारा दूसरेका कल्याण हो गया तो अपना तो कल्याण हो ही गया। जो दूसरेको भोजन करावे और खुद यदि उपवास ही करता है तो फिर वह खानेसे भी बढ़कर है। अपने द्वारा हजारों बैकुण्ठ जाते हैं तो खुद नरकमें जावे तो उससे भी बढ़कर है, वहाँ जाकर भी नरकके जीवोंका कल्याण करें। ऐसा करनेसे तो उसको भगवान्‌की पदवी मिले क्योंकि भगवान्‌का काम है जीवोंका उद्धार करना, तो अपने जीवोंका उद्धार करते हैं तो भगवान्‌ही हैं। **ऐसी उसकी (मरणासन्न व्यक्तिको नाम सुनाने की) महिमा है। पाँच मिनट मरणासन्न व्यक्तिको भगवन्नाम सुनानेसे जो लाभ होता है वह 20 वर्षमें भी साधन करनेसे नहीं होता, इसकी महिमा ही ऐसी है।**

इसपर विचार करनेसे यही बात आती है कि सब काम छोड़कर यह (मरणासन्न व्यक्तिको भगवन्नाम सुनानेका) काम करना बड़ी उत्तम बात है, भजन-सत्संगसे भी बढ़कर है, सबसे बढ़कर है। मुक्तिसे, कल्याणसे बढ़कर है। इसकी महिमा बहुत अधिक है। मरनेवाले व्यक्तिके पास भगवान्‌का नाम, गीता सुनाना और वह सुनते हुये मर गया तो उसका कल्याण है ही, अपना भी कल्याण है। यह काम सबसे बढ़कर है, ऐसे अवसरकी खोज करने की चेष्टा करनी चाहिये, लोभी आदमी की तरह। अतः मरणासन्न व्यक्तिको भगवान्‌का नाम, गीता सुनाना यह काम सबसे बढ़कर समझकर करना चाहिये।

(यह प्रवचन पेड नं.-22 पृष्ठ-67 एवं
पेड नं. 114 पृष्ठ-47 से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण...........

॥ श्रीहरिः ॥

तत्काल मुक्ति चाहिये तो मरणासन्न व्यक्तिको भगवन्नाम सुनावें

(प्रवचन नं. 33) दिनांक 22-05-1957
समय प्रातः 8.15 बजे

मरनेवालेकी खबर सुनकर तत्काल कीर्तन आदिकी व्यवस्था करनी चाहिये।

प्रत्येक मनुष्यको एक क्षण मुक्तिके लिये मिलती है यदि वैसा क्षण चाहिये तो मरनेवालेके कीर्तनके लिये शामिल हो जाओ। जितने कीर्तन सुनानेवाले शामिल हुए सब मुक्तिके अधिकारी हो गये। जब किसीकी हत्या करनेके लिये शामिल होनेपर सबको फाँसी होती है तब मरनेवालोंको कीर्तन सुनानेमें सबकी मुक्ति क्यों नहीं होगी? वहाँ जाकर भगवन्नाम सुनाने के लिए धरना लगा दें। इस कामके लिये समय देना सबसे ज्यादा दामी है।

इस कामके लिये भजन, ध्यान, सत्संग छोड़ दो। अपनी जरूरी-से-जरूरी चीज (काम, वस्तु) छोड़ दो। यह बहुत ज्यादा महत्वकी बात है। गीताप्रेसका भाई होवे तो प्रेसको ताला लगा दो। हरजे (नुकसान)-को बर्दास्त कर लो। आग लगने पर आग बुझाना तो लौकिक लाभ है। किन्तु मरनेवालेकी मुक्तिकी व्यवस्था करना आध्यात्मिक लाभ है। अगर पाँच जगह (मरणासन्न व्यक्तिको भगवन्-नाम सुनानेकी) चेष्टा (प्रयास) करते हैं और एक जगह सफलता मिल जावे तो भी लाभ में हैं।

सौ जनेत (बारात)-में जानेवाला ज्यादा अंशमें नरकमें जायेगा।

१०० मरनेवालेके पास जानेवालेकी मुक्ति हो जाती है। वैरी-शत्रु हो, तो वहाँ भी जावे।

(१) मरनेवाला व्यक्ति भगवन्नाम सुनना चाहे और घरवाले भी चाहें, तो कीर्तन या भगवन्नाम सुनाना एक नम्बर है।

(२) मरनेवाले व्यक्तिको ज्ञान नहीं, पर घरवाले सुनाना चाहें, तो दो नम्बर है।

(३) मरनेवाला व्यक्ति भगवन्नाम सुनना चाहे किन्तु घरवाले नहीं चाहें, तो भी सुनावे यह तीन नम्बर है।

(४) मरनेवाला व्यक्ति भगवन्नाम सुनना नहीं चाहता, किन्तु घरवाले सुनाना चाहें तो यह चार नम्बर है।

यहाँ तक तो कर लें। किन्तु कोई नहीं चाहे तब कोई उपाय नहीं है। बुलाने आ जावें (मरणासन्न व्यक्तिको भगवन्नाम सुनवानेके लिए) तो समझे भगवान्का बुलावा आया है।

दूरसे आनेवाले भावुक आदमी गीताप्रेसको तीर्थ मानते हैं। वास्तवमें यह तीर्थ नहीं है किन्तु श्रद्धालुके लिये उसकी भावनाके अनुसार लाभ हो भी जाता है। प्रधान तो भाव ही है। गीताप्रेस तो वास्तवमें भगवान्की है, चाहे कोई माने या न माने। इसलिये यहाँ बहुत उदारताका व्यवहार करना चाहिये। और चार बातोंका ख्याल करना चाहिये- प्रेम, विनय, त्याग और अभिमानका त्याग।

(यह प्रवचन पेड नं.-22 पृष्ठ-48 से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

॥ श्रीहरिः ॥

भगवान्‌के ध्यानमें मृत्यु हो तो आनन्द-ही-आनन्द है

(प्रवचन नं. 34) स्वर्गाश्रम, गंगातट वटवृक्ष
वैशाख कृ. 3 संवत् 1998 सोमवार
दिनांक 14-04-1941 प्रात:

प्रश्न– शान्ति किसके मनमें होती है?

उत्तर– जिसके विक्षेपोंका नाश हो गया है। विक्षेपोंके अभावसे चित्तमें निर्मलता होती है-उसीको शान्ति मिलती है। अत: सारी इच्छाओंका त्याग करना और किसी भी वस्तुकी इच्छा न करना। आत्मा ही महात्मा है। अपनी आत्मासे पूछे कि क्या चाहते हो? तो उत्तर मिले- कि कुछ नहीं। ऐसी अवस्थामें मृत्यु हो जावे तो बस कल्याण है। मृत्युको तो निमन्त्रण देवे- एक दिन मृत्यु तो होगी ही- परमात्माके ध्यानमें मृत्यु होवे तो आनन्द-ही-आनन्द है।

(यह प्रवचन पेड नं.-56, पृष्ठ-21 से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

॥ श्रीहरिः ॥

सबका कल्याण हो यह भाव रखे

(प्रवचन नं. 35) गोरखपुर, सन्- 1944
आसाढ़ शु. 13, संवत् 2001

चाहे जितना लाभ उठावो सीमा ही नहीं।

प्रश्न– मुक्तिसे भी क्या ज्यादा लाभ मिल सकता है?

उत्तर– हाँ मिल सकता है। जब तक संसारमें एक भी जीव है तब तक लाभ उठाया जा सकता है। अपनी आत्माकी उन्नति कर लेना उन्नतिका अन्त नहीं हो गया। न पतनका अन्त है, न उन्नतिका। उन्नतिका अन्त है, जब सबका कल्याण हो जाय।

अच्छी भावनाका बुरा फल होता ही नहीं, इसलिये अच्छी भावना करनी चाहिये। नामदेवजीने कुत्तेमें भगवान्‌की भावना की तो कोई बुरा फल नहीं हुआ। भोगबुद्धि पतन करनेवाली चीज है, ईश्वरबुद्धि नहीं।

प्रह्लादने खम्भेमें भगवान्‌की भावना की, तो भगवान् प्रकट हो गये। यह भावनाका फल है। परमात्माकी प्राप्ति करानेकी अपनेमें शक्ति नहीं होते हुये भी, कहीं परमात्माकी प्राप्ति करानेके लिये भगवान् अपनेको निमित्त बनावे तो ना भी नहीं करे। भगवान्‌ने कहा-**निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्** (गीता ११/३३)।

इस प्रकार जो आदमी अपनी शक्ति नहीं समझे कि मैं किसीका कल्याण कर सकता हूँ। और जो यह अभिमान रखता है कि मैं दूसरेको परमात्माकी प्राप्ति करा सकता हूँ, वह तो नहीं करा सकता। जो यह समझता है मैं नहीं करा सकता, अगर दूसरा आदमी उसपर आरोपण करता है कि यह परमात्माकी प्राप्ति करा सकता है, इस प्रकार निमित्तमात्र उसे कोई बना लें तो बना लो। एक तो

निमित्तमात्रकी यह बात है कि भगवान् अपनेको इसके लिये निमित्त बनावे कि दूसरोंको अपनी प्राप्तिके लिये तुमको निमित्त बनाते हैं तो नटना नहीं (मना नहीं करे)।

दूसरी बात है भगवान् अपनेको निमित्त नहीं बनावे तो इस काममें अपने निमित्त बन जाना चाहिये और मान ले कि भगवानने् ही हमें निमित्त बनाया है। भगवान् कहें मैंने तो तुमको यह पदवी दी नहीं, तो कहे आपने नहीं दी हमने जबरदस्ती छीन ली। जैसे कोई आदमी मरनेवाला हो वह अपनेको निमित्त बनाकर भजन-ध्यान सुनना चाहे, या वह नहीं बुलावे तो अपने ही चलकर कहो कि कीर्तन सुनावें ? गीताजी सुनावें ? वह कहे सुनावो इस जगह अपने निमित्त बने। इस प्रकारकी पाँच-चार जगह तजबीज (युक्ति) लगाई और एक आदमीकी भी मुक्ति हो गई तो अपना तो जीवन सफल हो गया। मनुष्यका जीवन तो कल्याण करनेके लिये मिला था। अपने अपना नहीं कर सके और दूसरेका कल्याण कर दिया तो अपनेको धोखा नहीं मानना चाहिये कि अपना कल्याण नहीं हुआ।

कोई कहे आपमें कल्याण करनेकी शक्ति है तो इस बातको स्वीकार नहीं करे। कोई पूछे कि आप ईश्वरकी प्राप्ति करा सकते हो क्या? तो कहे नहीं, मेरी सामर्थ्य नहीं है, ईश्वरकी कृपासे हो सकती है।

कोई पूछे कि परमात्माकी प्राप्तिका पात्र किस तरह होऊँ? तो उसे कहे कि परमात्माकी शरण हो जाओ। कैसे शरण होवें? उसे बता देवें कि ऐसे-ऐसे शरण होना चाहिये। यह निमित्त बनना हुआ। अपनी शक्ति मानकर निमित्त मत बनो।

वह कहे हमें तो आपने ही परमात्माकी प्राप्ति करा दी। तो वह कहता रहे, उसपर ध्यान मत दो। एक आदमी गाली देता है और एक प्रशंसा करता है, दोनोंको मत सुनो।

(यह प्रवचन पेड नं.- 63 पृष्ठ- 52 से लिया गया है।)

।। श्रीहरिः ।।

मृत्यु-समयके उपचार

(प्रवचन नं. 36)

हिन्दू-जातिमें मनुष्यके मरनेके समय घरवाले उसका परलोक सुधारनेके बहाने कुछ ऐसे काम कर बैठते हैं जिससे मरनेवाले मनुष्यको बड़ी पीड़ा होती है। अतएव निम्नलिखित बातोंपर विशेष ध्यान देना चाहिये–

१– यदि रोगी दो-तीन मंजिल ऊपर हो तो ऐसी हालतमें उसे नीचे लानेकी आवश्यकता नहीं।

२– खटियापर सोया हुआ हो तो वहीं रहने देना चाहिये।

३– यदि खटियापर मरनेमें कुछ बहम हो और नीचे उतारकर सुलानेकी आवश्यकता समझी जाये तो अनुमानसे मृत्युकालके दो-चार दिन पहलेसे ही उसे खाटसे नीचे उतारकर जमीनपर बालू बिछाकर सुला दे। बालू ऐसी नरम होनी चाहिये जो उसके शरीरमें कहीं गड़े नहीं। दो-चार दिन या दो-चार पहर पहलेका पता वैद्योंसे पूछकर, रोगीके लक्षण देखकर और बड़े-बूढ़े अनुभवी पुरुषोंसे सलाह करके अन्दाज कर ले। रोगी अच्छा हो जाय तो वापस खटियापर सुलानेमें कोई आपत्ति है ही नहीं, यदि अन्दाजसे पहले उसका प्राणान्त हो गया तो भी कुछ हानि नहीं है बल्कि मृत्युकालमें नीचे उतारकर सुलानेमें जो कष्ट होता है, उससे वह बच गया। दो-चार दिन पहले रोगीको अनुमान हो जाय तो उसे स्वयं ही कह देना चाहिये कि मुझे नीचे सुला दो।

४– उस अवस्थामें मृत्युसे पहले उसे स्नान करानेकी कोई आवश्यकता नहीं, इससे व्यर्थमें उसका कष्ट बढ़ता है। मल वगैरह

साफ करना हो तो गीले गमछेसे धीरे-धीरे पोंछकर साफ कर देना चाहिये।

५– इस अवस्थामें गंगाजल, तुलसी देना बड़ा उत्तम है, परन्तु उसे निगलनेमें क्लेश होता हो तो तुलसीका पत्ता पीसकर उसे गंगाजलमें मिलाकर पिला देना चाहिये। एक बारमें एक तोलेसे अधिक जल नहीं देना चाहिये। दस-पाँच मिनिट बाद फिर दिया जा सकता है। गंगाजल बहुत दिनोंका विस्वाद न हो, पहले स्वयं चखकर फिर रोगीको देना चाहिये। जिसमें गन्ध आने लगी हो, जो कड़वा हो गया हो वह नहीं देना चाहिये। ताजा गंगाजल कहींसे ही मँगा लेना चाहिये। गंगाजलमें शुद्धि, अशुद्धि या स्पर्शास्पर्शका कोई विधान नहीं है। रोगी मुँह बंद कर ले तो उसे कुछ भी नहीं देना चाहिये।

६– रोगीके पास बैठकर घरका रोना नहीं रोना चाहिये और संसारकी बातें उसे याद नहीं दिलानी चाहिये। माता, स्त्री, पति, पुत्र या और किसी स्नेहीको उसके पास बैठकर अपना दुःख सुनाना या रोना नहीं चाहिये। उसके मनके अनुकूल उसकी हर तरहसे कल्याणमयी सेवा करनी चाहिये।

७– डाक्टरी या जिसमें अपवित्र पदार्थोंका संयोग हो ऐसी दवा नहीं खिलानी चाहिये।

८– जहाँतक चेत रहे वहाँतक श्रीगीताजी का पाठ और उसका अर्थ सुनाना चाहिये। चेत न रहनेपर भगवान्‌का नाम सुनाना उचित है। गीता पढ़नेवाला न हो तो पहलेसे ही भगवान्‌का नाम सुनावे।

९– यदि रोगी भगवान्‌के साकार या निराकार किसी रूपका प्रेमी हो तो साकारवालेको भगवान्‌की छबि या मूर्ति दिखलानी चाहिये और उसके रूप तथा प्रभावका वर्णन सुनाना चाहिये। निराकारके प्रेमीको निराकार ब्रह्मके शुद्ध, बोधस्वरूप, ज्ञानस्वरूप, सत्, घन,

नित्य, अज, अविनाशी आदि विशेषणोंके साथ आनन्द शब्द जोड़कर उसे सुनाना चाहिये।

१०– यदि काशी आदि तीर्थोंमें ले जाना हो तो उसे पूछ ले। उसकी इच्छा हो, वहाँतक पहुँचनेमें शङ्का न हो, वैद्योंकी सम्मति मिल जाय, उतने रुपये खर्च करनेकी शक्ति हो तो वहाँ ले जाय।

११– प्राण निकलनेके बाद भी कम-से-कम पंद्रह-बीस मिनट तक किसीको खबर न दे। भगवन्नामका कीर्तन करते रहें जिससे वहाँका वायुमण्डल सात्त्विक रहे। रोनेका हल्ला न हो, क्योंकि उस समयका रोना प्राणीके लिये अच्छा नहीं है।

१२– घरवाले समझदार हों तो उनको रोना नहीं चाहिये। दूसरे लोगोंको भी उनके पास आकर उन्हें केवल सहानुभूतिके शब्द सुनाकर रुलानेकी चेष्टा नहीं करनी चाहिये।

१३– शोक-चिह्न बारह दिनतक ही रखना चाहिये।

१४– बारह वर्षसे कम उम्रके लड़के-लड़कियोंकी मृत्युका शोक न मनावे।

१५– मृतकके लिये शोकसभा न कर अपनी सावधानीके लिये सभा करनी चाहिये। यह बात याद करनी चाहिये कि इसी प्रकार एक दिन हमारी भी मृत्यु होगी।

१६– जीवन्मुक्त पुरुषकी मृत्युपर शोक न करे, ऐसा करना उसका अपमान करना है।

(यह लेख गीताप्रेसके संस्थापक परमश्रद्धेय सेठजी श्रीजयदयालजीकी पुस्तक 'तत्त्व-चिन्तामणि' कोड नं. ६८३ पृष्ठ सख्या १०३ से लिया गया है।)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

॥ श्रीहरिः ॥

(गीताप्रेस, कल्याणके आदि सम्पादक)

परम श्रद्धेय (भाईजी) श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार का अनुभव

॥ श्रीहरिः ॥

उन दिनों एक अनुभव तो इन्हें (कल्याण सम्पादक भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दारको) ऐसा हुआ कि जिसके लिये बड़े-बड़े योगी-मुनि भी लालायित रहते हैं। गोरखपुरमें एक दिन सत्संगके समय उन्होंने उसका वर्णन करते हुए स्वयं कहा था कि बम्बईकी बात है। मैं सागरमल गनेड़ीवालेके साथ सूरदासका नाटक देखनेको जानेवाला था। सागरमलका घर रास्तेमें ही था। सागरमलने कहा—चलो घर चलकर पानी पी लें। मैंने स्वीकार कर लिया और हम दोनों उसके घर पहुँचे। घर पहुँचनेपर श्रीभगवन्नामके सम्बन्धमें बात चल पड़ी। सागरमलका कहना था कि भगवन्नाम जपका, भगवत्-स्मृतिके साथ होनेसे ही विशेष फल होता है। मैं कहता था कि नहीं, किसी भावसे जाने या अनजानेमें, अन्त समय **'रा'** और **'म'** ये दो अक्षर मुखसे निकल गये तो प्राणीकी सद्गति होगी ही। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। इस मंत्रके अक्षरोंमें ही ऐसी शक्ति है। यह सुनकर सागरमलने कहा—**आर. ए. एम.** (**Ram**)—**'राम'** का अर्थ अंग्रेजीमें मेंढ़ा होता है। यदि कोई अंग्रेज मरते समय मेंढ़ेके भावसे **'राम'** पुकार उठे तो उसकी क्या सद्गति हो जायगी? उसके ज्ञानमें रामका अर्थ मेंढ़ेके अतिरिक्त कुछ है ही नहीं। बोलो क्या उत्तर है? तो मैंने कहा—मेरे विश्वासके अनुसार तो उसकी सद्गति हो ही जानी चाहिये। यह बात तो हो ही रही थी कि हठात् मेरा बाह्य ज्ञान जाता रहा। मेरे नेत्र खुले हुए थे पर बाहरसे कुछ भी होश नहीं रहा। नेत्र खुले हुए ज्यों-का-त्यों उसी स्थानपर बैठा रहा। मुझे इतना स्मरण है कि मुझे उस समय वनवेषधारी भगवान् श्रीराम, लक्ष्मण और सीताके दर्शन हुए। कितनी देरतक दर्शन होते रहे, यह याद नहीं। बातें भी हुई थी, पर सब बातें स्मरण नहीं रही। केवल दो बातें याद रहीं। एक तो भगवान्ने कहा

था–किसी प्रकार भी नाम लेनेवालेकी सद्‌गति ही होगी। दूसरी यह कि भगवान्‌ने भक्त विष्णुदिगम्बरजी गायनाचार्यका इसी सिलसिलेमें नाम लिया था। इसके अतिरिक्त और कुछ भी याद नहीं रहा। होश आनेपर दूसरे दिन सागरमलने मुझसे कहा कि तुम उस समय कह रहे थे कि 'यह भगवान् हैं, इनके चरण पकड़ लो' आदि-आदि। पर मुझे न तो बाहरका ज्ञान था, न मैंने अपने ज्ञानमें कुछ कहा ही था। अस्तु, इस प्रकार सारी रात बीत गयी। मुझे बाह्यज्ञान नहीं हुआ। अब सागरमल घबड़ा गया कि इसे क्या हो गया? आखिर उसने मेरा हाथ पकड़कर खड़ा किया, पकड़े हुए ही मुझे सीढ़ियोंसे नीचे उतार लाया। फिर उसी तरह मेरे घर मुझे ले आया। घर आनेपर मुझसे कहा कि शौच हो आओ, पर मुझे तो बिल्कुल ही होश नहीं था कि बाहर क्या हो रहा है। इसलिये मैंने उसे कोई उत्तर नहीं दिया। मुझे उसी तरह बाह्यज्ञान शून्य देखकर उसने मुझे पानीके नलके नीचे बिठा दिया। मेरे सरपर जलकी धार गिरने लगी और स्वयं सागरमलजी नाम-कीर्तन करने लगे। अब जाकर मुझे कहीं धीरे-धीरे बाह्यज्ञान हुआ। उसी दिन दोपहरके समय श्रीविष्णुदिगम्बरजी मुझसे मिले। मैंने उन्हें सारी घटना सुना दी, सुनकर वे रोने लगे।

(यह लेख गीता वाटिका गोरखपुरकी पुस्तक 'श्रीभाईजी, एक अलौकिक विभूति' से लिया गया है)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण..........

॥ श्रीहरिः ॥

गोविन्दरामजी पोद्दार रतनगढ़के प्रतिष्ठित गल्लेके थोक व्यापारी एक दिन भाईजीके सामने गद्‌गद् स्वरमें बोले कि अपनी करनी तो ऐसी नहीं देखता पर आपकी दयालुताकी ओर देखकर एक प्रार्थना करना चाहता हूँ कि अन्तिम समयमें मुझे भगवान्‌के दर्शन करानेकी कृपा अवश्य ही करें। भाईजीने उत्तर दिया कि आपकी निष्ठा हो तो कौन-सी बड़ी बात है।

मृत्युके कुछ समय पूर्व ये बीमार हो गये। पीठपर विषैला फोड़ा हो गया, जिसका विष शरीरमें फैलने लगा। डाक्टर निराश हो गये। भाईजी बीच-बीचमें उनसे मिलने जाते तो वे भगवान्‌के दर्शनोंवाली बात उन्हें याद दिला देते। स्थिति गम्भीर देखकर भाईजीने उनके समीप अखण्ड-संकीर्तन शुरु करा दिया। वे भी भरसक नाम जपकी चेष्टा करते रहे।

कार्तिक शुक्ल १५ संवत् १९९८ के दिन एक व्यक्ति उनके घरसे दौड़ता हुआ भाईजीके पास आया कि उनकी स्थिति बहुत खराब है, आप जल्दी चलिये। भाईजी बाबा (राधा बाबा) को साथ लेकर उनके घर गये। भाईजी समझ गये कि अब ये थोड़ी ही देरके मेहमान हैं। भाईजीने बाबाको कहा–"जबतक मैं न आ जाऊँ आप मत जाइयेगा। मैं जल्दी ही आता हूँ।" बाबा बीच-बीचमें उन्हें आश्वासन दे रहे थे कि नाम मत भूलिये। उन्होंने बड़े करुण स्वरमें कहा––"बाबा, तकलीफ बहुत है, नाम लिया नहीं जाता।"

मृत्युके दो घण्टे पूर्व भाईजी अपनी मस्तानी चालसे चलते हुए आये। ऐसे समयमें भाईजीकी एक विलक्षण मुद्रा हो जाती थी–एक गंभीर प्रसन्नतापूर्ण मुद्रा, मानों किसीको पहुँचाने आये हों। भाईजी

उनके पास बैठ गये और बोले—''नाम जप कीजिये, सामने भगवान्‌को देखिये।'' हठात् वे तेजीसे नाम-जप करने लगे। भाईजी बोले—देखिये इनके कितनी तेजीसे नाम-जप हो रहा है। सब लोग देखने लगे—कैसा जादू हो गया। अभी कुछ क्षण पहले पीड़ाके कारण नाम नहीं ले सकते थे, अब जीभ मशीनकी तरह नाम-जप कर रही है। भाईजी खेलकी तरह सब लोगोंको बुला-बुलाकर दिखलाने लगे। बोले—देखो, कितना सुकृती प्राणी है। कितनी तेजीसे नाम-जप कर रहे हैं लोग हक्के-बक्केसे देख रहे थे। भाईजीने उनसे पूछा—क्यों ! भगवान्‌के दर्शन हो रहे हैं न? उन्होंने गर्दन हिलाकर अपनी स्वीकृति दी। भाईजी बच्चेकी तरह उपस्थित लोगोंसे कहने लगे देखो, देखो ये कहते हैं मुझे भगवान्‌के दर्शन हो रहे हैं। अब तो लोगोंके पूछनेका ताँता-सा लग गया। उपस्थित परिवार-वाले, सत्संगी लगभग २०-२५ व्यक्तियोंने उनसे पूछा—क्या भगवान्‌के दर्शन हो रहे हैं? और उन्होंने प्रत्येक बार गर्दन हिलाकर अपनी स्वीकृति दी। आँखें बन्द थी पर पूर्ण चेतना थी। सन्निपातका कोई चिह्न नहीं था। भाईजी बार-बार लोगोंसे कहते—कितनी विलक्षण बात है। विलक्षण ढ़ंगसे मुस्कुराते रहे। इसके बाद भाईजीने **''स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या''** वाली स्तुति की एवं बादमें गीताजीका सातवाँ अध्याय सुनाया। इसके बाद उनके प्राण निकल गये।

(यह लेख गीता वाटिका गोरखपुरकी पुस्तक 'श्रीभाईजी, एक अलौकिक विभूति' से लिया गया है)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण..........

॥ **श्रीहरिः** ॥

प्रश्न— मरनेवाला तो संसारका चिन्तन कर रहा है, पर दूसरा व्यक्ति उसको भगवन्नाम सुना रहा है तो क्या उसका कल्याण हो जायेगा?

उत्तर— भगवान्‌ने मनुष्यको अन्तकालमें विशेष छूट दी है। अतः अन्तकालमें भगवन्नाम सुनानेसे वहाँ यमदूत नहीं आयेंगे। दूसरी बात, नाम सुनानेवालेका उद्देश्य कल्याण करनेका है तो नाम सुनानेसे उसका कल्याण हो जायेगा।

(यह प्रश्न-उत्तर श्रद्धेय स्वामीजीकी गीताप्रेससे प्रकाशित पुस्तक 'प्रश्नोत्तरमणिमाला' कोड नं. 1175 से लिया गया है)

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण..........

॥ श्रीहरिः ॥

नाम-जप एवं परम-सेवा पर परम श्रद्धेय स्वामीजी श्रीरामसुखदासजी महाराजके प्रवचन

॥ श्रीहरिः ॥

(परमश्रद्धेय स्वामीजी श्रीरामसुखदासजी महाराजका प्रवचन)

दिनांक 11/4/1992 स्थान- सींथल

समय 4.45

कोई बीमार हो और मरणासन्न हो तो उसे कीर्तन सुनाओ, भगवन्नाम सुनाओ, गीताजी सुनाओ। उसे अच्छी-अच्छी भगवान्‌की कथा सुनाओ। और उसे चेत हो और गीताजीमें प्रेम हो तो गीताजी सुनाओ और चेत नहीं हो, भाव न जाने तो कीर्तन और भगवन्नाम सुनाओ।

सांख्य और योग ये जितने-जितने साधन हैं, उन सबका तात्पर्य क्या है? और अपने धर्ममें निष्ठा है उनका क्या मतलब है? ये सांख्ययोग, कर्मयोग और भक्तियोग तीनों बता दिये। जो कोई घरमें मरे उसे भगवान्‌की याद दिलाओ। कई लोग कहते हैं छोटा मरता है तो गीता क्या सुनावें? कई माताओं, बहनों, भाइयोंमें बड़ा अज्ञान रहता है कि गीता सुना दी अब तो ये मर जायेगा। ये बात नहीं है मेरेको तो जाड़ा (सर्दी) लगता है, शीत लग जाए, बीमार होऊँ तो कहता हूँ गीता सुना दो भाई ! गीता सुनानेसे देखा है आदमी मरता थोड़े है। ऐसे गीताजी सुनानेसे थोड़े ही कोई मरता है। गीता कोई जहर थोड़े है। हम तो जब बीमार होते हैं तो गीता सुनी हुई है, गीता पाठ भी किया है और बैठे हैं टोपी पहनकर। गीतासे कोई मरता थोड़े ही है कि गीता सुनाई कि अब मर जायेगा, तो यह गीता है कोई जहर थोड़े ही है। ये वहम मिटाओ घरमेंसे यह सब वहम निकाल दो। इस कमजोरीको दे दो देश निकाला। भगवान्‌का भजन करो और सब लग जाओ इसमें।

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण..........

।। श्रीहरि: ।।

(परमश्रद्धेय स्वामीजी श्रीरामसुखदासजी महाराजका प्रवचन)

दिनांक 10. 08. 2002 स्थान- गीता भवन, स्वर्गाश्रम
समय : 3.30 बजे

प्रश्न– परम सेवाके बारेमें जानकारी चाहते हैं। सेठजीने तो यहाँ परमसेवाके लिये बहुत कुछ कहा था और जो मरणासन्न व्यक्ति होता है उसको नाम सुनानेमें बहुत उत्साहकी बात बताते थे। आपके श्रीमुखसे भी लोगोंको यह थोड़ी परमसेवाके विषयमें जानकारी मिल जाय ऐसा निवेदन है।

उत्तर– (स्वामीजी द्वारा)– सेठजी तो सत्संग छोड़ करके भी कोई मर रहा हो, तो वहाँ जाते और सेठजीने कहा भी है कि यह सब काम छोड़ करके उसको नाम सुनाओ। वो जा रहा है सदाके लिये, तो उसको भगवन्नाम पहले सुनाओ, सत्संग छोड़ दो, उसके लिये सब छोड़ दो। वो जा रहा है उसको भगवन्नाम सुनाओ, ऐसा सेठजी कहते थे।

कलकत्तामें एक कमेटी बनाई है। उस कमेटीके लोग जाते हैं जहाँ कोई बीमार हो उसकी सेवा करते हैं, वहाँ नाम सुनाते हैं, कीर्तन सुनाते हैं। बारी (पारी) बँधी हुई है दो-दो घण्टेकी। अपने यहाँ भी बारी बाँध लो आपलोग, भाईयोंके लिये भाई, कोई बहन बीमार हो तो बहनों अपनी बारी बाँध लो, दो-दो घण्टे उसके पासमें जाकर कीर्तन सुनाओ, नाम सुनाओ, सेवा करो। बीमारकी सेवाका बड़ा माहात्म्य है, वह भगवान्‌की सेवा है, भगवान् सेवा चाहते हैं। इस वास्ते भगवान्‌की सेवा करो।

प्रश्न– वो सुनना नहीं चाहे तो महाराजजी !

स्वामीजी– उसकी रुचि पैदा करो।

प्रश्न– वो कहता हो जोरसे मत बोलो धीरे-धीरे बोलो, तो धीरे-धीरे बोलना चाहिये?

स्वामीजी– तो धीरे-धीरे बोलो। पर उसे नाम सुनाओ।

प्रश्न– वो मरणासन्न व्यक्ति तो सुनना चाहता है परन्तु उसके घरवाले, पासवाले लोग मना करते हों कि मत सुनाओ तब क्या करें?

स्वामीजी– सुनाओ, सुनाओ आप, वे कहते रहें, आप सुनाओ, वे करते रहें मना पर आप जरूर सुनाओ। सुननेवाला चाहता है तो जरूर सुनाओ।

प्रश्न– उस समय (मरणासन्न वालेके) घरवालोंकी बात नहीं सुननी चाहिये?

स्वामीजी– ना, नहीं सुननी चाहिये। कोई (आपकी) बुराई करे तो सुन लो, पर उसे कुछ बोलो मत। उसे नाम सुनाओ, कीर्तन सुनाओ, घरवालोंकी बात मत सुनो मरनेवालेकी रुचि है तो जरूर सुनाओ।

श्रोता– कोई डॉक्टर कह दे कि हल्ला क्यों करते हो? लेकिन उसकी इच्छा है (भगवन्नाम) सुननेकी तो डॉक्टरकी परवाह नहीं करनी चाहिये?

स्वामीजी– डॉक्टर खड़ा रहे तब धीरे-धीरे बोलो। डॉक्टर चला जाए फिर चिल्लाओ। मेरे काम पड़ा है, गोपालदासकी माँ थी कलकत्तेमें, मेरेको बुलानेपर मैं तुरन्त गया कलकत्ते। मैंने सुना कोई कह रहा है पुलिसवाला नहीं है, नहीं तो पकड़ेगा इनको, हल्ला करता है बीमारके पासमें। मेरे असर पड़ा कि यह लोग भगवान्‌की बात सुनना नहीं चाहते। हम तो चुप हो गये भाई ! वे चले गये, फिर हमने

भगवन्नाम सुनाया उसको। मरनेवाला सुनना चाहे तो सुनाओ, जरूर सुनाओ उसको। यह बहुत बढ़िया बात है, एक दो आदमीको सुना देवे तो उसे (सुनानेवालेको) अन्तमें भगवान्‌की स्मृति आवेगी।

श्रोता– सुनानेवालेको भी?

स्वामीजी– हाँ ! बहुत भारी पुण्य है इसमें, बहुत बड़ा पुण्य है मरणासन्नको भगवान्‌की याद दिलानी, बहुत बड़ा पुण्य है, वह तो बस जा रहा है संसारसे। सेठजी तो सत्संग छोड़कर (मरणासन्न व्यक्तिको भगवन्नाम सुनाने) जाते थे।

श्रोता– महाराज जी ! वो आदमी सत्संगी है लेकिन अन्तिम अवस्थामें उसकी बुद्धिमें कोई विकृति आ गई, बीमारी ज्यादा प्रभावी हो गई उसपर, उस समय यदि वो मना करता है और करता तो वह अपनी बुद्धि की खराबीसे ही। अब उसे भगवन्नाम सुनावें कि नहीं सुनावें ?

स्वामीजी– पासमें बैठे-बैठे **राम राम राम राम...** करते रहो। भजन करते रहो उसका भी असर पड़ता है। अपने तो उसका कल्याण चाहते हैं ही। अब वो सुने नहीं तो कोई क्या करे? भगवन्नाम सुना दो उसे, अपनेको तो उसे किसी तरह भगवान्‌में लगाना है।

श्रोता– महाराजजी ! मरणासन्न व्यक्तिने तो मना कर दिया लेकिन पासमें सत्संगी लोग बैठे हैं, कुछ लोग **राम राम** कर रहे हैं उसको नहीं सुना रहे हैं। उससे भी उसको फायदा होगा क्या?

स्वामीजी– हाँ ! फायदा होगा, जरूर होगा। वहाँ यमदूत नहीं आते। जहाँ नाम जप हो रहा है वहाँ यमदूत नहीं आते। अजामिलके अन्त समयमें **नारायण** नामके उचारणसे पासमें खड़े यमदूतोंको मार पड़ी भगवान्‌के पार्षदोंसे, तो इसलिये यमराजके दूत नहीं आते। बहुत उत्साहसे सुनाओ, उत्साहसे। सुनना चाहे तो बड़े

उत्साहसे सुनाओ। घरवाले तिरस्कार करें, अपमान करें तो सह लो, सब सह लो। चुप रह जाओ, बोलो मत। पर उसे नाम सुनाओ। कोई कहे कि तुम यह क्या करते हो? तो कहें भई ! यह भगवन्नाम सुनना चाहता है इसलिये भगवन्नाम सुनाते हैं।

श्रोता– महाराजजी ! कोई सत्संगी व्यक्ति अपने परिवारवालोंको या अपने मित्रोंको यह कह दे कि देखो ! अभी मैं जो आपको कह रहा हूँ वो स्वस्थतासे कह रहा हूँ कि बीमार अवस्थामें मेरी बुद्धि खराब हो जाय और मैं मना भी कर दूँ तो भी आप नाम सुनाते रहना, तो उसको सुनाते रहना चाहिये?

स्वामीजी– हाँ ! उसकी नीयत ठीक है। नामपर श्रद्धा है, प्रेम है उसको जरूर सुनाओ।

श्रोता– महाराजजी ! यहाँ कभी-कभी ऐसी दुर्घटना हो जाती है कि रात भर उस मृत व्यक्तिको रखना पड़ता है, तो वहाँ नाम सुनानेवालोंका उत्साह नहीं देखा जाता कि वहाँपर खूब लोग जावें और उस मृत व्यक्तिको नाम सुनावें, ऐसा उत्साह नहीं दिखाई देता है।

स्वामीजी– उत्साह रखना चाहिये, भाई लोगोंको उत्साह रखना चाहिये। उसको नाम जरूर सुनाना चाहिये। मोहनलालजी पटवारी थे, (सेठजीके समयके सत्संगी) वो कहते भगवन्नाम सुनानेके लिये रात्रिमें कोई नहीं रहे वो समय हमारा रखो। वो कहते दूसरा कोई रात्रिके समय सुनाना चाहे नहीं, तो हम सुनाएगें। वो कहते दूसरा कोई नहीं हो नाम सुनानेके लिये वह समय हमें बताओ। ऐसा उत्साह था उनके। पहले यह मरणासन्न व्यक्तिको भगवन्नाम सुनानेकी बात बहुत ज्यादा थी, आजकल लोगोंमें वैसी बात नहीं रही। स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराजने कहा कि यहाँ (गीता-भवन, स्वर्गाश्रममें) मरनेका भी प्रबन्ध है, और सेठजीकी बातोंका (सत्संगका) भी प्रबन्ध है, मरणासन्न व्यक्तिको भगवान्‌का नाम सुनाते हैं, ऐसा प्रबन्ध हरेक जगह नहीं

होता। मरनेवालोंके लिये भी प्रबन्ध है।

स्वामीजी– अपने तो लगो और लगाओ, भगवान्‌में लगो और लोगोंको लगाओ और समय कही मत लगाओ केवल भगवान्‌में समय लगाओ।

शतं विहाय भोक्तव्यं सहस्त्रं स्नानमाचरेत् ।
लक्षं विहाय दातव्यं कोटिं त्यक्त्वा हरिं स्मरेत् ॥

अर्थात्– सौ काम छोड़कर भोजन करें, एक हजार काम छोड़कर स्नान करें, लाख काम छोड़कर दान-धर्म करें, करोड़ों काम छोड़कर भगवान्‌का स्मरण करें।

मरणासन्न व्यक्तिको भगवान्‌का स्मरण कराओ, करोड़ काम बिगड़ता हो तो बिगड़ जाओ, पर उसे नाम सुनाओ। सबसे श्रेष्ठ काम है यह। और कुछ बिगड़ता हो तो बिगड़ने दो, कोई परवाह मत करो। **हरिस्मृतिः सर्वविपद्विमोक्षणम् अर्थात्–** भगवान्‌की स्मृति सब विपत्तियोंका नाश करनेवाली है। इस वास्ते मरणासन्न व्यक्तिको भगवान्‌की स्मृति कराओ **नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा** (गीता १८/७३) अब स्मृति आ गई। भगवान्‌की कृपासे स्मृति पैदा हो जाती है। भगवान्‌की याद आती है भगवान्‌की कृपासे।

यह गुन साधन तें नहिं होई । तुम्हरी कृपाँ पाव कोइ कोई ॥

(रा.च.मा.किष्किन्धाकाण्ड २१/३)

यह बात है। भगवान्‌की कृपासे होता है। इस वास्ते जरूर लगाओ किसी तरहसे भी भगवान्‌में लगो और लगाओ।

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण..........

॥ श्रीहरिः ॥

(परमश्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराजका प्रवचन)

दिनांक 03. 10. 1996 स्थान– फोगला आश्रम, वृन्दावन
समय 3.30 बजे

भगवन्नाम बहुत विलक्षण है, इसकी महिमा अपार और असीम है। भगवान् और भगवान्‌का नाम इन दोनोंका विवेचन गोस्वामीजी महाराजने नाम वन्दनाके प्रकरणमें नौ दोहोंमें कहा है, बड़े विचित्र ढंगसे। उसमें यहाँतक कह दिया है कि नाम रामजीसे भी अधिक है। रामचरितमानसमें बहुत विस्तारसे कहा है–

राम एक तापस तिय तारी । नाम कोटि खल कुमति सुधारी ॥

(रा.च.मा.बालकाण्ड-२४/२)

अर्थ– श्रीरामजीने एक तपस्वीकी स्त्री (अहिल्या)-को ही तारा, परन्तु नामने करोड़ों दुष्टोंकी बिगड़ी बुद्धिको सुधार दिया।

रामजीने एक; और तपस्वीकी स्त्री, तपस्वीकी स्त्री तो तपस्वीका ही आधा अँग है, यानी तपस्वीकी स्त्री तो पवित्र होती है, वह अपवित्र हो गई, पतित थोड़े ही थी। तो **राम एक तापस तिय तारी** यानी उस तपस्वीकी स्त्रीका उद्धार कर दिया और **नाम कोटि खल कुमति सुधारी** करोड़ों खल, दुष्ट, पापी उनकी कुमति सुधारी, कुबुद्धि सुधर गई, उनकी बुद्धि सुधर गई। फिर गोस्वामीजीने कहते-कहते यहाँतक कह दिया–

कहौं कहाँ लगि नाम बड़ाई । रामु न सकहिं नाम गुन गाई ॥

(रा.च.मा.बालकाण्ड-२६/४)

अर्थ– मैं नामकी बड़ाई कहाँतक कहूँ, राम भी नामके गुणोंको नहीं गा सकते।

नामके गुण कहाँतक गाऊँ, रामजी भी अपने नामका गुण गाने

लगें तो गा सकते नहीं। रामजी गाते नहीं हैं क्या? नहीं, गा सकते नहीं। **रामु न सकहिं नाम गुन गाई** मानो भगवान्‌की सामर्थ्य भी खत्म हो जाती है, नामकी महिमामें। तो भगवान् अनन्त हैं और अनन्त ही भगवान्‌का नाम है, तो अनन्तका अन्त कैसे कर दें ? **अनन्त नामानि** तो भगवान्‌के अनन्त नाम हैं और नामकी महिमा फिर अनन्त ही है। अभी अजामिल उपाख्यान सुना है, उसमें परीक्षित घबराए कि नरकोंका इतना दुःख कैसे टलेगा? दुःख टलेगा भगवन्नामसे। तो सज्जनों ! भगवान्‌के नामकी महिमा सुनते ही भगवन्नाममें ही लग जाएँ, सुनकर भगवन्नाममें लग जाय तो उसने भगवन्नामकी महिमा सुनी, नहीं तो सुनी ही कहाँ?

जैसे हम राजमें (सरकारको) कोई शिकायत करते हैं और उस शिकायतके अनुसार कार्यवाई नहीं होती है तो हम कहते हैं कि सुनवाई नहीं हुई। इसी तरहसे जो भगवान्‌के नामकी महिमा सुनकर फिर भी तत्परतासे भगवन्नाममें नहीं लगते हैं तो उन्होंने नामकी महिमा सुनी नहीं, उनके यहाँ सुनवाई नहीं हुई। नामकी महिमाका साक्षात्कार नाम-जप करनेसे होता है, सुननेसे साधारण रुचि हो जाती है परन्तु नाम लेनेसे जो उसका अनुभव होता है वो केवल सुननेसे नहीं होता। बस सुनकर भगवन्नाममें लग जाय। जैसे मोदक (लड्डू) होता है, वह देखनेमें अच्छा लगता है पर खानेमें जो लगता है वो देखनेमें थोड़े ही लगता है। इसी तरहसे नाम लेनेसे नामका पता लगता है।

एक संस्कृतका ग्रन्थ है-भगवन्नाम कौमुदी। उसमें इसका निर्णय किया है बड़ा शास्त्रार्थ हुआ है, उसमें नामकी महिमा गाई है। उसमें यह विशेष अवसर है कि कोई आफतमें आ जाय, मृत्यु आ जाय उस समय नाम लिया जाय, और ऐसी आफत जिससे छुटकारा मिलना मुश्किल हो उस समय नाम लिया जाय उसके नामकी कीमत

बहुत ज्यादा है। कारण कि उस समय सब तरहसे वृत्तियाँ इकट्ठी हो जाती हैं, रुक जाती हैं और उसका कोई सहारा नहीं होता। अजामिलके कोई सहारा नहीं, रक्षाका और कोई उपाय नहीं उसके पासमें, ऐसे असहाय होकर उसने नारायण कहकर बेटेको पुकारा। अजामिलकी बात ऐसी सुनी है कि संत आये थे कन्नौजमें, कान्यकुब्ज एक शहर है जिसे आजकल कन्नौज कहते हैं। वहाँ बैठे कुछ लोगोंसे संतोने पूछा, भाई ! इस गाँवमें कोई अच्छा भाव-भक्तिवाला घर है? जहाँ हम रात्रिमें निवास कर सकें, फिर हमें आगे जाना है। तो लोगोंने उनके साथ एक दिल्लगी की कि हमारे यहाँ तो अजामिल बड़ा भक्त है। संत थे सरल, और उनकी बात मानकर अजामिलके इन्तजारमें उसके घरके बाहर बैठ गये, अजामिल आया और उनसे पूछा महाराज ! कैसे आये? तो संतोंने कहा कि भाई तेरा नाम सुनकर आये हैं यहाँ कुछ लोग बैठे थे उन्होंने कहा कि अजामिल बड़ा भक्त है इस वास्ते हम तेरा नाम सुनके आ गए।

अजामिलने सोचा महाराज धोखेमें आ गये। उसने साफ कह दिया कि महाराज ! मैं हूँ तो ब्राह्मण पर मेरा खान-पान सब भ्रष्ट है। पतित हूँ मैं। जो आज आप आ गये तो हमारा भोजन करो, तो महाराजने कहा कि भाई हम तुम्हारा भोजन नहीं करेंगे। ऐसे पतितका अन्न खानेसे हम खुद पतित हो जायेंगे, इसलिये नहीं खायेंगे। अजामिलने उनसे अनुनय विनय किया कि किसी तरहसे ही आप हमारी बात मान लो। मैं आपके भोजनका पवित्रताके साथ दूसरी जगह प्रबन्ध कर दूँ? तो संतोंने कहा तुम हमारी बात मानो तो हम तुम्हारी बात मान सकते हैं। तो अजामिलने कहा बात मानूँगा पर ये बात जो आप कहते हो कि भजन करो, ये मेरेसे नहीं होगा। मेरे काम-धन्धा बहुत रहता है, समय मेरेको मिलता नहीं है। आप कह

दें कि माला लेकर बैठ जाओ, ये नहीं होगा हमारे से। हम गृहस्थी हैं हमारे बाल-बच्चे हैं उनका पालन-पोषण करना पड़ता है। संतोंने कहा तुम ऐसा करो कि अब जो तुम्हारे बालक होगा उसका नाम **नारायण** रख देना। उसने ये बात स्वीकार कर ली। वो सन्तोंकी कृपासे रखा हुआ **नारायण** नाम उसके लड़के का था। सन्तोंके हृदयमें था उसका उद्धार करना और उद्धार भगवन्नामसे हो जायेगा। छोटे बच्चेमें माँ-बापका स्नेह ज्यादा होता है, इसलिये यह स्नेहसे नाम लेगा। तो मृत्युके समय अजामिलके कोई सहारा नहीं, कोई सहायक नहीं, कोई रक्षक नहीं था। केवल बच्चेका नाम लिया **नारायण नारायण नारायण**। चार अक्षरका नाम था तो चार पार्षद आ गये। मृत्यु समय भगवन्नामका विशेष अवसर (माहात्म्य) होता है। सब तरफसे निराश होकर एक बार भगवान्का नाम लिया जाये तो बेड़ा पार है।

जब लग गज अपनो बल बरत्यो नेक सर्‌यो नहिं काम ।
निर्बल ह्वै बलराम पुकार्‌यो आयो आधे नाम ॥

राम कहते ही सब तरफसे वृत्तियाँ हटकर एक भगवान्में लग गयी। **एक आसरो एक बल एक आस बिस्वास** । अनन्य भावसे गजके भाव हो गया।

अजामिलके मनमें दृष्टि पुत्रकी है परन्तु रक्षा नारायण करेगा। तो उसने नारायणका नाम अन्तकालमें लिया। अन्तकालमें छूट होती है। मनुष्यको मानव शरीर मिलता है, केवल अपना उद्धार करनेके लिये। **एहि तन कर फल बिषय न भाई;** मनुष्य शरीर उद्धार करनेके लिये मिलता है तो उम्र भर भगवान्का भजन करो। परमात्माकी प्राप्तिके लिये ही लग जायँ। धन कमानेके लिये और भोग भोगनेके लिये यह शरीर नहीं है। यह शरीर परमात्माकी प्राप्तिके लिये है। चौरासी लाख योनियोंमें एक ही एक मनुष्य शरीर ऐसा है जो

भगवान्की प्राप्तिका अधिकारी है। वो अधिकार देवता आदिको भी नहीं है जो मनुष्यको है। ऐसे शरीरको पाकर भजनमें लग जाना अच्छा है। **'अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम्'** अनित्य है, सुख है नहीं इसमें, इस मनुष्य शरीरको पाकर मेरा भजन कर। इसके लिये ही मनुष्य शरीर है तो रात-दिन हर समय भगवान्में लग जाये। अजामिलने जब भगवान्के पार्षदोंसे भगवन्नामकी महिमा सुनी तो बच्चोंको, स्त्रीको और घरको छोड़कर हरिद्वार चला गया और जाकर भगवन्नाममें ही लग गया तो सुननेका असर इसको कहते हैं। ऐसा करनेपर फिर भगवान् थोड़े ही दुर्लभ हैं। नाम उच्चारण मात्रसे दूत भाग गये ऐसी बातें और भी मैंने सुनी हैं अभी जीवित अवस्थामें घटी हैं ये घटनाएँ। किसीको यमराजके दूत लेनेके लिये आये, तो उसने घबराकर भगवान्का नाम लिया और दूत भाग गये। ऐसी घटनाएँ घटी हैं। मैंने सुनाई थी एक वीरां बाई स्त्रीकी, इसी तरह ही एक दूसरी माताजी थीं उसने भी ऐसे दूतोंको देखा था, और भगवान्का नाम लिया तो दूत भाग गये। तो नाम लेनेसे लाभ होता है। भगवान्के नामसे उद्धार हुआ है जिनका, ऐसे लोग आपको सैंकड़ों ही मिल सकते हैं। **चहुँ जुग चहुँ श्रुति नाम प्रभाऊ, कलि बिसेषि नहिं आन उपाऊ** । कलियुगमें नामकी महिमा विशेष है सत्युग आदिमें दूसरे साधन भी हैं, पर कलियुगमें "**नहिं आन उपाऊ**"- दूजा उपाय नहीं है। चैतन्य महाप्रभुने कहा है- " **नम्नामकारि बहुधा निजसर्वशक्तिः**" कलियुग आते ही भगवान्ने अपनी पूरी शक्ति नाममें रख दी- **तत्रार्पिता नियमितः स्मरणे न कालः** । नाम स्मरणमें नियम नहीं रखा कि सुबह करें या दोपहरमें करें कि शामको करें, रात्रिको करें, दिनमें करें कभी भी करो, जब लगे तब नाम लें। आठ ही पहरमें नाम हर समय खुल्ला है, हर एक के लिये। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, स्त्री, पुरुष, पढ़ा-अपढ़ा, हिन्दू, मुस्लिम, इसाई कोई भी हो।

साधन करनेवाला कोई भी साधन जान जाये परन्तु नामकी महिमा कम नहीं है। भगवन्नाम भाव एवं ध्यान सहित लिया जाय तो बहुत दामी है। **गुप्त, अकाम, निरन्तर, ध्यान सहित सानन्द आदरयुक्त सबसे तुरत पाये परमानन्द**। छः बातें साथ होती हैं तो बहुत जल्दी लाभ होता है, विशेष लाभ होता है। नाम लिया जाय उसको प्रकट नहीं किया जाय कि मैं इतना नाम लेता हूँ, लोग मेरेको नाम जपवाला समझें, नामका प्रेमी मानें यह भाव होनेसे नामका महत्व कम हो जाता है। नाम-जप निष्कामभावसे करना चाहिये। कामना करे कि मेरी छोरीका ब्याह हो जाय, मेरेको धन मिल जाय क्योंकि मैं रामनाम करता हूँ, ऐसा करनेवाला रामनामकी बिक्री कर देता है। भगवन्नाम तो निष्काम भावसे होना चाहिये। केवल भगवान्‌की प्रसन्नताके लिये ही नाम लिया जाय और निरन्तर लिया जाय। भगवन्नाम थोड़ी देर लिया और छोड़ दिया, फिर थोड़ी देर लिया और छोड़ दिया ऐसा करना ठीक नहीं है। जैसे माताएँ रसोई बनाती हैं अगर वे दस-पन्द्रह मिनट चूल्हा जलाएँ और फिर आधा घण्टा छोड़ दें, फिर पाँच-दस मिनट बादमें चूल्हा जलाएँ फिर छोड़ दें तो ऐसा करनेपर दिनभरमें रसोई नहीं बनेगी। लगातार बनाएँ तो जल्दी बन जायेगी। ऐसे ही भगवान्‌का नाम निरन्तर लेना चाहिये। हर समय चलते-फिरते, उठते-बैठते, खाते-पीते, सोते-जागते भगवन्नाम लेना चाहिये।

हरिया दिनगत रामजी कबहूँ परगट होय भगवन्नाम हरदम लिया जाय। **रामनाम निशदिन रहे आठो पहर अखंड, रामदास संतका नाम न छोड़े संग।** रामका नाम जो नहीं छोड़ता तो रामजी उसको नहीं छोड़ते, हरदम रामजी उसके साथमें रहते हैं। और कहा गया है कि अगर कोई जबतक चेत हो, होश हो और वह भगवन्नाम लेता है तो अन्त समयमें पाषाण काष्ठ पत्थरकी तरह बेहोश हो जाये

तो भगवान् कहते हैं उस समय उसको मैं याद करता हूँ। जब तक उसको होश रहता है तब तक वो भगवान्‌के नामको छोड़ता नहीं तो भगवान् कहते हैं गीताजीमें **''ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्''** (गीता 4/11) वो छोड़ता नहीं तो भगवान् कहते हैं मेरेको होश रहेगा तब तक मैं उसको याद करूँगा। उसको होश नहीं, उसने तो होशमें भगवान्‌को याद किया अब बेहोश हो गया, तो भगवान् कभी बेहोश होते नहीं। उसको मैं मनोवान्छित फल देता हूँ। भगवन्नाममें अनन्त शक्ति, अनन्त नाम, अनन्त महिमा, और अपार महिमा है ऐसा यह भगवन्नाम है। वो भी फिर कलयुगमें विशेष महिमा है। यह वृन्दावन धाम है, भगवान्‌के धाम में नाम-जपका विशेष लाभ होता है। जैसे खेती करते हैं तो जमीन जहाँ बढ़िया होती है वहाँ खेतीकी अच्छी उपज होती है। ऐसे ही जो तीर्थ स्थान हैं, भगवान्‌का स्थल है, यह जो वृन्दावन है यहाँ भजन किया जाय तो उसका माहात्म्य बहुत विशेष है। और पाप किया जाये तो उसका बड़ा भयंकर फल होता है। जमीन अच्छी होती है वहाँ घास, पौधे और काँटेवाले वृक्ष, बबूल आदिमें भी बड़े-बड़े काँटे होते हैं। यह जमीन तो सबको बल लेती है। जो जैसा करे वैसा फल होता है। तो इस तरहसे तीर्थोंमें रह करके सदा सावधान रहें। तीर्थके पाप वज्रलेप हो जाते हैं। तो तीर्थोंमें बड़े सावधान होकर भजन करो। तीथोंमें कोई पाप करता है तो उसका फल बड़ा भयंकर होता है, क्योंकि उसका दण्ड मिलेगा। ऐसे पवित्र स्थलमें भगवान्‌का नाम, भगवान्‌के दर्शन करना और भगवान्‌की कथा सुननी चाहिये।

रामहि सुमिरिअ गाइअ रामहि । संतत सुनिअ राम गुन ग्रामहि ॥

(रा.च.मा.उत्तर 130/3)

अर्थ– बस, श्रीरामजीका ही स्मरण करना, श्रीरामजीका ही

गुण गाना और निरन्तर श्रीरामजीके ही गुणसमूहोंको सुनना चाहिये।

रामजीकी ही बातें सुनता रहे। **मच्चित्ता मद्‌गतप्राणा...** (गीता 10/9) भगवान्‌का ही प्राण हो जाये, भगवान्‌का ही चिन्तन होता रहे। एक के ही परायण हो जाये, नामके परायण हो जाये तो सब काम हो जायेगा, सब काम एक भगवान्‌के नामसे हो जाता है। पढ़ा लिखा नहीं है और कुछ नहीं जानता है तो भी एक भगवन्नामसे सब कुछ हो जाता है। **चारों वेद ठिंठोर के अन्त कहोगे राम, सो रज्जब पहले कहो इतने में ही काम** इस भगवन्नाममें लग जायें, रात और दिन। यहाँ भगवान्‌की कृपासे भगवन्नामका प्रचार हो रहा है। यहाँ बहुतसे भाई-बहन भगवान्‌का नाम लेते हैं। झोले लिये हुए भगवन्नाम-जप करते हैं। यह बड़ा पवित्र स्थल है, यह भगवान्‌की लीला-भूमि है, यह बड़ा दिव्य देश है। इस देशमें आकर भगवान्‌का भजन करनेका बड़ा विशेष माहात्म्य है, कथाका भी बड़ा विशेष माहात्म्य है। यह स्थान बल देता है, शक्ति देता है और सामर्थ्य देता है। सज्जनों ! भगवान्‌का जो नाम लेता है उसको फिर परवाह नहीं रहती किसीकी। बड़े उत्साहसे नाम लेते रहो। भगवन्नाम मीठा लगे, प्यारा लगे।

सज्जनों-बहनों-भाइयों ! भगवान्‌से माँगो पर संसारकी चीज माँगनेकी नहीं है भगवान्‌की बात माँगनी है। **हे नाथ !** आपका नाम मीठा लगे, आपका नाम रुचिकर लगे। आपका नाम प्यारा लगे, आपका नाम भूलूँ नहीं। **हे नाथ !** आपके नाममें लग जाऊँ, यह माँगनेकी चीज है। भगवान्‌से और चीज माँगनी ही नहीं है। भगवान्‌से प्रेम माँगो, ज्ञान भी नहीं माँगना है। आपके चिन्तनमें लग जाये; भगवान्‌का नाम प्यारा लगे, भगवान्‌का धाम प्यारा लगे, कथा प्यारी लगे। गंगा-यमुना भी भगवान्‌से सम्बन्ध होनेसे प्यारी लगे। जिसका भगवान्‌के साथ सम्बन्ध हो गया वे सब उद्धार करनेवाली चीजें हैं।

इस बातसे आपलोगोंमें एक विशेष बात कहनी है, आज आपने अजामिल उपाख्यान सुना। एक मेरी प्रार्थना और सुनो। कोई भी प्राणी कभी भी मरता हो तो उसके पास बैठ करके भगवन्नाम सुनाओ। कोई भी प्राणी, मनुष्यकी बात विशेष है। छोटा बच्चा मरता है, बूढ़ा-जवान मरता हो, रोगी-निरोगी कोई मरता हो मृत्यु समयमें भगवान्‌का नाम सुनाओ इसका बड़ा भारी माहात्म्य है। उसे भगवान्‌का नाम सुनानेसे कल्याण हो जाता है। ऐसे ही किसीको एक आदमी भोजन करे उतना ही अन्न मिला और वो किसी भूखेको खिला दे तो कितना माहात्म्य होता है? ऐसे ही मनुष्य शरीर मिला है केवल परमात्माकी प्राप्तिके लिये और वह किसीकी मृत्यु होनेवाली हो उसे अन्तमें भगवान्‌का नाम सुना दे तो उसका भी हो जाये कल्याण।

अन्तकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम् । (गीता ८/५) **यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम् ।** (गीता ८/६) अन्तकालमें भगवान्‌का नाम स्मरण हो जाता है तो **याति नास्त्यत्र संशयः** (गीता ८/५) **अन्त मति सो गति** अन्तमें भगवान्‌का नाम याद दिला दें। आपलोगोंसे सबसे प्रार्थना है कोई मरता हो तो उसे संसारकी बात याद मत दिलाओ। यह छोरा (लड़का) है, पोता है, पड़पोता है, दामाद आ गया ऐसी कोई बात मत करो। बस भगवान्‌का नाम सुनाओ **राम राम राम राम....**। ध्यान देकर सुनें ! मनुष्य शरीर मिला परमात्माकी प्राप्तिके लिये तो भगवान् कहते हैं-मैंने तेरेको, जीवको मनुष्य शरीर दिया, तैंने मनुष्य शरीर लिया। (भगवान्‌ने) मनुष्य शरीर केवल कल्याणके लिये दिया और हमने लिया, इसलिये दोनोंकी इज्जत रह जाये। अन्तकालमें भी तू मेरा नाम ले ले तो तेरी-मेरी इज्जत रह जाय। तेरा मानव शरीर लेना सफल हो जाय और मेरा मानव शरीर देना सफल हो जाय। भगवान् प्रतीक्षा करते हैं अन्तिम श्वास तक कि तू

मेरा नाम ले ले, तेरा कल्याण हो जाये। तो यह छूट अन्तकालमें है, ये छूट एक बार ही मिलेगी। एक बार ही मनुष्य मरता है, दो बार थोड़े ही मरता है। परन्तु किसी दूसरे व्यक्तिको मृत्युके समय भगवन्नाम सुना दे तो अपनेको कई बार ऐसा (दूसरेको भगवन्नाम सुनानेका) मौका मिल जाये। कोई मरता है तो भगवन्नाम सुना दो महाराज ! सुननेवालेका मुफ्तमें कल्याण हो जायेगा। ऐसा करनेसे भगवान्‌पर असर पड़ता है कि मैं सर्व समर्थ हूँ पर लोगोंके उद्धारकी मेरी तरफसे चेष्टा नहीं करता हूँ। यह बेचारा अल्प शक्तिवाला मनुष्य होकर और दूसरोंके उद्धारकी चेष्टा करता है कि इसका कल्याण हो जाय। इसको आदर्श मानकर तो मेरेको ऐसा करना चाहिये, पर मैं नहीं करूँ तो कम-से-कम यह चेष्टा करूँ कि नाम सुननेवालेका कल्याण कर दूँ। इससे भगवन्नाम सुनानेवालेकी चेष्टा भगवान् सिद्ध करते हैं। आपने ख्याल किया ! ऐसा करनेपर भगवान् पर असर पड़ता है कि इसमें सामर्थ्य नहीं है, अन्तर्यामी नहीं है, सर्वसमर्थ नहीं है परम दयालु नहीं है और मैं सर्वसमर्थ हूँ, परम दयालु हूँ एवं सर्वज्ञ हूँ, यह अल्पशक्तिवाला होते हुए भी दूसरेका कल्याण करनेके लिये, उद्धार करनेके लिये नाम सुनाता है तो यह दूजेका उद्धार कर दे तो कम-से-कम इसका उद्धार तो मैं करूँ। तो ऐसा करनेपर भगवान्‌पर असर पड़ता है।

एक विलक्षण बात है कि कलकत्तामें एक ऐसी समिति है। कलकत्तावाले लोग जानते हैं वहाँ गोविन्द भवन एक संस्था है, जिसमें कई सदस्य हैं, समितिवालोंका उद्देश्य है कि कोई कहीं भी बीमार हो तो समितिवालोंको समाचार दे दो, वहाँसे समितिवाले लोग आ जाते हैं और वो लोग दो-दो घण्टे भगवन्नाम सुनानेकी ड्यूटी लेकर आठ पहर (24 घण्टे) भगवन्नाम सुनाते हैं। आठों पहर भगवन्नाम सुनाओ, सेवा करो और लेना-देना कुछ भी नहीं, ऐसा उस समितिका उद्देश्य

है। जल भी नहीं पीते, प्यास लगे तो पी लो परन्तु मरणासन्न व्यक्तिको नाम सुना दो, ऐसी संस्था है। उसमें हमारे पटवारीजी (एक सत्संगी) कहते थे कि रात्रिमें बारह बजेसे दो बजेका समय खाली रहता है, तो वह कहते उस समय मैं सुनाऊँगा, वह कहते थे मेरे सामने कई बार मरणासन्न व्यक्तिका शरीर छूटा है। वे समितिवाले आठों पहर ही सुनाते हैं और आठ पहरमेंसे ही किसी समयमें व्यक्तिका शरीर छूटता है तो जिसे सुनानेके समय उत्साह होता है, उसको भगवान् मौका देते हैं, अवसर देते हैं। इस वास्ते हरेक का उद्धार कैसे हो? इसके लिये भगवन्नाम सुनाओ। कर्णवास (गंगाजीके किनारे एक तीर्थ स्थान)-की बात है– एक बिल्लीके पीछे कुत्ता दौड़ा और उसे पकड़ लिया, फिर बेचारीको नोंच दिया तो हमारे गुरुभाई उस बिल्लीको गंगाजीके किनारे ले गये और भगवन्नाम सुनाते ही रहे, सुनाते-सुनाते वह मर गई तो फिर उसे गंगाजीमें बहा दिया।

कोई प्राणी मरता हो– गाय, भैंस, भेड़, बकरी, कुत्ता, गधा उसे भगवन्नाम सुना दो तो वहाँ यमराजके दूत नहीं आते। विष्णुपुराणमें आता है, भागवतमें छठे स्कन्धमें आता है, ऐसा काशीखण्डमें भी आता है। यमराज अपने दूतोकों कहते हैं जहाँ भगवन्नाम होता हो वहाँ मत जाना, फजीती होगी, ऐसी आज्ञा दी है। तो इसलिये भगवान्‌का नाम सुनाओ किसीकी मृत्यु होती हो, कोई कैसा ही क्यूँ न हो। सीधी सरल बात है।

सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू । लोक लाहु परलोक निबाहू ॥

(रा.च.मा.बाल. 20/1)

अर्थ– (भगवन्नाम) स्मरण करनेमें सबके लिये सुलभ और सुख देनेवाला है, और जो इस लोकमें लाभ और परलोकमें निर्वाह करते हैं (अर्थात् भगवान्‌के दिव्य धाममें दिव्य देहसे सदा भगवत्सेवामें नियुक्त रहते हैं।)

'हरि नाम भजां सब काज सर' माँगकर खानेवाले रोटी माँगते फिरते हैं दिन भर, फिर भी नहीं मिलती। और अगर वे बैठकर **राम-राम** करने लग जाये तो उनके ठाठ हो जायेगा, महाराज ! भाग्य बदल जाता है, भाग्य। महाराज ! भगवान्‌के नाममें रात-दिन लगे वो आदमी और तरह का हो जाता है।

भजन करे पातालमें प्रकट होत आकाश ।
दाबी दूबी नहीं दबे ये कस्तूरीकी बास ॥

भजन करे पातालमें प्रकट होत आकाश, सच्चे हृदयसे भगवान्‌में लग जाए फिर कोई कमी नहीं रहेगी। लोकमें परलोकमें कोई कमी नहीं रहेगी सब तरहसे ठीक हो जायेगा। भाग्य बदल जाता है। नहीं तो भाग्य नहीं बदलता, स्वभाव नहीं बदलता पर भगवान्‌के भजन करनेसे, नाम लेनेसे भाग्य बदल जाता है, स्वभाव बदल जाता है, जीवन बदल जाता है। महान् दु:खी जीवन, नारकीय जीवन हो तो वह भी संतोंका-सा जीवन हो जाता है और वह दुनियाँका उद्धार करनेवाला सन्त बन जाता है। भगवन्नाम लेनेसे कितनी विलक्षणता आ जाती है। कलिकालमें नामपर विशेष जिम्मा है। वेदमें तीन काण्ड हैं कर्मकाण्ड, उपासनाकाण्ड और ज्ञानकाण्ड।

नहिं कलि करम न भक्ति बिबेकू। राम नाम अवलंबन एकू ॥

(रा.च.मा.बाल. 27/4)

अर्थ– कलियुगमें न कर्म है, न भक्ति है और न ज्ञान ही है; एक रामनाम ही आधार है।

राम-राम सुनाओ। इसका अर्थ यह नहीं कि कृष्णका नाम कम है, वासुदेव, हरि, मोहन, माधव, मुकुन्द, मुरारि एक-एक नाममें अनन्त शक्ति है। गोस्वामीजी महाराजने राम नाम लिया है। ऐसे ही संतोने अलग-अलग नाम लिये। हर सम्प्रदायके नाम अलग-अलग हैं

कोई नाम कम नहीं है, यद्यपि रामायणमें आया है– नारदजी महाराजने भगवान्‌से वरदान माँगा है–

जद्यपि प्रभु के नाम अनेका । श्रुति कह अधिक एक तें एका ।
राम सकल नामन्ह ते अधिका । होउ नाथ अघ खग गन बधिका ॥

(रा.च.मा.अरण्य 42/4)

अर्थ– यद्यपि प्रभुके अनेकों नाम हैं और वेद कहते हैं कि वे सब एक-से-एक बढ़कर हैं, तो भी हे नाथ ! रामनाम सब नामोंसे बढ़कर हो और पापरूपी पक्षियोंके समूहके लिये यह वधिकके समान हो।

नारदजीने **राम** नाम सबमें श्रेष्ठ हो जाये यह वरदान भगवान्‌से माँगा, इसलिये **राम** नामकी महिमा विशेष है। **राम** नाम लेनेवाले अच्छे-अच्छे सन्त महात्मा हो गये, उनमें विचित्रता आ गई। तो भगवान्‌के नाममें सज्जनों लग जाओ। कितना सरल, सीधा, सुगम है राम नाम। कलकत्तामें कोठारीजी थे, वे बूढ़े थे उनके लकवा मार गया तो वे बोल नहीं सकते थे। मैं उनके पास गया था, वहाँ मेरेको देखकर **राम-राम-राम** बोले। लकवेमें भी **राम** नाम आ जाये, कितना सुलभ है राम नाम। लकवेमें जीभ अटक जाती है बोल नहीं सकते फिर भी **राम** का नाम आ जाता है। इतना सरल है, सुलभ है इतने महत्वका है तो हरेक भाईको राम नाममें लग जाना चाहिये। जो आपको सुलभ लगे **हरे राम हरे राम....** जपो, **नमः शिवाय** करो। जितने भगवन्नाम हैं उसमें जो आपको प्यारा लगता है, जिसमें आपकी श्रद्धा है, प्रेम-सहित जैसे लगो लग जाओ। यह भगवन्नाम लेनेका मौका है, पता नहीं शरीर कब चला जाये। **'मारही काल अचानक चपेट की होई घड़ीमें राखकी ढेरी'** । मरना तो पड़ेगा ही, इस वास्ते जब तक श्वास है, जब तक धौंकनी चलती है, आँखे टिमटिमाती हैं, शरीर है तब तक

भगवान्‌में लग जाओ भाई ! घर जल जाये, आग लग गई, अब कुँआ खोदे? अब कहाँ कुँआ खोदे भाई ! इस वास्ते पहलेसे भगवन्नाम कर लो। रात और दिन भगवान्‌में लग जाओ। पापीको भगवान्‌का नाम आता नहीं। भगवन्नाम आता है तो समझ लो कि भगवान्‌की बड़ी कृपा है, विशेष कृपा है। गीधराज जटायु भी भगवान्‌से कहते हैं–

जा कर नाम मरत मुख आवा । अधमउ मुकुत होइ श्रुति गावा ।।

(रा.च.मा.अरण्यकाण्ड 31/3)

अर्थ– मरते समय जिनका नाम मुखमें आ जानेसे अधम (महान् पापी) भी मुक्त हो जाता है, ऐसा वेद गाते हैं।

नामका इतना माहात्म्य है? जानते नहीं थे तो अब जान जाओ। गीताप्रेसके संस्थापक, संरक्षक, संचालक श्रीजयदयालजी गोयन्दका थे। उन्होंने तीन-चार जगह लिखा है मेरेको जितना भगवन्नामसे लाभ हुआ उतना गीताजीको छोड़कर किसीसे नहीं हुआ। उन्हें भगवन्नामसे और गीताजीसे लाभ हुआ है। तो हमें भी भगवन्नामका जप करना और गीताजीका अध्ययन करना चाहिये। उन्होंने प्रत्यक्षमें कहा कि भगवन्नामसे लाभ हुआ और इतना हुआ जो मैं कह नहीं सकता। पढ़ा ही होगा तत्त्व चिन्तामणिमें। वर्तमानमें गीताप्रेसके द्वारा दुनियाँको ऐसा लाभ हुआ है, और कितना लाभ हो रहा है इसके मूलमें भगवन्नाम और गीताजी है, तो इस भगवन्नाम और गीताजीमें अपना लाभ और दुनियाँका हित और परम कल्याण है।

नारायण नारायण नारायण श्रीमन्नारायण नारायण नारायण............

॥ श्रीहरिः ॥

श्रीमद्भागवत महापुराण षष्ठम् स्कन्धका अजामिल उपाख्यान

॥ श्रीहरिः ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय

श्रीमद्भागवतमहापुराण

षष्ठम् स्कन्ध

पहला अध्याय

अजामिलोपाख्यानका प्रारम्भ

राजा परीक्षित्‌ने कहा—भगवन् ! आप पहले (द्वितीय स्कन्धमें) निवृत्तिमार्गका वर्णन कर चुके हैं तथा यह बतला चुके हैं कि उसके द्वारा अर्चिरादि मार्गसे जीव क्रमशः ब्रह्मलोकमें पहुँचता है और फिर ब्रह्माके साथ मुक्त हो जाता है ॥१॥ मुनिवर ! इसके सिवा आपने उस प्रवृत्तिमार्गका भी (तृतीय स्कन्धमें) भलीभाँति वर्णन किया है, जिससे त्रिगुणमय स्वर्ग आदि लोकोंकी प्राप्ति होती है और प्रकृतिका सम्बन्ध न छूटनेके कारण जीवोंको बार-बार जन्म-मृत्युके चक्करमें आना पड़ता है ॥२॥ आपने यह भी बतलाया कि अधर्म करनेसे अनेक नरकोंकी प्राप्ति होती है और (पाँचवें स्कन्धमें) उनका विस्तारसे वर्णन भी किया। (चौथे स्कन्धमें) आपने उस प्रथम मन्वन्तरका वर्णन किया, जिसके अधिपति स्वायुम्भुव मनु थे ॥३॥ साथ ही (चौथे और पाँचवें स्कन्धमें) प्रियव्रत और उत्तानपादके वंशों तथा चरित्रोंका एवं द्वीप, वर्ष, समुद्र, पर्वत, नदी, उद्यान और विभिन्न द्वीपोंके वृक्षोंका भी निरूपण किया ॥४॥ भूमण्डलकी स्थिति, उसके द्वीप-वर्षादि विभाग, उनके लक्षण तथा परिमाण, नक्षत्रोंकी स्थिति, अतल-वितल आदि भू-विवर (सात पाताल) और भगवान्‌ने इन सबकी जिस प्रकार सृष्टि की—उसका वर्णन भी सुनाया ॥५॥ महाभाग ! अब मैं वह उपाय जानना चाहता हूँ, जिसके अनुष्ठानसे मनुष्योंको अनेकानेक भयङ्कर यातनाओंसे पूर्ण नरकमें न जाना पड़े। आप कृपा करके उसका उपदेश कीजिये ॥६॥

श्रीशुकदेवजीने कहा—मनुष्य मन, वाणी और शरीरसे पाप करता है। यदि वह उन पापोंका इसी जन्ममें प्रायश्चित्त न कर ले, तो मरनेके बाद उसे अवश्य ही उन भयङ्कर यातनापूर्ण नरकोंमें जाना पड़ता है, जिनका वर्णन मैंने तुम्हें (पाँचवें स्कन्धके अन्तमें) सुनाया है ॥७॥ इसलिये बड़ी सावधानी और सजगताके साथ रोग एवं मृत्युके पहले ही शीघ्र-से-शीघ्र पापोंकी गुरुता और लघुतापर विचार करके उनका प्रायश्चित्त कर डालना चाहिये, जैसे मर्मज्ञ चिकित्सक रोगोंका कारण और उनकी गुरुता-लघुता जानकर झटपट उनकी चिकित्सा कर डालता है ॥८॥

राजा परीक्षितने पूछा—भगवन् ! मनुष्य राजदण्ड, समाजदण्ड आदि लौकिक और शास्त्रोक्त नरकगमन आदि पारलौकिक कष्टोंसे यह जानकर भी कि पाप उसका शत्रु है, पापवासनाओंसे विवश होकर बार-बार वैसे ही कर्मोंमें प्रवृत्त हो जाता है। ऐसी अवस्थामें उसके पापोंका प्रायश्चित्त कैसे सम्भव है? ॥९॥ मनुष्य कभी तो प्रायश्चित्त आदिके द्वारा पापोंसे छुटकारा पा लेता है, कभी फिर उन्हें ही करने लगता है। ऐसी स्थितिमें मैं समझता हूँ कि जैसे स्नान करनेके बाद धूल डाल लेनेके कारण हाथीका स्नान व्यर्थ हो जाता है, वैसे ही मनुष्यका प्रायश्चित्त करना भी व्यर्थ ही है ॥१०॥

श्रीशुकदेवजीने कहा—वस्तुतः कर्मके द्वारा ही कर्मका निर्बीज नाश नहीं होता; क्योंकि कर्मका अधिकारी अज्ञानी है। अज्ञान रहते पापवासनाएँ सर्वथा नहीं मिट सकतीं। इसलिये सच्चा प्रायश्चित्त तो तत्त्वज्ञान ही है ॥११॥ जो पुरुष केवल सुपथ्यका ही सेवन करता है, उसे रोग अपने वशमें नहीं कर सकते। वैसे ही परीक्षित् ! जो पुरुष नियमोंका पालन करता है, वह धीरे-धीरे पाप-वासनाओंसे मुक्त हो कल्याणप्रद तत्त्वज्ञान प्राप्त करनेमें समर्थ होता है ॥१२॥ जैसे बाँसोंके झुरमुटमें लगी आग बाँसोंको जला डालती है—वैसे ही धर्मज्ञ और श्रद्धावान् धीर पुरुष तपस्या, ब्रह्मचर्य, इन्द्रियदमन, मनकी स्थिरता,

दान, सत्य, बाहर-भीतरकी पवित्रता तथा यम एवं नियम—इन नौ साधनोंसे मन, वाणी और शरीरद्वारा किये गये बड़े-से-बड़े पापोंको भी नष्ट कर देते हैं ।।१३-१४।। भगवान्की शरणमें रहनेवाले भक्तजन, जो बिरले ही होते हैं, केवल भक्तिके द्वारा अपने सारे पापोंको उसी प्रकार भस्म कर देते हैं, जैसे सूर्य कुहरेको ।।१५।। परीक्षित् ! पापी पुरुषकी जैसी शुद्धि भगवान्को आत्मसमर्पण करनेसे और उनके भक्तोंका सेवन करनेसे होती है, वैसी तपस्या आदिके द्वारा नहीं होती ।।१६।। जगत्में यह भक्तिका पंथ ही सर्वश्रेष्ठ, भयरहित और कल्याणस्वरूप है, क्योंकि इस मार्गपर भगवत्परायण, सुशील साधुजन चलते हैं ।।१७।। परीक्षित् ! जैसे शराबसे भरे घड़ेको नदियाँ पवित्र नहीं कर सकतीं, वैसे ही बड़े-बड़े प्रायश्चित्त बार-बार किये जानेपर भी भगवद्विमुख मनुष्यको पवित्र करनेमें असमर्थ हैं ।।१८।। जिन्होंने अपने भगवद्गुणानुरागी मन-मधुकरको भगवान् श्रीकृष्णके चरणारविन्द-मकरन्दका एक बार पान करा दिया, उन्होंने सारे प्रायश्चित्त कर लिये। वे स्वप्नमें भी यमराज और उनके पाशधारी दूतोंको नहीं देखते। फिर नरककी तो बात ही क्या है ।।१९।।

परीक्षित् ! इस विषयमें महात्मालोग एक प्राचीन इतिहास कहा करते हैं। उसमें भगवान् विष्णु और यमराजके दूतोंका संवाद है। तुम मुझसे उसे सुनो ।।२०।। कान्यकुब्ज नगर (कन्नौज)-में एक दासीपति ब्राह्मण रहता था। उसका नाम था अजामिल। दासीके संसर्गसे दूषित होनेके कारण उसका सदाचार नष्ट हो चुका था ।।२१।। वह पतित कभी बटोहियोंको बाँधकर उन्हें लूट लेता, कभी लोगोंको जुएके छलसे हरा देता, किसीका धन धोखा-धड़ीसे ले लेता तो किसीका चुरा लेता। इस प्रकार अत्यन्त निन्दनीय वृत्तिका आश्रय लेकर वह अपने कुटुम्बका पेट भरता था और दूसरे प्राणियोंको बहुत ही सताता था ।।२२।। परीक्षित् ! इसी प्रकार वह वहाँ रहकर दासीके बच्चोंका लालन-पालन करता रहा। इस प्रकार उसकी आयुका बहुत बड़ा

भाग-अट्ठासी वर्ष—बीत गया ।।२३।। बूढ़े अजामिलके दस पुत्र थे। उनमें सबसे छोटेका नाम था **'नारायण'**। माँ-बाप उससे बहुत प्यार करते थे ।।२४।। वृद्ध अजामिलने अत्यन्त मोहके कारण अपना सम्पूर्ण हृदय अपने बच्चे नारायणको सौंप दिया था। वह अपने बच्चेकी तोतली बोली सुन-सुनकर तथा बालसुलभ खेल देख-देखकर फूला नहीं समाता था ।।२५।। अजामिल बालकके स्नेह-बन्धनमें बँध गया था। जब वह खाता तब उसे भी खिलाता, जब पानी पीता तो उसे भी पिलाता। इस प्रकार वह अतिशय मूढ़ हो गया था, उसे इस बातका पता ही न चला कि मृत्यु मेरे सिरपर आ पहुँची है ।।२६।।

वह मूर्ख इसी प्रकार अपना जीवन बिता रहा था कि मृत्युका समय आ पहुँचा। अब वह अपने पुत्र बालक नारायणके सम्बन्धमें ही सोचने-विचारने लगा ।।२७।। इतनेमें ही अजामिलने देखा कि उसे ले जानेके लिये अत्यन्त भयावने तीन यमदूत आये हैं। उनके हाथोंमें फाँसी है, मुँह टेढ़े-टेढ़े हैं और शरीरके रोएँ खड़े हुए हैं ।।२८।। उस समय बालक नारायण वहाँसे कुछ दूरीपर खेल रहा था। यमदूतोंको देखकर अजामिल अत्यन्त व्याकुल हो गया और उसने बहुत ऊँचे स्वरसे पुकारा— **'नारायण !'** ।।२९।। भगवान्के पार्षदोंने देखा कि यह मरते समय हमारे स्वामी भगवान् नारायणका नाम ले रहा है, उनके नामका कीर्तन कर रहा है; अतः वे बड़े वेगसे झटपट वहाँ आ पहुँचे ।।३०।। उस समय यमराजके दूत दासीपति अजामिलके शरीरमें से उसके सूक्ष्मशरीरको खींच रहे थे। विष्णुदूतोंने उन्हें बलपूर्वक रोक दिया ।।३१।। उनके रोकनेपर यमराजके दूतोंने उनसे कहा—'अरे, धर्मराजकी आज्ञाका निषेध करनेवाले तुमलोग हो कौन? ।।३२।। तुम किसीके दूत हो, कहाँसे आये हो और इसे ले जानेसे हमें क्यों रोक रहे हो? क्या तुमलोग कोई देवता, उपदेवता अथवा सिद्धश्रेष्ठ हो? ।।३३।। हम देखते हैं कि तुम सब लोगोंके नेत्र कमलदलके समान कोमलतासे भरे हैं, तुम पीले-पीले रेशमी वस्त्र पहने हो, तुम्हारे सिरपर मुकुट,

कानोंमें कुण्डल और गलोंमें कमलके हार लहरा रहे हैं ॥३४॥ सबकी नयी अवस्था है, सुन्दर-सुन्दर चार-चार भुजाएँ हैं, सभीके करकमलोंमें धनुष, तरकस, तलवार, गदा, शङ्ख, चक्र, कमल आदि सुशोभित हैं ॥३५॥ तुमलोगोंकी अङ्गकान्तिसे दिशाओंका अन्धकार और प्राकृत प्रकाश भी दूर हो रहा है। हम धर्मराजके सेवक हैं। हमें तुमलोग क्यों रोक रहे हो?' ॥३६॥

श्रीशुकदेवजी कहते हैं—परीक्षित् ! जब यमदूतोंने इस प्रकार कहा, तब भगवान् नारायणके आज्ञाकारी पार्षदोंने हँसकर मेघके समान गम्भीर वाणीसे उनके प्रति यों कहा—॥३७॥

भगवान्‌के पार्षदोंने कहा—यमदूतों ! यदि तुम लोग सचमुच धर्मराजके आज्ञाकारी हो तो हमें धर्मका लक्षण और धर्मका तत्त्व सुनाओ ॥३८। दण्ड किस प्रकार दिया जाता है? दण्डका पात्र कौन है? मनुष्योंमें सभी पापाचारी दण्डनीय हैं अथवा उनमेंसे कुछ ही? ॥३९॥

यमदूतोंने कहा—वेदोंने जिन कर्मोंका विधान किया है, वे धर्म हैं और जिनका निषेध किया है, वे अधर्म हैं। वेद स्वयं भगवान्‌के स्वरूप हैं। वे उनके स्वाभाविक श्वास-प्रश्वास एवं स्वयंप्रकाश ज्ञान हैं—ऐसा हमने सुना है ॥४०॥ जगत्‌के रजोमय, सत्त्वमय और तमोमय—सभी पदार्थ, सभी प्राणी अपने परम आश्रय भगवान्‌में ही स्थित रहते हैं। वेद ही उनके गुण, नाम, कर्म और रूप आदिके अनुसार उनका यथोचित विभाजन करते हैं ॥४१॥ जीव शरीर अथवा मनोवृत्तियोंसे जितने कर्म करता है, उसके साक्षी रहते हैं—सूर्य, अग्नि, आकाश, वायु, इन्द्रियाँ, चन्द्रमा, सन्ध्या, रात, दिन, दिशाएँ, जल, पृथ्वी, काल और धर्म ॥४२॥ इनके द्वारा अधर्मका पता चल जाता है और तब दण्डके पात्रका निर्णय होता है। पाप कर्म करनेवाले सभी मनुष्य अपने-अपने कर्मोंके अनुसार दण्डनीय होते हैं ॥४३॥ निष्पाप पुरुषो ! जो प्राणी कर्म करते हैं, उनका गुणोंसे सम्बन्ध रहता ही है। इसीलिये सभीसे कुछ पाप और कुछ पुण्य होते ही हैं और देहवान् होकर कोई भी पुरुष कर्म किये बिना रह ही नहीं सकता ॥४४॥ इस लोकमें जो मनुष्य जिस प्रकारका और जितना अधर्म या धर्म करता है, वह परलोकमें उसका उतना और वैसा ही फल भोगता है ॥४५॥ देवशिरोमणियो ! सत्त्व, रज और तम—इन तीन गुणोंके भेदके कारण इस लोकमें भी तीन प्रकारके प्राणी दीख पड़ते हैं—पुण्यात्मा, पापात्मा और पुण्य-पाप दोनोंसे युक्त, अथवा सुखी, दुखी और सुख-दुःख दोनोंसे युक्त; वैसे ही परलोकमें भी उनकी त्रिविधताका अनुमान किया जाता है ॥४६॥ वर्तमान समय ही भूत और भविष्यका अनुमान करा देता है। वैसे ही वर्तमान जन्मके पाप-पुण्य भी भूत और भविष्य जन्मोंके पाप-पुण्यका अनुमान करा देते हैं ॥४७॥ हमारे स्वामी अजन्मा भगवान् सर्वज्ञ यमराज सबके अन्तःकरणोंमें ही विराजमान हैं। इसलिये वे अपने मनसे ही सबके पूर्वरूपोंको देख लेते हैं। वे साथ ही उनके भावी स्वरूपका भी विचार कर लेते हैं ॥४८॥ जैसे सोया हुआ अज्ञानी पुरुष स्वप्नके समय प्रतीत हो रहे कल्पित शरीरको ही अपना वास्तविक शरीर समझता है, सोते हुए अथवा जागनेवाले शरीरको भूल जाता है, वैसे ही जीव भी अपने पूर्वजन्मोंकी याद भूल जाता है और वर्तमान शरीरके सिवा पहले और पिछले शरीरोंके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं जानता ॥४९॥ सिद्धपुरुषो ! जीव इस शरीरमें पाँच कर्मेन्द्रियोंसे लेना-देना, चलना-फिरना आदि काम करता है, पाँच ज्ञानेन्द्रियोंसे रूप-रस आदि पाँच विषयोंका अनुभव करता है और सोलहवें मनके साथ सत्रहवाँ वह स्वयं मिलकर अकेले ही मन, ज्ञानेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय—इन तीनोंके विषयोंको भोगता है ॥५०॥ जीवका यह सोलह कला और सत्त्वादि तीन गुणोंवाला लिङ्गशरीर अनादि है। यही जीवको बार-बार हर्ष, शोक, भय और पीड़ा देनेवाले जन्म-मृत्युके चक्करमें डालता है ॥५१॥ जो जीव अज्ञानवश काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर—इन छः शत्रुओंपर विजय प्राप्त नहीं कर लेता, उसे इच्छा न रहते हुए भी विभिन्न वासनाओंके अनुसार अनेकों कर्म करने पड़ते

हैं। वैसी स्थितिमें वह रेशमके कीड़ेके समान अपनेको कर्मके जालमें जकड़ लेता है और इस प्रकार अपने हाथों मोहका शिकार बन जाता है ।।५२।। कोई शरीरधारी जीव बिना कर्म किये कभी एक क्षण भी नहीं रह सकता। प्रत्येक प्राणीके स्वाभाविक गुण बलपूर्वक विवश करके उससे कर्म कराते हैं ।।५३।। जीव अपने पूर्वजन्मोंके पाप-पुण्यमय संस्कारोंके अनुसार स्थूल और सूक्ष्म शरीर प्राप्त करता है। उसकी स्वाभाविक एवं प्रबल वासनाएँ कभी उसे माताके-जैसा (स्त्रीरूप) बना देती हैं, तो कभी पिताके-जैसा (पुरुषरूप) ।।५४।। प्रकृतिका संसर्ग होनेसे ही पुरुष अपनेको अपने वास्तविक स्वरूपके विपरीत लिङ्गशरीर मान बैठा है। यह विपर्यय भगवान्‌के भजनसे शीघ्र ही दूर हो जाता है ।।५५।।

देवताओ ! आप जानते ही हैं कि यह अजामिल बड़ा शास्त्रज्ञ था। शील, सदाचार और सद्‌गुणोंका तो यह खजाना ही था। ब्रह्मचारी, विनयी, जितेन्द्रिय, सत्यनिष्ठ, मन्त्रवेत्ता और पवित्र भी था ।।५६।। इसने गुरु, अग्नि, अतिथि और वृद्ध पुरुषोंकी सेवा की थी। अहङ्कार तो इसमें था ही नहीं। यह समस्त प्राणियोंका हित चाहता, उपकार करता, आवश्यकताके अनुसार ही बोलता और किसीके गुणोंमें दोष नहीं ढूँढ़ता था ।।५७।। एक दिन यह ब्राह्मण अपने पिताके आदेशानुसार वनमें गया और वहाँसे फल-फूल, समिधा तथा कुश लेकर घरके लिये लौटा ।।५८।। लौटते समय इसने देखा कि एक भ्रष्ट शूद्र, जो बहुत कामी और निर्लज्ज है, शराब पीकर किसी वेश्याके साथ विहार कर रहा है। वेश्या भी शराब पीकर मतवाली हो रही है। नशेके कारण उसकी आँखें नाच रही हैं, वह अर्द्धनग्न अवस्थामें हो रही है। वह शूद्र उस वेश्याके साथ कभी गाता, कभी हँसता और कभी तरह-तरहकी चेष्टाएँ करके उसे प्रसन्न करता है ।।५९-६०।। निष्पाप पुरुषो ! शूद्रकी भुजाओंमें अङ्गरागादि कामोद्दीपक वस्तुएँ लगी हुई थीं और वह उनसे उस कुलटाका आलिङ्गन कर रहा था। अजामिल उन्हें इस अवस्थामें

देखकर सहसा मोहित और कामके वश हो गया ।।६१।। यद्यपि अजामिलने अपने धैर्य और ज्ञानके अनुसार अपने काम-वेगसे विचलित मनको रोकनेकी बहुत-बहुत चेष्टाएँ कीं, परन्तु पूरी शक्ति लगा देनेपर भी वह अपने मनको रोकनेमें असमर्थ रहा ।।६२।। उस वेश्याको निमित्त बनाकर काम-पिशाचने अजामिलके मनको ग्रस लिया। इसकी सदाचार और शास्त्र- सम्बन्धी चेतना नष्ट हो गयी। अब यह मन-ही-मन उसी वेश्याका चिन्तन करने लगा और अपने धर्मसे विमुख हो गया ।।६३।। अजामिल सुन्दर-सुन्दर वस्त्र-आभूषण आदि वस्तुएँ, जिनसे वह प्रसन्न होती, ले आता। यहाँतक कि इसने अपने पिताकी सारी सम्पत्ति देकर भी उसी कुलटाको रिझाया। यह ब्राह्मण उसी प्रकारकी चेष्टा करता, जिससे वह वेश्या प्रसन्न हो ।।६४।। उस स्वच्छन्दचारिणी कुलटाकी तिरछी चितवनने इसके मनको ऐसा लुभा लिया कि इसने अपनी कुलीन नवयुवती और विवाहिता पत्नीतकका परित्याग कर दिया। इसके पापकी भी भला कोई सीमा है ।।६५।। यह कुबुद्धि न्यायसे, अन्यायसे जैसे भी जहाँ कहीं भी धन मिलता, वहींसे उठा लाता। उस वेश्याके बड़े कुटुम्बका पालन करनेमें ही यह व्यस्त रहता ।।६६।। इस पापीने शास्त्राज्ञाका उल्लङ्घन करके स्वच्छन्द आचरण किया है। यह सत्पुरुषोंके द्वारा निन्दित है। इसने बहुत दिनोंतक वेश्याके मल-समान अपवित्र अन्नसे अपना जीवन व्यतीत किया है, इसका सारा जीवन ही पापमय है ।।६७।। इसने अबतक अपने पापोंका कोई प्रायश्चित्त भी नहीं किया है। इसलिये अब हम इस पापीको दण्डपाणि भगवान् यमराजके पास ले जायँगे। वहाँ यह अपने पापोंका दण्ड भोगकर शुद्ध हो जायगा ।।६८।।

॥ श्रीहरिः ॥

दूसरा अध्याय

विष्णुदूतोंद्वारा भागवतधर्म-निरूपण और अजामिलका परमधामगमन

श्रीशुकदेवजी कहते हैं—परीक्षित् ! भगवान्‌के नीतिनिपुण एवं धर्मका मर्म जाननेवाले पार्षदोंने यमदूतोंका यह अभिभाषण सुनकर उनसे इस प्रकार कहा—॥१॥

भगवान्‌के पार्षदोंने कहा—यमदूतो ! यह बड़े आश्चर्य और खेदकी बात है कि धर्मज्ञोंकी सभामें अधर्म प्रवेश कर रहा है, क्योंकि वहाँ निरपराध और अदण्डनीय व्यक्तियोंको व्यर्थ ही दण्ड दिया जाता है ॥२॥ जो प्रजाके रक्षक हैं, शासक हैं, समदर्शी और परोपकारी हैं—यदि वे ही प्रजाके प्रति विषमताका व्यवहार करने लगें तो फिर प्रजा किसकी शरण लेगी? ॥३॥ सत्पुरुष जैसा आचरण करते हैं, साधारण लोग भी वैसा ही करते हैं। वे अपने आचरणके द्वारा जिस कर्मको धर्मानुकूल प्रमाणित कर देते हैं, लोग उसीका अनुकरण करने लगते हैं ॥४॥ साधारण लोग पशुओंके समान धर्म और अधर्मका स्वरूप न जानकर किसी सत्पुरुषपर विश्वास कर लेते हैं, उसकी गोदमें सिर रखकर निर्भय और निश्चिन्त सो जाते हैं ॥५॥ वही दयालु सत्पुरुष, जो प्राणियोंका अत्यन्त विश्वासपात्र है और जिसे मित्रभावसे अपना हितैषी समझकर उन्होंने आत्मसमर्पण कर दिया है, उन अज्ञानी जीवोंके साथ कैसे विश्वासघात कर सकता है? ॥६॥

यमदूतो ! इसने कोटि-कोटि जन्मोंकी पाप-राशिका पूरा-पूरा प्रायश्चित्त कर लिया है। क्योंकि इसने विवश होकर ही सही, भगवान्‌के परम कल्याणमय (मोक्षप्रद) नामका उच्चारण तो किया है ॥७॥ जिस समय इसने **'नारायण'** इन चार अक्षरोंका उच्चारण किया, उसी समय केवल उतनेसे ही इस पापीके समस्त पापोंका प्रायश्चित्त हो गया ॥८॥

चोर, शराबी, मित्रद्रोही, ब्रह्मघाती, गुरुपत्नीगामी, ऐसे लोगोंका संसर्गी, स्त्री, राजा, पिता और गायको मारनेवाला, चाहे जैसा और चाहे जितना बड़ा पापी हो, सभी के लिये यही—इतना ही सबसे बड़ा प्रायश्चित्त है कि भगवान्‌के नामोंका उच्चारण[1] किया जाय; क्योंकि भगवन्नामोंके उच्चारणसे मनुष्यकी बुद्धि भगवान्‌के गुण, लीला और स्वरूपमें रम जाती है और स्वयं भगवान्‌की उसके प्रति आत्मीयबुद्धि हो जाती है ॥९-१०॥ बड़े-बड़े ब्रह्मवादी ऋषियोंने पापोंके बहुत-से प्रायश्चित्त—कृच्छ्रचान्द्रायण आदि व्रत बतलाये हैं; परन्तु उन प्रायश्चित्तोंसे पापीकी वैसी जड़से शुद्धि नहीं होती, जैसी भगवान्‌के नामोंका, उनसे गुम्फित पदोंका[2] उच्चारण करनेसे होती है। क्योंकि वे नाम पवित्रकीर्ति भगवान्‌के गुणोंका ज्ञान करानेवाले हैं ॥११॥ यदि प्रायश्चित्त करनेके बाद भी मन फिरसे कुमार्गमें—पापकी ओर दौड़े, तो वह चरम सीमाका—पूरा-पूरा प्रायश्चित्त नहीं है। इसलिये जो लोग ऐसा प्रायश्चित्त करना चाहें कि जिससे पापकर्मों और वासनाओंकी जड़ ही उखड़ जाय, उन्हें भगवान्‌के गुणोंका ही गान करना चाहिये; क्योंकि उससे चित्त सर्वथा शुद्ध हो

१. इस प्रसङ्ग में 'नाम-व्याहरण' का अर्थ नामोच्चारण ही है। भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं—

'मेरे दूर होनेके कारण द्रौपदीने जोर-जोरसे, **'गोविन्द-गोविन्द'** इस प्रकार करुण-क्रन्दन करके मुझे पुकारा। वह ऋण मेरे ऊपर बढ़ गया है और मेरे हृदयसे उसका भार क्षणभरके लिये भी नहीं हटता।

२. **'नामपदैः'** कहनेका यह अभिप्राय है कि भगवान्‌का केवल नाम **'राम-राम', 'कृष्ण-कृष्ण', 'हरि-हरि', 'नारायण-नारायण'** अन्तःकरणकी शुद्धिके लिये—पापोंकी निवृत्तिके लिये पर्याप्त है। 'नमः नमामि' इत्यादि क्रिया जोड़नेकी भी कोई आवश्यकता नहीं है। नामके साथ बहुवचनका प्रयोग—भगवान्‌के नाम बहुत-से हैं, किसीका भी सङ्कीर्तन कर ले, इस अभिप्रायसे है। एक व्यक्ति सब नामोंका उच्चारण करे, इस अभिप्रायसे नहीं। क्योंकि भगवान्‌के नाम अनन्त हैं; सब नामोंका उच्चारण सम्भव ही नहीं है। तात्पर्य यह है कि भगवान्‌के एक नामका उच्चारण करनेमात्रसे सब पापोंकी निवृत्ति हो जाती है। पूर्ण विश्वास न होने तथा नामोच्चारणके पश्चात् भी पाप करनेके कारण ही उसका अनुभव नहीं होता।

जाता है ।।१२।।

इसलिये यमदूतो ! तुमलोग अजामिलको मत ले जाओ। इसने सारे पापोंका प्रायश्चित्त कर लिया है, क्योंकि इसने मरते समय[1] भगवान्‌के नामका उच्चारण किया है ।।१३।।

बड़े-बड़े महात्मा पुरुष यह बात जानते हैं कि सङ्केतमें (किसी दूसरे अभिप्रायसे), परिहासमें, तान अलापनेमें अथवा किसीकी अवहेलना करनेमें भी यदि कोई भगवान्‌के नामोंका उच्चारण करता है तो उसके सारे पाप नष्ट हो जाते हैं ।।१४।। जो मनुष्य गिरते समय, पैर फिसलते समय, अङ्ग-भङ्ग होते समय और साँपके डँसते, आगमें जलते तथा चोट लगते समय भी विवशतासे **'हरि-हरि'** कहकर भगवान्‌के नामका उच्चारण कर लेता है, वह यमयातनाका पात्र नहीं रह जाता ।।१५।। महर्षियोंने जानबूझकर बड़े पापोंके लिये बड़े और छोटे पापोंके लिये छोटे प्रायश्चित्त बतलाये हैं ।।१६।। इसमें सन्देह नहीं कि उन तपस्या, दान, जप आदि प्रायश्चित्तोंके द्वारा वे पाप नष्ट हो जाते हैं। परन्तु उन पापोंसे मलिन हुआ उसका हृदय शुद्ध नहीं होता। भगवान्‌के चरणोंकी सेवासे वह भी शुद्ध हो जाता है ।।१७।। यमदूतो! जैसे जान या अनजानमें ईंधनसे अग्निका स्पर्श हो जाय तो वह भस्म हो ही जाता है, वैसे ही जान-बूझकर या अनजानमें भगवान्‌के नामोंका सङ्कीर्तन करनेसे मनुष्यके सारे पाप भस्म हो जाते हैं ।।१८।। जैसे कोई परम शक्तिशाली अमृतको उसका गुण न जानकर अनजानमें पी ले तो भी वह अवश्य ही पीनेवालेको अमर बना देता है, वैसे ही

१. पापकी निवृत्तिके लिये भगवन्नामका एक अंश ही पर्याप्त है, जैसे **'राम'** का **'रा'**। इसने तो सम्पूर्ण नामका उच्चारण कर लिया। मरते समयका अर्थ ठीक मरनेका क्षण ही नहीं है, क्योंकि मरनेके क्षण जैसे कृच्छ्र-चान्द्रायण (व्रत) आदि करनेके लिये विधि नहीं हो सकती, वैसे नामोच्चारणकी भी नहीं है। इसलिये 'म्रियमाण' शब्दका यह अभिप्राय है कि अब आगे इससे कोई पाप होनेकी सम्भावना नहीं है।

अनजानमें उच्चारण करनेपर भी भगवान्‌का नाम[1] अपना फल देकर ही रहता है (वस्तुशक्ति श्रद्धाकी अपेक्षा नहीं करती) ।।१९।।

श्रीशुकदेवजी कहते हैं—राजन् ! इस प्रकार भगवान्‌के पार्षदोंने भागवतधर्मका पूरा-पूरा निर्णय सुना दिया और अजामिलको यमदूतोंके पाशसे छुड़ाकर मृत्युके मुखसे बचा लिया ।।२०।। प्रिय परीक्षित् ! पार्षदोंकी यह बात सुनकर यमदूत यमराजके पास गये और उन्हें यह सारा वृत्तान्त ज्यों-का-त्यों सुना दिया ।।२१।।

अजामिल यमदूतोंके फंदेसे छूटकर निर्भय और स्वस्थ हो गया। उसने भगवान्‌के पार्षदोंके दर्शनजनित आनन्दमें मग्न होकर उन्हें सिर झुकाकर प्रणाम किया ।।२२।। निष्पाप परीक्षित्! भगवान्‌के पार्षदोंने देखा कि अजामिल कुछ कहना चाहता है, तब वे सहसा

१. वस्तु की स्वाभाविक शक्ति इस बातकी प्रतीक्षा नहीं करती कि यह मुझपर श्रद्धा रखता है कि नहीं, जैसे अग्नि या अमृत।

'दुष्टचित्त मनुष्यके द्वारा स्मरण किये जानेपर भी भगवान् श्रीहरि पापोंको हर लेते हैं। अनजानमें या अनिच्छासे स्पर्श करनेपर भी अग्नि जलाती ही है।'

भगवान्‌के नामका उच्चारण केवल पापको ही निवृत्त करता है, इसका और कोई फल नहीं है, यह धारणा भ्रमपूर्ण है; क्योंकि शास्त्रमें कहा है—

'जिसने **'हरि'**—ये दो अक्षर एक बार भी उच्चारण कर लिये, उसने मोक्ष प्राप्त करनेके लिये परिकर बाँध लिया, फेंट कस ली।' इस वचनसे यह सिद्ध होता है कि भगवन्नाम मोक्षका भी साधन है। मोक्षके साथ-साथ यह धर्म, अर्थ और कामका भी साधन है; क्योंकि ऐसे अनेक प्रमाण मिलते हैं, जिनमें त्रिवर्ग-सिद्धिका भी नाम ही कारण बतलाया गया है—

'जिसकी जिह्वाके नोकपर **'हरि'** ये दो अक्षर बसते हैं, उसे गङ्गा, गया, सेतुबन्ध, काशी और पुष्करकी कोई आवश्यकता नहीं, अर्थात् उनकी यात्रा, स्नान आदिका फल भगवन्नामसे ही मिल जाता है। जिसने **'हरि'** इन दो अक्षरोंका उच्चारण कर लिया, उसने ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेदका अध्ययन कर लिया। जिसने **'हरि'** ये दो अक्षर उच्चारण किये, उसने दक्षिणाके सहित अश्वमेध आदि यज्ञोंके द्वारा यजन कर लिया। **'हरि'** ये दो अक्षर मृत्युके पश्चात् परलोकके मार्गमें प्रयाण करनेवाले प्राणोंके लिये पाथेय (मार्गके लिये भोजनकी सामग्री) हैं, संसाररूप रोगोंके लिये सिद्ध औषध हैं और जीवनके दुःख और क्लेशोंके लिये परित्राण हैं।'

उसके सामने ही वहीं अन्तर्धान हो गये ॥२३॥ इस अवसरपर अजामिलने भगवान्‌के पार्षदोंसे विशुद्ध भागवत- धर्म और यमदूतोंके मुखसे वेदोक्त सगुण (प्रवृत्तिविषयक) धर्मका श्रवण किया था ॥२४॥ सर्वपापहारी भगवान्‌की महिमा सुननेसे अजामिलके हृदयमें शीघ्र ही भक्तिका उदय हो गया। अब उसे अपने पापोंको याद करके बड़ा पश्चात्ताप होने लगा ॥२५॥ (अजामिल मन-ही-मन सोचने लगा-) 'अरे, मैं कैसा इन्द्रियोंका दास हूँ ! मैंने एक दासीके गर्भसे पुत्र उत्पन्न करके अपना ब्राह्मणत्व नष्ट कर दिया। यह बड़े दुःखकी बात है ॥२६॥ धिक्कार है ! मुझे बार-बार धिक्कार है ! मैं संतोंके द्वारा निन्दित हूँ, पापात्मा हूँ ! मैंने अपने कुलमें कलङ्कका टीका लगा दिया !

इन वचनोंसे यह सिद्ध होता है कि भगवन्नाम अर्थ, धर्म, काम-इन तीन वर्गोंका भी साधक है। यह बात **'हरि'**, **'नारायण'** आदि कुछ विशेष नामोंके सम्बन्ध में ही नहीं है, प्रत्युत सभी नामोंके सम्बन्धमें है; क्योंकि स्थान-स्थानपर यह बात सामान्यरूपसे कही गयी है कि अनन्तके नाम, विष्णुके नाम, हरिके नाम इत्यादि। भगवान्‌के सभी नामोंमें एक ही शक्ति है।

नाम-सङ्कीर्तन आदिमें वर्ण-आश्रमका भी नियम नहीं है-

'ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, स्त्री, शूद्र, अन्त्यज आदि जहाँ-तहाँ विष्णु भगवान्‌के नामका अनुकीर्तन करते रहते हैं, वे भी समस्त पापोंसे मुक्त होकर सनातन परमात्माको प्राप्त होते हैं।'

नाम-सङ्कीर्तनमें देश-काल आदिके नियम भी नहीं हैं-

'देश-कालका नियम नहीं है, शौच-अशौच आदिका निर्णय करनेकी भी आवश्यकता नहीं है। केवल **'राम-राम'** यह संकीर्तन करनेमात्रसे जीव मुक्त हो जाता है। × × × भगवान्‌के नामका संकीर्तन करनेमें न देशका नियम है और न तो कालका। इसमें कोई सन्देह नहीं। राजन् ! यज्ञ, दान, तीर्थस्नान अथवा विधिपूर्वक जपके लिये शुद्ध कालकी अपेक्षा है, परन्तु भगवन्नामके इस संकीर्तनमें काल-शुद्धिकी कोई आवश्यकता नहीं है। चलते-फिरते, खड़े रहते-सोते, खाते-पीते और जप करते, हुए भी **'कृष्ण-कृष्ण'** ऐसा संकीर्तन करके मनुष्य पापके केंचुलसे छूट जाता है। ×× अपवित्र हो या पवित्र-सभी अवस्थाओंमें (चाहे किसी भी अवस्थामें) जो कमलनयन भगवान्‌का स्मरण करता है, वह बाहर-भीतर पवित्र हो जाता है।'

हाय-हाय, मैंने अपनी सती एवं अबोध पत्नीका परित्याग कर दिया और शराब पीनेवाली कुलटाका संसर्ग किया ॥२७॥ मैं कितना नीच हूँ ! मेरे माँ-बाप बूढ़े और तपस्वी थे। वे सर्वथा असहाय थे, उनकी सेवा-शुश्रूषा करनेवाला और कोई नहीं था। मैंने उनका भी परित्याग कर दिया। ओह ! मैं कितना कृतघ्न हूँ ॥२८॥ मैं अब अवश्य ही अत्यन्त भयावने नरकमें गिरूँगा, जिसमें गिरकर धर्मघाती पापात्मा कामी पुरुष अनेकों प्रकारकी यमयातना भोगते हैं ॥२९॥

'मैंने अभी जो अद्‌भुत दृश्य देखा, क्या वह स्वप्न है? अथवा जाग्रत् अवस्थाका ही प्रत्यक्ष अनुभव है? अभी-अभी जो हाथोंमें फंदा लेकर मुझे खींच रहे थे, वे कहाँ चले गये? ॥३०॥ अभी-अभी वे मुझे अपने फंदोंमें फँसाकर पृथ्वीके नीचे ले जा रहे थे, परन्तु चार अत्यन्त

'जिसकी जिह्वापर **'कृष्ण-कृष्ण-कृष्ण'** यह मङ्गलमय नाम नृत्य करता रहता है, उसकी कोटि-कोटि महापातकराशि तत्काल भस्म हो जाती है। सारे यज्ञ, लाखों व्रत, सर्वतीर्थ-स्नान, तप, अनेकों उपवास, हजारों वेद-पाठ, पृथ्वीकी सैकड़ों प्रदक्षिणा कृष्णनाम-जपके सोलहवें हिस्सेके बराबर भी नहीं हो सकतीं।'

भगवन्नामके कीर्तनमें ही यह फल हो, सो बात नहीं। उनके श्रवण और स्मरणमें भी वही फल है। दशम स्कन्धके अन्तमें कहेंगे 'जिनके नामका स्मरण और उच्चारण अमङ्गलघ्न है।' शिवगीता और पद्मपुराणमें कहा है-

'भगवान् कहते हैं कि आश्चर्य, भय, शोक, क्षत (चोट लगने) आदिके अवसरपर जो मेरा नाम बोल उठता है, या किसी व्याज (बहाने)-से स्मरण करता है, वह परमगतिको प्राप्त होता है। मृत्यु या जीवन-चाहे जब कभी भगवान्‌का नाम स्मरण करनेवाले मनुष्योंकी पाप-राशि तत्काल नष्ट हो जाती है। उन चिदात्मा प्रभुको नमस्कार है।'

'इतिहासोत्तम' में कहा गया है-

'महामुनि ब्राह्मणदेव ! भक्तराजके मुखसे नरकमें रहनेवाले प्राणियोंने श्रीहरिके नामका श्रवण किया और वे तत्काल नरकसे मुक्त हो गये।'

यज्ञ-यागादिरूप धर्म अपने अनुष्ठानके लिये जिस पवित्र देश, काल, पात्र, शक्ति, सामग्री, श्रद्धा, मन्त्र, दक्षिणा आदिकी अपेक्षा रखता है, इस कलियुगमें उसका सम्पन्न होना अत्यन्त कठिन है। भगवन्नाम-संकीर्तनके द्वारा उसका फल अनायास ही प्राप्त किया जा सकता है। भगवान् शङ्कर पार्वतीके प्रति कहते हैं-

सुन्दर सिद्धोंने आकर मुझे छुड़ा लिया ! वे अब कहाँ चले गये ।।३१।। यद्यपि मैं इस जन्मका महापापी हूँ, फिर भी मैंने पूर्वजन्मोंमें अवश्य ही शुभकर्म किये होंगे; तभी तो मुझे इन श्रेष्ठ देवताओंके दर्शन हुए। उनकी स्मृतिसे मेरा हृदय अब भी आनन्दसे भर रहा है ।।३२।। मैं कुलटागामी और अत्यन्त अपवित्र हूँ। यदि पूर्वजन्ममें मैंने पुण्य न किये होते, तो मरनेके समय मेरी जीभ भगवान्‌के मनोमोहक नामका उच्चारण कैसे कर पाती? ।।३३।। कहाँ तो मैं महाकपटी, पापी, निर्लज्ज और ब्रह्मतेजको नष्ट करनेवाला तथा कहाँ भगवान्‌का वह परम मङ्गलमय **'नारायण'** नाम ! (सचमुच मैं तो कृतार्थ हो गया) ।।३४।। अब मैं अपने मन, इन्द्रिय और प्राणोंको वशमें करके ऐसा प्रयत्न करूँगा कि फिर अपनेको घोर अन्धकारमय नरकमें न डालूँ।।३५।। अज्ञानवश मैंने अपनेको शरीर समझकर उसके लिये बड़ी-बड़ी कामनाएँ कीं और उनकी पूर्तिके लिये अनेकों कर्म किये। उन्हींका फल है यह बन्धन!

'सम्पूर्ण जगत्‌का स्वामी होनेपर भी मैं विष्णुभगवान्‌के नामका ही जप करता हूँ। मैं तुमसे सत्य-सत्य कहता हूँ, भगवान्‌को छोड़कर जीवोंके लिये अन्य कर्मकाण्ड आदि कोई भी गति नहीं है।' श्रीमद्भागवतमें ही यह बात आगे आनेवाली है कि सत्ययुगमें ध्यानसे, त्रेतामें यज्ञसे और द्वापरमें अर्चा-पूजासे जो फल मिलता है, कलियुगमें वह केवल भगवन्नामसे मिलता है। और भी है कि कलियुग दोषोंका निधि है, परन्तु इसमें एक महान् गुण यह है कि श्रीकृष्ण- संकीर्तनमात्रसे ही जीव बन्धनमुक्त होकर परमात्माको प्राप्त कर लेता है।

इस प्रकार एक बारके नामोच्चारणकी भी अनन्त महिमा शास्त्रोंमें कही गयी है। यहाँ मूल प्रसङ्गमें ही—'एकदापि' कहा गया है; 'सकृदुच्चरितं' का उल्लेख किया जा चुका है। बार-बार जो नामोच्चारणका विधान है, वह आगे और पाप न उत्पन्न हो जायँ, इसके लिये है। ऐसे वचन भी मिलते हैं कि भगवान्‌के नामका उच्चारण करनेसे भूत, वर्तमान और भविष्यके सारे ही पाप भस्म हो जाते हैं।

फिर भी भगवत्प्रेमी जीवको पापोंके नाशपर अधिक दृष्टि नहीं रखनी चाहिये; उसे तो भक्ति-भावकी दृढ़ताके लिये, भगवान्‌के चरणोंमें अधिकाधिक प्रेम बढ़ता जाय, इस दृष्टिसे अहर्निश नित्य-निरन्तर भगवान्‌के मधुर-मधुर नाम जपते जाना चाहिये। जितनी अधिक निष्कामता होगी, उतनी-ही-उतनी नामकी पूर्णता प्रकट होती जायगी, अनुभवमें आती जायगी।

अब मैं इसे काटकर समस्त प्राणियोंका हित करूँगा, वासनाओंको शान्त कर दूँगा, सबसे मित्रताका व्यवहार करूँगा, दुखियोंपर दया करूँगा और पूरे संयमके साथ रहूँगा ।।३६।। भगवान्‌की मायाने स्त्रीका रूप धारण करके मुझ अधमको फाँस लिया और क्रीड़ामृगकी भाँति मुझे बहुत नाच नचाया। अब मैं अपने-आपको उस मायासे मुक्त करूँगा ।।३७।। मैंने सत्य वस्तु परमात्माको पहचान लिया है; अतः अब मैं शरीर आदिमें 'मैं' तथा 'मेरे' का भाव छोड़कर भगवन्नामके कीर्तन आदिसे अपने मनको शुद्ध करूँगा और उसे भगवान्‌में लगाऊँगा ।।३८।।

श्रीशुकदेवजी कहते हैं—परीक्षित् ! उन भगवान्‌के पार्षद महात्माओंका केवल थोड़ी ही देरके लिये सत्सङ्ग हुआ था। इतनेसे ही अजामिलके चित्तमें संसारके प्रति तीव्र वैराग्य हो गया। वे सबके सम्बन्ध और मोहको छोड़कर हरिद्वार चले गये ।।३९।। उस देवस्थानमें जाकर वे भगवान्‌के मन्दिरमें आसनसे बैठ गये और उन्होंने योगमार्गका आश्रय लेकर अपनी सारी इन्द्रियोंको विषयोंसे हटाकर मनमें लीन कर लिया और मनको बुद्धिमें मिला दिया ।।४०।। इसके बाद आत्मचिन्तनके द्वारा उन्होंने बुद्धिको विषयोंसे पृथक् कर लिया तथा भगवान्‌के धाम

अनेक तार्किकोंके मनमें यह कल्पना उठती है कि नामकी महिमा वास्तविक नहीं है, अर्थवादमात्र है। उनके मनमें यह धारणा तो हो ही जाती है कि शराबकी एक बूंद भी पतित बनानेके लिये पर्याप्त है, परंतु यह विश्वास नहीं होता कि भगवान्‌का एक नाम भी परम कल्याणकारी है। शास्त्रोंमें भगवन्नाम-महिमाको अर्थवाद समझना पाप बताया है।

'जो नराधम पुराणोंमें अर्थवादकी कल्पना करते हैं उनके द्वारा उपार्जित पुण्य वैसे ही हो जाते हैं।'

× × ×

'जो मनुष्य मेरे नाम-कीर्तनके विविध फल सुनकर उसपर श्रद्धा नहीं करता और उसे अर्थवाद मानता है, उसको संसारके विविध घोर तापोंसे पीड़ित होना पड़ता है और उसे मैं अनेक दुःखोंमें डाल देता हूँ।' × × × × 'जो मनुष्य भगवान्‌के नाममें अर्थवादकी सम्भावना करता है, वह मनुष्योंमें अत्यन्त पापी है और उसे नरकमें गिरना पड़ता है।'

अनुभवस्वरूप परब्रह्ममें जोड़ दिया ॥४१॥ इस प्रकार जब अजामिलकी बुद्धि त्रिगुणमयी प्रकृतिसे ऊपर उठकर भगवान्के स्वरूपमें स्थित हो गयी, तब उन्होंने देखा कि उनके सामने वे ही चारों पार्षद, जिन्हें उन्होंने पहले देखा था, खड़े हैं। अजामिलने सिर झुकाकर उन्हें नमस्कार किया ॥४२॥ उनका दर्शन पानेके बाद उन्होंने उस तीर्थस्थानमें गङ्गाके तटपर अपना शरीर त्याग दिया और तत्काल भगवान्के पार्षदोंका स्वरूप प्राप्त कर लिया ॥४३॥ अजामिल भगवान्के पार्षदोंके साथ स्वर्णमय विमानपर आरूढ़ होकर आकाशमार्गसे भगवान् लक्ष्मीपतिके निवासस्थान वैकुण्ठको चले गये ॥४४॥

परीक्षित् ! अजामिलने दासीका सहवास करके सारा धर्म-कर्म चौपट कर दिया था। वे अपने निन्दित कर्मके कारण पतित हो गये थे। नियमोंसे च्युत हो जानेके कारण उन्हें नरकमें गिराया जा रहा था। परन्तु भगवान्के एक नामका उच्चारण करनेमात्रसे वे उससे तत्काल मुक्त हो गये ॥४५॥ जो लोग इस संसारबन्धनसे मुक्त होना चाहते हैं, उनके लिये अपने चरणोंके स्पर्शसे तीर्थोंको भी तीर्थ बनानेवाले भगवान्के नामसे बढ़कर और कोई साधन नहीं है; क्योंकि नामका आश्रय लेनेसे मनुष्यका मन फिर कर्मके पचड़ोंमें नहीं पड़ता। भगवन्नामके अतिरिक्त और किसी प्रायश्चित्तका आश्रय लेनेपर मन रजोगुण और तमोगुणसे ग्रस्त ही रहता है तथा पापोंका पूरा-पूरा नाश भी नहीं होता ॥४६॥

परीक्षित् ! यह इतिहास अत्यन्त गोपनीय और समस्त पापोंका नाश करनेवाला है। जो पुरुष श्रद्धा और भक्तिके साथ इसका श्रवण-कीर्तन करता है, वह नरकमें कभी नहीं जाता। यमराजके दूत तो आँख उठाकर उसकी ओर देखतक नहीं सकते। उस पुरुषका जीवन चाहे पापमय ही क्यों न रहा हो, वैकुण्ठलोकमें उसकी पूजा होती है ॥४७-४८॥ परीक्षित् ! देखो-अजामिल जैसे पापीने मृत्युके समय पुत्रके बहाने भगवान्के नामका उच्चारण किया ! उसे भी वैकुण्ठकी प्राप्ति हो गयी ! फिर जो लोग श्रद्धाके साथ भगवन्नामका उच्चारण करते हैं, उनकी तो बात ही क्या है ॥४९॥

॥ श्रीहरिः ॥

तीसरा अध्याय

यम और यमदूतोंका संवाद

राजा परीक्षितने पूछा–भगवन् ! देवाधिदेव धर्मराजके वशमें सारे जीव हैं और भगवान्के पार्षदोंने उन्हींकी आज्ञा भंग कर दी तथा उनके दूतोंको अपमानित कर दिया। जब उनके दूतोंने यमपुरीमें जाकर उनसे अजामिलका वृत्तान्त कह सुनाया, तब सब कुछ सुनकर उन्होंने अपने दूतोंसे क्या कहा? ॥१॥ ऋषिवर! मैंने पहले यह बात कभी नहीं सुनी कि किसीने किसी भी कारणसे धर्मराजके शासनका उल्लङ्घन किया हो। भगवन् ! इस विषयमें लोग बहुत सन्देह करेंगे और उसका निवारण आपके अतिरिक्त दूसरा कोई नहीं कर सकता, ऐसा मेरा निश्चय है ॥२॥

श्रीशुकदेवजीने कहा–परीक्षित् ! जब भगवान्के पार्षदोंने यमदूतोंका प्रयत्न विफल कर दिया, तब उन लोगोंने संयमनीपुरीके स्वामी एवं अपने शासक यमराजके पास जाकर निवेदन किया ॥३॥

यमदूतोंने कहा– प्रभो! संसारके जीव तीन प्रकारके कर्म करते हैं–पाप, पुण्य अथवा दोनोंसे मिश्रित। इन जीवोंको उन कर्मोंका फल देनेवाले शासक संसारमें कितने हैं? ॥४॥ यदि संसारमें दण्ड देनेवाले बहुत-से शासक हों, तो किसे सुख मिले और किसे दुःख–इसकी व्यवस्था एक-सी न हो सकेगी ॥५॥ संसारमें कर्म करनेवालोंके अनेक होनेके कारण यदि उनके शासक भी अनेक हों, तो उन शासकोंका शासकपना नाममात्रका ही होगा, जैसे एक सम्राट्के अधीन बहुत-से नाममात्रके सामन्त होते हैं ॥६॥ इसलिये हम तो ऐसा समझते हैं कि अकेले आप ही समस्त प्राणियों और उनके स्वामियोंके भी अधीश्वर हैं। आप ही मनुष्योंके पाप और पुण्यके निर्णायक,

दण्डदाता और शासक हैं ।।७।। प्रभो ! अबतक संसारमें कहीं भी आपके द्वारा नियत किये हुए दण्डकी अवहेलना नहीं हुई थी; किन्तु इस समय चार अद्भुत सिद्धोंने आपकी आज्ञाका उल्लङ्घन कर दिया है ।।८।। प्रभो ! आपकी आज्ञासे हमलोग एक पापीको यातनागृहकी ओर ले जा रहे थे, परन्तु उन्होंने बलपूर्वक आपके फंदे काटकर उसे छुड़ा दिया ।।९।। हम आपसे उनका रहस्य जानना चाहते हैं। यदि आप हमें सुननेका अधिकारी समझें तो कहें। प्रभो! बड़े ही आश्चर्यकी बात हुई कि इधर तो अजामिलके मुँहसे **'नारायण !'** यह शब्द निकला और उधर वे 'डरो मत, डरो मत !' कहते हुए झटपट वहाँ आ पहुँचे ।।१०।।

श्रीशुकदेवजी कहते हैं—जब दूतोंने इस प्रकार प्रश्न किया, तब देवशिरोमणि प्रजाके शासक भगवान् यमराजने प्रसन्न होकर श्रीहरिके चरणकमलोंका स्मरण करते हुए उनसे कहा ।।११।।

यमराजने कहा—दूतो ! मेरे अतिरिक्त एक और ही चराचर जगत्के स्वामी हैं। उन्हींमें यह सम्पूर्ण जगत् सूतमें वस्त्रके समान ओतप्रोत है। उन्हींके अंश ब्रह्मा, विष्णु और शङ्कर इस जगत्की उत्पत्ति, स्थिति तथा प्रलय करते हैं। उन्हींने इस सारे जगत्को नथे हुए बैलके समान अपने अधीन कर रखा है ।।१२।। मेरे प्यारे दूतो ! जैसे किसान अपने बैलोंको पहले छोटी-छोटी रस्सियोंमें बाँधकर फिर उन रस्सियोंको एक बड़ी आड़ी रस्सीमें बाँध देते हैं, वैसे ही जगदीश्वर भगवान्ने भी ब्राह्मणादि वर्ण और ब्रह्मचर्य आदि आश्रमरूप छोटी-छोटी नामकी रस्सियोंमें बाँधकर फिर सब नामोंको वेदवाणी रूप बड़ी रस्सीमें बाँध रखा है। इस प्रकार सारे जीव नाम एवं कर्मरूप बन्धनमें बँधे हुए भयभीत होकर उन्हें ही अपना सर्वस्व भेंट कर रहे हैं ।।१३।। दूतो ! मैं, इन्द्र, निर्ऋति, वरुण, चन्द्रमा, अग्नि, शङ्कर, वायु, सूर्य, ब्रह्मा, बारहों आदित्य, विश्वेदेवता, आठों वसु, साध्य, उनचास मरुत्, सिद्ध, ग्यारहों रुद्र, रजोगुण एवं तमोगुणसे रहित भृगु आदि प्रजापति और बड़े-बड़े देवता—सब-के-सब सत्त्वप्रधान होनेपर भी उनकी मायाके अधीन हैं तथा भगवान् कब क्या किस रूपमें करना चाहते हैं—इस बात को नहीं जानते। तब दूसरोंकी तो बात ही क्या है ।।१४-१५।। दूतो ! जिस प्रकार घट, पट आदि रूपवान् पदार्थ अपने प्रकाशक नेत्रको नहीं देख सकते—वैसे ही अन्तःकरणमें अपने साक्षीरूपसे स्थित परमात्माको कोई भी प्राणी इन्द्रिय, मन, प्राण, हृदय या वाणी आदि किसी भी साधनके द्वारा नहीं जान सकता ।।१६।। वे प्रभु सबके स्वामी और स्वयं परम स्वतन्त्र हैं। उन्हीं मायापति पुरुषोत्तमके दूत उन्हींके समान परम मनोहर रूप, गुण और स्वभावसे सम्पन्न होकर इस लोकमें प्रायः विचरण किया करते हैं ।।१७।। विष्णुभगवान्के सुरपूजित एवं परम अलौकिक पार्षदोंका दर्शन बड़ा दुर्लभ है। वे भगवान्के भक्तजनोंको उनके शत्रुओंसे, मुझसे और अग्नि आदि सब विपत्तियोंसे सर्वथा सुरक्षित रखते हैं ।।१८।।

स्वयं भगवान्ने ही धर्मकी मर्यादाका निर्माण किया है। उसे न तो ऋषि जानते हैं और न देवता या सिद्धगण ही। ऐसी स्थितिमें मनुष्य, विद्याधर, चारण और असुर आदि तो जान ही कैसे सकते हैं ।।१९।। भगवान्के द्वारा निर्मित भागवतधर्म परम शुद्ध और अत्यन्त गोपनीय है। उसे जानना बहुत ही कठिन है। जो उसे जान लेता है, वह भगवत्स्वरूपको प्राप्त हो जाता है। दूतो ! भागवतधर्मका रहस्य हम बारह व्यक्ति ही जानते हैं— ब्रह्माजी, देवर्षि नारद, भगवान् शङ्कर, सनत्कुमार, कपिलदेव, स्वायम्भुव मनु, प्रह्लाद, जनक, भीष्मपितामह, बलि, शुकदेवजी और मैं (धर्मराज) ।।२०-२१।। इस जगत्में जीवोंके लिये बस, यही सबसे बड़ा कर्तव्य—परम धर्म—है कि वे नाम-कीर्तन आदि उपायोंसे भगवान्के चरणोंमें भक्तिभाव प्राप्त कर लें ।।२२।। प्रिय दूतो ! भगवान्के नामोच्चारणकी महिमा तो देखो, अजामिल-जैसा पापी भी एक बार नामोच्चारण करनेमात्रसे मृत्युपाशसे छुटकारा पा गया ।।२३।। भगवान्के गुण, लीला और नामोंका भलीभाँति मनुष्योंके पापोंका सर्वथा विनाश कर दे, यह कोई उसका बहुत बड़ा फल नहीं है, क्योंकि अत्यन्त पापी अजामिलने मरनेके समय चञ्चल चित्तसे अपने पुत्रका नाम **'नारायण'** उच्चारण किया। इस नामाभासमात्रसे ही उसके सारे पाप तो क्षीण हो ही गये, मुक्तिकी प्राप्ति भी हो

गयी ॥२४॥ बड़े-बड़े विद्वानोंकी बुद्धि कभी भगवान्‌की मायासे मोहित हो जाती है। वे कर्मोंके मीठे-मीठे फलोंका वर्णन करनेवाली अर्थवादरूपिणी वेदवाणीमें ही मोहित हो जाते हैं और यज्ञ-यागादि बड़े-बड़े कर्मोंमें ही संलग्न रहते हैं तथा इस सुगमातिसुगम भगवन्नामकी महिमाको नहीं जानते। यह कितने खेदकी बात है ॥२५॥

प्रिय दूतो ! बुद्धिमान् पुरुष ऐसा विचार कर भगवान् अनन्तमें ही सम्पूर्ण अन्तःकरणसे अपना भक्तिभाव स्थापित करते हैं । वे मेरे दण्डके पात्र नहीं हैं। पहली बात तो यह है कि वे पाप करते ही नहीं, परन्तु यदि कदाचित् संयोगवश कोई पाप बन भी जाय, तो उसे भगवान्‌का गुणगान तत्काल नष्ट कर देता है ॥२६॥ जो समदर्शी साधु भगवान्‌को ही अपना साध्य और साधन दोनों समझकर उनपर निर्भर हैं, बड़े-बड़े देवता और सिद्ध उनके पवित्र चरित्रोंका प्रेमसे गान करते रहते हैं। मेरे दूतो ! भगवान्‌की गदा उनकी सदा रक्षा करती रहती हैं। उनके पास तुमलोग कभी भूलकर भी मत फटकना। उन्हें दण्ड देनेकी सामर्थ्य न हममें है और न साक्षात् कालमें ही ॥२७॥ बड़े-बड़े परमहंस दिव्य रसके लोभसे सम्पूर्ण जगत् और शरीर आदिसे भी अपनी अहंता-ममता हटाकर, अकिञ्चन होकर निरन्तर भगवान् मुकुन्दके पादारविन्दका मकरन्द-रस पान करते रहते हैं। जो दुष्ट उस दिव्य रससे विमुख हैं और नरकके दरवाजे घर-गृहस्थीकी तृष्णाका बोझा बाँधकर उसे ढो रहे हैं, उन्हींको मेरे पास बार-बार लाया करो ॥२८॥ जिनकी जीभ भगवान्‌के गुणों और नामोंका उच्चारण नहीं करती, जिनका चित्त उनके चरणारविन्दोंका चिन्तन नहीं करता और जिनका सिर एक बार भी भगवान् श्रीकृष्णके चरणोंमें नहीं झुकता, उन भगवत्सेवाविमुख पापियोंको ही मेरे पास लाया करो ॥२९॥ आज मेरे दूतोंने भगवान्‌के पार्षदोंका अपराध करके स्वयं भगवान्‌का ही तिरस्कार किया है। यह मेरा ही अपराध है। पुराणपुरुष भगवान् नारायण हमलोगोंका यह अपराध क्षमा करें। हम अज्ञानी होनेपर भी हैं उनके निजजन, और उनकी आज्ञा पानेके लिये अञ्जलि बाँधकर सदा

उत्सुक रहते हैं। अतः परम महिमान्वित भगवान्‌के लिये यही योग्य है कि वे क्षमा कर दें। मैं उन सर्वान्तर्यामी एकरस अनन्त प्रभुको नमस्कार करता हूँ ॥३०॥

[श्रीशुकदेवजी कहते हैं–] परीक्षित् ! इसलिये तुम ऐसा समझ लो कि बड़े-से-बड़े पापोंका सर्वोत्तम, अन्तिम और पाप-वासनाओंको भी निर्मूल कर डालनेवाला प्रायश्चित्त यही है कि केवल भगवान्‌के गुणों, लीलाओं और नामोंका कीर्तन किया जाय। इसीसे संसारका कल्याण हो सकता है ॥३१॥ जो लोग बार-बार भगवान्‌के उदार और कृपापूर्ण चरित्रोंका श्रवण- कीर्तन करते हैं, उनके हृदयमें प्रेममयी भक्तिका उदय हो जाता है। उस भक्तिसे जैसी आत्मशुद्धि होती है, वैसी कृच्छ्र-चान्द्रायण आदि व्रतोंसे नहीं होती ॥३२॥ जो मनुष्य भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रके चरणारविन्द-मकरन्द-रसका लोभी भ्रमर है, वह स्वभावसे ही मायाके आपातरम्य, दुःखद और पहलेसे ही छोड़े हुए विषयोंमें फिर नहीं रमता। किन्तु जो लोग उस दिव्य रससे विमुख हैं कामनाओंने जिनकी विवेकबुद्धिपर पानी फेर दिया है, वे अपने पापोंका मार्जन करनेके लिये पुनः प्रायश्चित्तरूप कर्म ही करते हैं। इससे होता यह है कि उनके कर्मोंकी वासना मिटती नहीं और वे फिर वैसे ही दोष कर बैठते हैं ॥३३॥

परीक्षित् ! जब यमदूतोंने अपने स्वामी धर्मराजके मुखसे इस प्रकार भगवान्‌की महिमा सुनी और उसका स्मरण किया, तब उनके आश्चर्यकी सीमा न रही। तभीसे वे धर्मराजकी बातपर विश्वास करके अपने नाशकी आशङ्कासे भगवान्‌के आश्रित भक्तोंके पास नहीं जाते। और तो क्या, वे उनकी ओर आँख उठाकर देखनेमें भी डरते हैं ॥३४॥ प्रिय परीक्षित् ! यह इतिहास परम गोपनीय–अत्यन्त रहस्यमय है। मलयपर्वतपर विराजमान भगवान् अगस्त्यजीने श्रीहरिकी पूजा करते समय मुझे यह सुनाया था ॥३५॥

नारायण नारायण नारायण नारायण